माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

VOL. 3 JANUARY, 1999 NO. 1

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❊ Branch Ashrams ❊

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram.
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir,
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–३ जनवरी, १९९९ सं.–१

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में – ६० रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४०० रुपये
एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित। सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

●

माता आनन्दमयी चिकित्सालय

शिवाला, वाराणसी - २२१००१

एक विशेष आवेदन

पवित्र वाराणसी धाम में पतितोद्धारिणी गंगा के सन्निकट श्री श्री माँ की कृपा से प्रतिष्ठित माता आनन्दमयी चिकित्सालय का मुख्य उद्देश्य है धर्मनिर्विशेष गरीब दुःखियों की चिकित्सा की सुव्यवस्था करना । श्री श्री माँ की अमर वाणी है– **"काशी विश्वनाथ मुक्तिक्षेत्र-जनजनार्दन सेवा ।"**

सेवा कार्य को और भी सुष्ठु भाव से संचालित करने के उद्देश्य से निम्नलिखित परियोजना की गयी है–

[१] असहाय, असमर्थ रोगियों की सर्वप्रकार चिकित्सा हेतु एक स्थायी कोष की स्थापना । (Medical Relief Fund for the poor.)

[२] रोगियों के आवास हेतु सर्वविध आधुनिक सुविधा सम्पन्न १२ अतिरिक्त कक्षों का निर्माण । आनुमानिक व्यय १६ लाख रुपये ।

कोई भी सहृदय भक्त द्वारा अपने प्रियजन की स्मृति में एक लाख की अर्थराशि देने पर स्थायी रूप से एक कक्ष उनके नाम पर उत्सर्ग किया जायगा ।

चिकित्सा सेवा के लिए दिये हुए दान पर आयकर नियमानुसार छूट की व्यवस्था है यह विशेष उल्लेखनीय है ।

उपर्युक्त किसी भी उद्देश्य के लिये प्रेरित दान सादर स्वीकृत होगा ।

बैंक ड्राफ्ट या चेक "Shree Shree Anandamayee Sangha—Mata Anandamayee Hospital A/C" के नाम पर होना आवश्यक है । संलग्न पत्र में स्पष्ट रूप से उद्देश्य का उल्लेख होना चाहिये । अनुरोध है कि पत्र रजिस्टर्ड डाक द्वारा निम्नलिखित पते पर भेजें –

Secretary
Mata Anandamayee Hospital
Shivala,Varanasi-221001

मातृ-वाणी

मनुष्य ईश्वर का प्रतिरूप है । मनुष्य योनि सब योनियों में श्रेष्ठ है । मनुष्य के मनोराज्य में ऐसे सब गुप्त सम्प्रदाय निहित है जो कि संसार में कहीं नहीं है ।

*　　　*　　　*

जिस तरफ देखा जाता है उधर ही एक अखण्ड सत्ता की नित्यता सर्वत्र प्रकाशित हो रही है । किन्तु उस सत्ता का ज्ञान सहज ही में मिलता है । इसका क्या कारण है? वे सबके भीतर ओत-प्रोत हैं । जैसे राजशक्ति के द्वारा राजा का परिचय मालूम होता है, अथवा ताप के द्वारा अग्नि का परिचय होता है, उसी प्रकार यह व्यक्त जगत् उस अव्यक्त का परिचय देता है ।

*　　　*　　　*

प्रभु एवं दास दो होने पर भी मूलतः एक ही हैं । प्रभु जब करुणामय होकर नीचे अवतरण करते हैं तब दास होते हैं । दास जिस तरह प्रभु के बिना नहीं चल सकता, प्रभु को भी उसी तरह दास का भरोसा रखना पड़ता है, परस्पर का इस प्रकार नित्य सम्बन्ध है कि एक के बिना दूसरा नहीं रहता । दास की शरणागति के लिये प्रभु ही एक मात्र आश्रय हैं ।

*　　　*　　　*

पुकार तो केवल एक ही है । उसी पुकार के लिये नाना जातियों में नाना व्यवस्थायें हैं । जिस दिन किसी को वैसा पुकारना आ जाता है, उस दिन उसके लिये पुकारने या न पुकारने का छन्द मिल जाता है । वास्तव में तुम पुकारते नहीं हो, वही सर्वदा तुम्हें पुकार रहे हैं ।

*　　　*　　　*

किसी के दोष को न देखो, उससे नेत्र और मन मलिन होते हैं एवं संसार में पाप का बोझ बढ़ता है । इसलिये जो कुछ देखो, उसके भीतर केवल भलाई की ओर ध्यान रखो । भला ही सत्य और जीवन है, बुरा तो केवल छाया दर्शन मात्र है ।

*　　　*　　　*

शान्ति सब ही ढूंढ़ते हैं, किन्तु यह बात बहुत कम लोग सोचते हैं कि जब तक "वह" हृदय में न जागे तब तक पूर्ण शान्ति किसी तरह नहीं मिल सकती । धन से शान्ति नहीं मिलती, पुत्र परिजनों से शान्ति नहीं होती, प्रतिष्ठा प्राप्त होने से शान्ति नहीं मिलती । कारण यह है कि सांसारिक भोग मात्र ही दिन रात की भाँति परिवर्तनशील हैं, आते-आते ही चले जाते हैं, इसलिये

ऐसे धन का धनी होना आवश्यक है, जिसका फिर क्षय न हो और जिसके पाने से सब आकांक्षाएँ एकदम मिट जायें। वह धन एकमात्र भगवान् हैं, जो सबके हृदय में रहते हुए भी अपरिचित हैं। सत्कर्मादि के द्वारा चित्त का अन्धकार दूर होने पर परमसुन्दर का मोहन रूप अपने आप ही विकसित हो जाता है और चित्त में पूर्ण शान्ति का राज्य आरम्भ होता है।

* * *

प्रश्न– मनुष्य में अच्छे संस्कार कैसे आते हैं?"

माँ–"तुम जैसे पुस्तकें पढ़ते-पढ़ते वकील बन गये हो, इंजीनियर जैसे इंजीनियरिंग कालेज में पढ़कर इंजीनियर बनता है। प्रोफेसर जिस प्रकार कालेज में पढ़ते हुए एम.ए. पास कर प्रोफेसर बनता है, ठीक उसी प्रकार इस लाईन की पुस्तकें पढ़कर यानी साधना करते हुए अच्छे संस्कार अर्जित किये जा सकते हैं यहाँ तक कि भगवान् से साक्षात्कार भी किया जा सकता है।

* * *

"यह सब कुछ एक है, मेरा स्वरूप क्या है, जानना ही लक्ष्य है।" इतना कहकर वे हँसती हुई बोलीं–"अखण्ड मण्डलाकार क्या है? साधकों को देखो, इसी एक लक्ष्य के लिये, इसी मन के द्वारा ही एकत्व में पहुँचने के यात्री बनते हैं। उसी समय एक गुरु की कृपा से, खण्डत्व और अखण्डत्व अनन्तगति, अनन्तमार्ग, अनन्तभाव, सब कुछ निर्द्वन्द्व रूप में उसके निकट स्पष्ट हो जाता है। सृष्टि-दृष्टि के बीच जब तक तब तक ये बातें आती ही रहेंगी, यह आना भी मंगलकारी है अगर ये सब विचार उत्पन्न न हों तो निर्द्वन्द्व रूप से वाक् निर्वाकातीत कैसे होगा?

* * *

चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है। सिर्फ एक ही चिन्ता करते रहना। जाने की सारी तैयारी होती रहे, आगे देखा जायगा।

* * *

सांसारिक सुख के लिये २-४ भविष्य की बातें जानना ही क्या तुम्हारे जीवन का उद्देश्य है? उद्देश्य होना चाहिये, कि कैसे आत्म-उन्नति हो, कैसे चिर शान्ति मिले। सभी कर्मों के बीच उद्देश्य को सर्वोपरि मानना चाहिये। ध्यान जितना बड़ा रहेगा, ज्ञान पाने की उतनी ही आशा रहेगी, सर्व रूपमें तुम्हीं हो।

* * *

शरणागत भक्त होना हो तो भाषा और भाव में "अहं" का मूलोच्छेदन करके बुद्धि-विचार को एकदम तोड़ देना आवश्यक है। शिशु टट्टी, पेशाब, करता है, उसे शरीर पर मलता है, उसी पर लोटता है, फिर निश्चिन्त भाव से माँ की गोद में आने के लिये हाथ बढ़ाता है; वह अज्ञानी है

जानकर माँ उसे धो-पोंछकर सर्वदा हँसी-मुख से गोद में उठा लेती हैं, यही निःस्वार्थ स्नेह और प्रेम का विधान है ।

* * *

कर्म-जगत् का खेल एक प्रकार का है और भाव-जगत् की लीला एक अन्य प्रकार की है । कर्म-जगत् प्रकाश करने के लिये व्यस्त होता है और भाव जगत् का खेल नीरवता में और अप्रकाश में होता है । यदि ऐसा न हो तो भाव की पुष्टि नहीं होती एवं इसी भाव की पुष्टि से ही कर्म-जगत् चलता है ।

* * *

भगवान् और जीव का नित्यविरह अनन्त काल से चला आ रहा है । भगवान् सदा जीव को गोद में लेने के लिये तैयार हैं और जीव अपने कर्म-चक्र में पड़कर उन्हीं में रहकर भी अन्धे की तरह उसको न ही देखता और न ही खोजता है । साधन भजन में अनुरागी होने पर मालूम होता है कि यही विरह या विच्छेद ही मिलन से भी सुखकर है एवं जितनी श्रद्धा भक्ति बढ़ती रहती है उतना ही इस आशा से उत्फुल्ल होकर, व्याकुलता प्रार्थना इत्यादि पूर्णता को पहुँचाती है ।

●

आवश्यक-सूचना

पत्रिका के सभी ग्राहकों से अनुरोध है कि सन् १९९९ का वार्षिक शुल्क ६०/- रु. शीघ्र भेजने का कष्ट करें तथा पत्रिका के सम्यक संचालन में सहयोग प्रदान करें ।

–कार्यकारी सम्पादक
माँ आनन्दमई–अमृतवार्ता

गांव तक गाड़ी नहीं जायगी, जितनी दूर तक गाड़ी जा सकती है उतनी दूर तक मैं ले जा रहा हूँ ।" परन्तु देखा गया कि गाँव तक गाड़ी लाने में कोई असुविधा नहीं हुई । गाँव पहुँचने पर माताजी गाड़ी से उतर पड़ीं । मुझे फूल की माला एवं फल साथ लेने को कहा । माताजी चलते-चलते एक पोखरे के पास जाकर खड़ी हो गयीं । वहाँ देखा कि एक नीम तथा एक पीपल के पेड़ एक साथ दोनों है । पेड़ अधिक बड़े तो नहीं हैं पत्तों का सौन्दर्य भी कुछ विशेष नहीं है । दो पेड़ पोखरे की ओर झुके हुये हैं । माताजी उन दो पेड़ों को आदर करने लगीं तथा उनको माला पहनाने को कहा । इन पेड़ों की जो पतली-पतली टहनियाँ थीं उनमें मैंने माला पहना दी । माताजी ने खबर ली कि इन पेड़ों का मालिक कौन है । इतनी देर गाँव के लोग पास आने का साहस नहीं कर रहे थे । मोटर द्वारा उनके गाँव में किसी का आना उनके लिये नयी बात थी । इसलिये वे इतनी देर दूर से हमलोगों पर दृष्टि रख रहे थे । धीरे-धीरे वे हमलोगों के पास आने लगे उनसे पूछने पर पता लगा कि इस पेड़ एवं घर के मालिक नवाबगंज के बाजार गये हैं । मालिक का नाम है द्वारकानाथ जिस गाँव में हमलोग गये थे वह ऊना एवं नवाबगंज के बीचोंबीच है उसका नाम भवानी पुर है । एक महिला घूँघट काढ़े खड़ी थी । लोगों ने उनका परिचय दिया वे मालिक की पत्नी हैं । माताजी ने उनको एक टोकरी फल देते हुए कहा", तुम मेरी माँ हो, मैं तुम्हारी लड़की।

महिला माताजी की बात समझ नहीं पा रही थीं । फल की टोकरी पकड़ कर खड़ी रहीं । माताजी ने फलों को बाँट देने को कहा । वैसे ही किया गया । फलों में सेब, अंगूर इत्यादि थे । इन फलों के प्रति उनका रुझाव भी कम था । किसी किसी ने सेब देखकर कहा कि एक सेब का दाम चार पांच रुपया होता था । जो भी हो, फल उनमें बाँट दिया गया । हमलोगों ने उनको दोनों पेड़ो को बहुत संभाल कर रखने को कहा । वे लोग पेड़ो का ख्याल रखें इसीलिये भूपेन ने उनको ५/- दिया । इसके बाद हमलोग वापस आ गये तथा लखनऊ की ओर चल पड़े । मैंने माताजी से कहा, "इतने दिन आपको देवता, जल इत्यादि बुलाते थे । अब तो देख रही हूँ कि पेड़ों ने भी आपको बुलाना शुरू कर दिया ।" माताजी ने कहा, "इस प्रकार पहले और हुआ नहीं, लग रहा था मानो कोई पीछे से कपड़ा पकड़ कर जोर से खींच रहा है ।" मोटर मार्ग से पेड़ नहीं दीखते । पेड़ों का नाम रखा गया "हरिहर" ।

मैं – मा, मैंने सुना है कि वृन्दावन में भी ऐसी घटना एक बार हुई थी । आपलोग राधाकुण्ड में घूमने गये थे लौट कर आते समय आप सबको छोड़ कर पतली गली के भीतर से एक निर्जन स्थान पर जाकर खड़ी हो गयीं । वहाँ कुछ तुलसी के पेड़ थे । पेड़ों को देखकर आपने आदर करके कहा था ।" तुमलोग यहाँ हो?"

मेरी बात सुनकर मिस् ब्लैंका (आत्मानन्द) ने उसका समर्थन किया । शायद वह भी उस दिन माँ के साथ थीं । खुकुनी दीदी ने कहा, "इस घटना की खबर तो मुझे नहीं है ।"

माताजी–हाँ तुलसी पेड़ों का विशेषत्व था । इस प्रकार की काली तुलसी के पेड़ अनायास नहीं दीखते । उनकी कलगियाँ एवं पत्ते तरोताजा थीं ।

●

श्री श्री माँ के साथ

—स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

श्री श्री माँ की अहैतुकी कृपा

सन् 1942 में अपने कार्य से समय से पूर्व ही अवकाश ग्रहण कर परम स्नेहमयी श्री श्री माँ के पास देहरादून गया था। उस समय माँ रायपुर के शिव मन्दिर में रह रही थीं। श्री श्री माँ की पवित्र उपस्थिति में श्री शारदीया दुर्गापूजा वहीं अनुष्ठित होगी, ऐसा निश्चित किया गया। बात बात में एक दिन माँ ने मुझसे दुर्गापूजा करने को कहा। मैंने उनके श्री चरणों में निवेदन किया कि मां मैंने अभी तक किसी से तान्त्रिक दीक्षा नहीं ग्रहण की है। हम लोगों में प्रचलित नियम है कि अदीक्षित व्यक्ति को शक्ति पूजा करने का अधिकार नहीं है। इसके सिवाय मैं यह सब जानता भी नहीं हूँ, इसीलिए मैं दूर्गापूजा करने का साहस नहीं करता। मेरी इस बात के बाद ठीक हुआ कि मां के पुराने भक्त श्रीयुत मन्मथनाथ चट्टोपाध्याय महाशय इस बार दुर्गापूजा करेंगे। तन्त्र-धारक का कार्य श्री शोभन बागची करेंगे। ये भी माँ के पुराने भक्त हैं एवं सम्प्रति श्री कृष्णानन्द ब्रह्मचारी के नाम से प्रसिद्ध हैं।

आशा करता हूँ कि यहाँ पर इस प्रसंग का उल्लेख करना अनुचित न होगा कि मैं तान्त्रिक मन्त्र में दीक्षित न होने पर भी तीन बार नियमित रूप से सन्ध्या व गायत्री जप करता था एवं हर समय चलते फिरते वैदिक ब्रह्म गायत्री स्मरण रखने की कोशिश करता था। ब्राह्मण बालकों के उपनयन के समय ही सावित्री मन्त्र की दीक्षा हो जाती है एक दृष्टि से विचार करने पर उपनयन द्वारा संस्कृत या उपवीत व्यक्ति ही शक्ति मन्त्र में दीक्षित होता है। वैदिक ब्रह्म गायत्री जप के समय अहेतुकी कृपा के निदर्शन स्वरूप कभी-कभी एक देवी मूर्ति क्षण भर के लिए दर्शन देती थी। वर्तमान समय में इस धारा में साधन न करने पर भी वे संन्तान के ऊपर करुणा करने में कृपणता नहीं कर रही हैं। स्वप्नादि में या जप के समय वे नाना भाव से दर्शन देती आ रही हैं। मुझे लगता है पहले किसी जन्म में इष्ट रूप में उनकी उपासना की थी, इसीलिए जननी दया परवश हो इस अधम सन्तान को क्षण भर के लिए ही क्यों न सही, दर्शन देकर स्मरण करा देती थीं कि वे अपने इस अबोध बालक को भूली नहीं हैं। श्री गुरु की कृपा से एक बार श्री इष्ट देवताके साथ युक्त होने पर वह सम्बन्ध कभी भी विछिन्न नहीं होता। मेरा व्यक्तिगत दृढ़ विश्वास है कि गायत्री मन्त्रमें ही सब कुछ निहित है। जिनका इस वैदिक ब्रह्म गायत्री में अधिकार है, उनको तो इस गायत्री उपासना द्वारा ही, मनुष्य का जो परम पुरुषार्थ है वह निःश्रेयस या मुक्ति भी प्राप्त हो सकती है। जो उपासना आत्मज्ञान या ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कराती है वह क्या साधारण उपासना है।

श्रीमद्भागवत, तन्त्र, पुराण व रामायण सब जगह ही गुरु द्वारा दीक्षित होने का निर्देश है। भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण अपने परम भक्त उद्धव से कह रहे हैं कि "वैदिक, तान्त्रिकी दीक्षा

मदीयव्रतधारणम् " (11-1-37) हे प्रिय-उद्धव वैदिक एवं तान्त्रिक पद्धति के अनुसार दीक्षा ग्रहण करना और मेरे व्रतादि का पालन करना । तन्त्रसार में स्पष्ट उल्लेख है - कलिकाल में आगमोक्त विधान से देवाराधना करनी चाहिए अन्य विधान से आराधना करने पर देवता प्रसन्न नहीं होते । तारा प्रदीप में कहा गया है–

"आगमोक्त विधानेन कलौ देवान् यजेत् सुधीः ।
न हि देवाः प्रसीदन्ति कलौ चान्य विधानतः ।। 39 ।।

सत्ययुग में श्रुत्युक्त विधान, त्रेतायुग में स्मृत्युक्त विधान, द्वापर में पुराणोक्त विधान एवं कलियुग में आगमोक्त विधान ही उचित है । तन्त्रसार में ऐसा भी लिखा है –अदीक्षित व्यक्ति मृत्यु के उपरान्त नर्क में जाता है, मृत्यु होने पर उसका पिशाचत्व दूर नहीं होता अतएव यत्न सहित तान्त्रिक गुरु के समीप दीक्षित होना चाहिए । हमारे सभी शास्त्रों में गुरु महिमा जिस प्रकार वर्णित है उस प्रकार दूसरे किसी धर्म में है या नहीं, जानता नहीं ।

"कृते श्रुत्युयुक्त मार्गः स्यात् त्रेतायां स्मृतिसम्भवः
द्वापरे तु पुराणोक्तः कलावागम सम्मतः ।। ४0 ।।
अदीक्षितोऽपि मरणे रौरवं नरकं व्रजेत् ।
अदीक्षितस्य मरणे पिशाचत्वं न मुञ्चति ।।
तस्माद्दीक्षां प्रयत्नेन सदा कुर्वीत तान्त्रिकात् ।। ८७ ।।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने प्रसिद्ध श्री रामचरितमानस में कहा है कि सद्गुरु प्राप्त होने पर सन्देह एवं भ्रम अर्थात् अज्ञान नष्ट हो जाता है जैसे वर्षा ऋतु में पृथ्वी कीटादि द्वारा पूर्ण हो जाती है एवं शरद ऋतु के आगमन से वही कीट-समूह विनष्ट होते रहते हैं ।

भूमि जीव संकुल रहे, गये सरद रितु पाइ ।
सद्गुरु मिले मिटै जिमि संसय भ्रम समुदाइ ।।

हम अपने आलोच्य विषय से थोड़े विषयान्तर में चले गये हैं । आइये, हम फिर देहरादून के रायपुर शिवालय में लौट चलें । जिस समय का विवरण लिपिबद्ध कर रहा हूँ, उस समय श्री श्री माँ के निर्देश से देहरादून के रायपुर में आश्रम के ऊपर भाग में पहाड़ पर ब्रह्म लोक नाम से साधु-संन्यासी व ब्रह्मचारियों के रहने के लिए फूस के पाँच घर बनाये गये थे । उनमें से एक कमरे में दिन रात चौबींस घंटे अखण्ड भाव से ध्यान और जप चलता था इस शुभ कार्यक्रम में भाग लेने का सामान्य सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हुआ थां । रात के बारह बजे से रात के तीन बजे तक के तीन घंटे का समय मैंने स्वेच्छा से जप के लिए स्वीकार किया था । मेरे बाद के व्यक्ति तीन बजे न आकर प्रायः चार बजे ही आते थे । इससे मुझे थोड़ा भी कष्ट नहीं होता था । ध्यान जप करने का यह सुअवसर मुझे माँ ने कृपा करके दिया था । कहना न होगा कि मेरे जप का दूसरा कोई मन्त्र न रहने के कारण मैं एक विशिष्ट छन्द या ताल में ब्राह्मणों के वैदिक ब्रह्म गायत्री का पञ्च जप ही उस समय करता था । पूर्वोक्त वही महादेवी अहैतुकी कृपा करके इस अभागे को उस समय भी बीच बीच में दर्शन देकर कृतार्थ करती थीं ।

यह संसार जो वास्तव में अनित्य और क्षणभंगुर है, जिनको आत्मीय समझकर न जाने कितने सुख स्वप्न मन की कल्पना में देखे थे, वे भी आँखों के सामने चिता की अग्नि में भस्मीभूत हो जायेंगे। ऐसे वैराग्य उत्पादक दृश्य भी उनकी करुणा से देखने को मिलते थे। जो जीवन मरण के एक मात्र आश्रय हैं, अति प्रेय और श्रेय हैं उनको ही परम स्वजन मानकर अपने हृदय में धारण करना होगा, यह भी उन्होंने कृपा करके बताया था। जीवन के एक मात्र आधार स्वरूप एवं परम कल्याणमयी वह महादेवी केवल दर्शन देकर ही विरत नहीं हुईं, अपितु उनको हृदय में धारण करने से जो सुख शान्ति एवं आनन्द होता है उसे भी जननी ने मुझे दया करके अनुभव करने का सुयोग दिया था। क्षण भर एकान्त और चित्त से ब्रह्म लोक के ध्यानमग्न शुभ मुहूर्त का स्मरण करने पर अभी भी पूरा शरीर आनन्द से पुलकित हो उठता है। उस समय स्थिरासन में रखकर कोई विशेष क्रिया भी उन्होंने दो दिन इस शरीर से करायी थी।

घोर रात्रि में जगत जब गहरी निद्रा में निमग्न था उस समय आसन पर स्थिर होकर बैठकर मैं एक विशेष छन्दोबद्ध भाव से गायत्री मन्त्र जप कर रहा था। जप के प्रायः एक घंटे बाद, न जाने किस अचिन्तनीय शक्ति के प्रभाव से मेरा शरीर आसन पर बैठकर धीरे धीरे दक्षिणावर्त में आवर्तित या घूर्णित होने लगा। उसका वेग क्रमशः वृद्धि प्राप्त होकर कुम्हार के चक्र के समान घूमने लगा। मैं सोचने लगा यह क्या हो रहा है। इसमें मेरा बिन्दु मात्र भी प्रयत्न या चेष्टा नहीं थी परन्तु चेष्टा करके भी उसको मैं रोक न सका। कुछ समय तक ऐसा होकर वह धीरे-धीरे शान्त हो गया। जब तक यह क्रिया मेरे शरीर द्वारा हो रही थी तब तक साथ ही साथ एक शब्द मेरे भीतर से निकल रहा था। मैं शंकित हो रहा था कि इस शब्द से यदि पास के कमरे का कोई सोया हुआ व्यक्ति जाग जाय तो वह क्या सोचेगा। इस शंका से मैं उसे बन्द करने की कोशिश कर रहा था। उस समय मेरे मन में यदि यह होता कि यह शब्द मेरे ही सुनने के लिए है दूसरे के लिए नहीं तब शायद मैं इस क्रिया को बन्द करने की कोशिश न करता। शायद इसका फल अच्छा ही होता। दूसरे दिन भी ऐसा हुआ था पर उसका वेग पूर्व दिन की अपेक्षा कम एवं समय का परिभाग भी अल्प था। तीसरे दिन अथवा बाद में और किसी दिन वह नहीं हुआ। कृतकर्मा व्यक्ति के पास यह क्रिया सीखनी चाहिए अथवा स्वभाव से यदि किसी में यह श्री श्री मातृ कृपा से स्फुरित हो तभी करना चाहिए नहीं तो इसका फल विपरीत होता है। हो सकता है इस घटना के प्रायः दस वर्ष बाद पूना के प्रसिद्ध योगी श्री गुलाबनी महोदय के साथ मेरी भेंट मेरे महाराष्ट्रीय मित्र श्री राजाराम गोविन्द आकूत के घर पर हुई। वहाँ सुना कि कुंडलिनी शक्ति के जागृत होने के लिए वे यह क्रिया अपने शिष्यों को बताते हैं। बात बात में श्री गुलाबनी जी को मेरे इस दिन की अभिज्ञता की बात बताने पर उन्होंने कहा कि आपकी कुंडलिनी शक्ति जाग्रत होने की क्रिया हो रही थी। आपने उसे रोक कर अपनी उन्नति के पथ पर बाधा दी। जब कुछ नहीं होना होता है तो ऐसी ही बुद्धि और योगायोग हो जाता है। आध्यात्मिक उन्नति का सुयोग जीवन में एक बार ही आता है, बार बार नहीं। करुणामयी माँ सन्तानों को सर्वप्रकार दुःख से मुक्त करने के लिये कितनी ही व्यवस्था कर रही हैं किन्तु हमारा प्रारब्ध इतना प्रबल है कि वह सफल होने नहीं देता।

एक दिन अवसर पाकर स्नेहमयी श्री श्री माँ के चरणों में उक्त विलक्षण घटना को निवेदन करने पर उन्होंने आगामी श्री काली पूजा की महानिशा में किसी नाम ग्रहण की बात कही देखते-देखते वह शुभ दिन आकर उपस्थित हुआ। माँ के रायपुर आश्रम में उस बार श्री काली पूजा का भी आयोजन हुआ था। जिस शिल्पी ने श्री दुर्गा प्रतिमा बनायी थी, उन्होंने ही उस समय ही काली मूर्ति बनाकर रखी थी। श्री श्री माँ के नीचे के शयनकक्ष में पूजा की बात हुई। दुर्गापूजा के समय से अब तक इस कमरे में ही श्री माँ काली की मूर्ति एक सफेद चार से ढकी रखी थी।

श्री काली पूजा के पहले एक दिन श्री श्री माँ ने दया करके मुझे अपने साथ एकान्त में बैठकर बात करने का अवसर प्रदान किया। बात-बात में उन्होंने मुझसे पूछा कि "कौन सा नाम" मुझे अधिक अच्छा लगता है और किस देवता की मूर्ति मुझे अधिक पसन्द है। यह सब आलोचना के समय एक अभिनव ढंग से "नाम- ग्रहण" का संकेत माँ ने दया करके कह दिया।

× × ×

वह अभिनव संकेत क्या था इसका यहाँ विस्तार से वर्णन नहीं किया गया, क्योंकि यह एक नयी तरह की प्रक्रिया है। यह उपाय इतना सुन्दर और मर्मस्पर्शी है कि इसे जान सकने पर कोई-कोई इसका अनुकरण कर सकते हैं, इस आशंका से इसका पूर्ण विवरण न दे सका। परमाराध्य श्री श्री माँ भी इसके प्रकटीकरण का अनुमोदन नहीं करतीं, यह मैं जानता हूं। किसी को यदि इसे जानने की तीव्र आकांक्षा हो तो वे करुणामयी श्री श्री माँ से प्रकृत जिज्ञासु की आर्ति लेकर पूछ सकते हैं। वे यदि दया कर कभी इस पर प्रकाश डालें तभी यह अभिनव संकेत प्रकाशित होगा, अन्यथा यह गुप्त ही रहेगा। इस अपूर्व व नये प्रकार के संकेत को मैंने प्रकाश के लिए लिखा था पर बाद में आगा पीछा विचार कर इसे हटा दिया।

श्री काली माता की पूजा आरम्भ होने पर महानिशा में श्री श्री माँ को मेरे वासस्थान में लिवा ले जाने के लिए माँ ने मुझसे कह कर रखा। उनके निर्देशानुसार प्रस्तुत होकर यथा समय माँ से प्रार्थना करते ही करुणामयी माँ कृपा करके पूजा के स्थान पर से उठकर मेरे कमरे में आयीं एवं दूसरे किसी को भी इस कमरे में प्रवेश करने का निषेध किया। परम करुणामयी श्री श्री माँ ने आसन पर बैठते ही कहा "अपनी वह चीज़ ले आओ। जैसे कहा गया था वैसे हुआ या नहीं देखूँ। माँ के आदेश से उसे माँ के सामने लाते ही माँ ने देखकर कहा हाँ ठीक हुआ। बाद का कर्म समाप्त होने पर ही माँ की सम्पूर्ण वस्तुओं को लाते ही माँ ने फिर से कहा इस नाम को ग्रहण करो। अनुष्ठानिक क्रिया के समापन के बाद श्री श्री माँ के श्री पादपद्म में प्रणाम करने पर उन्होंने कृपा कर अपना वरद हस्त मेरे मस्तक पर रखकर आशीर्वाद दिया। इस प्रकार महापुण्य क्षण में श्री काली पूजा की महानिशा में परम कृपामयी श्री श्री माँ के द्वारा दी हुई "नाम दान" क्रिया सम्पन्न हुई। उस दिन से प्रत्येक रात्रि बारह बजे से प्रातः तीन बजे तक "ब्रह्म लोक में बैठकर इस अभिनव रूप से प्राप्त नाम का ही साधन करने के लिए मुझे निर्देश दिया। मेरे इस सामान्य जीवन में ऐसी घटना को माँ की अहैतुकी कृपा छोड़ और क्या कहा जाय। माँ के दिये हुए नाम साधन का मन के ऊपर क्या प्रभाव पड़ा, उसका संक्षिप्त विवरण यहाँ देने की कोशिश कर रहा हूँ।

कुछ दिन माँ के आदेश से रात के बारह बजे से प्रातः तीन या चार बजे तक नाम करने के फलस्वरूप मेरे मन में एक भाव का उदय हुआ। मैं सोचता था इस संसार में मेरे जैसा दीन हीन व्यक्ति शायद कोई नहीं है। मेरी इस दीनता और अयोग्यता के लिए सभी मुझको उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। इसीलिए प्रायः हर समय मैं कमरे में अकेला रहता था। किसी के साथ बातचीत करना तो दूर रहा, किसी के साथ भेंट तक नहीं करता था। रो रो कर आंखों के पानी से तकिया भिंगो देता था। इस प्रकार मर्मान्तक वेदना और ग्लानि मन में लेकर कुछ दिन बीते। ऐसे भरे हुए मन को लेकर मां से भेंट तक नहीं करता था। कमरे से नहीं निकलता था यह देखकर ही शायद एक दिन शाम को स्नेहमयी श्री श्री माँ दया करके अकेले ही मेरे रहने के कमरे में आकर उपस्थित हुईं। मेरे कमरे में जब उन्होंने प्रवेश किया उस समय मैं बिस्तर पर लेटा हुआ आंखों के पानी से तकिये को गीला कर रहा था। मां मेरे बिस्तर के पास बैठकर बड़े प्रेम से पूछने लगीं' "तुमको क्यों नहीं देख पाती? कमरे से बाहर भी नहीं आते किसी से बातचीत भी नहीं करते तुमको क्या हुआ?" करुणामयी श्री श्री माँ की स्नेहमयी आवाज से मर्मवेदना से मैं एकदम विह्वल हो गया। मेरी वाणी अवरुद्ध हो गयी। थोड़ी देर बाद धैर्य धारण कर माँ के प्रश्न के उत्तर में मैंने अपने मन की अवस्था माँ के चरणों में निवेदन की उन्होंने मेरी हृदय-वेदना की बात सुनकर थोड़े से शब्दों में कहा, "साधना की अवस्था में किसी किसी का मनोभाव ऐसा होता है।" इस बात को कहकर ही सन्तानवत्सला माँ ने अपना वरद हस्त दो तीन बार मेरे मस्तक और हृदय पर फेर दिया। अहो आश्चर्य कैसी अद्भुत शक्ति माँ की। माँ की बातों ने मन्त्र शक्ति के समान कार्य किया। मन की ऐसी विषादग्रस्त अवस्था यदि और कुछ दिन चलती तब तो मैं पागल हो जाता या किसी मानसिक रोग से आक्रान्त हो जाता। इस तरह उस दिन उन्होंने मुझे आसन्न विपत्ति से बचाया। यह भी मेरे जीवन में स्नेहमयी माँ की एक अहैतुकी कृपा का ही परिचय है। न बुलाने पर भी प्रार्थना न करने पर भी वे आतीं और हमें विपत्ति से मुक्त करती हैं, इसका निदर्शन उपर्युक्त घटना है।

मंगलमयी श्री श्री माँ का स्पर्श पाने के बाद मेरी मानसिक ग्लानि एकदम दूर हो गयी एवं साथ ही साथ मैं अनुभव करने लगा कि इस जगत में कौन किससे घृणा करता है ? कौन किसकी उपेक्षा करता है? सब ही तो उस एक भगवान के सचल और अचल विग्रह हैं। सब प्राणियों में यहाँ तक कि सभी पेड़ पौधे लतागुल्म आदि में एक मात्र उसी परमात्मा का निवास है। अतः इस संसार में कोई भी घृण्य या उपेक्षणीय नहीं है सभी श्रद्धा के पात्र एवं नमस्कार योग्य हैं।

उस समय एक दिन शौचादि के बाद नहर के किनारे बैठकर दाँत मलकर पेड़ की डाल तोड़ते हुए केवल मन में यही हो रहा था कि मेरे हाथ को किसी के द्वारा मरोड़ देने पर जैसे मुझको चोट पहुँचती है वैसे ही पेड़ की डालको तोड़ देने से उसको भी तो वैसे ही चोट लगती है। इसके बाद से पेड़ की डाल तोड़ कर दाँत मलना सदा के लिए बन्द हो गया। आचार्य जगदीश चन्द्र वसु कहा करते थे–इस विश्व की प्रत्येक वस्तु में एक अखण्ड शाश्वत सत्य छुपा हुआ है। यह बिलकुल सत्य है यह मानो मैं क्रमशः अनुभव करने लगा। यह करुणामयी माँ की स्पर्शशक्ति का अमोघ फल है इसे मैं मुक्त कण्ठ से स्वीकार करता हूँ। इस अयोग्य सन्तान पर उनकी अहैतुकी कृपा के लिए उनके श्री पादपद्म में मैं पुनः पुनः कृतज्ञता ज्ञापन कर रहा हूँ।

●

गीता का प्रयोजनः स्वधर्म विरोधी मोह का निरसन

—पू. विनोबा

अर्जुन अहिंसा की ही नहीं, संन्यास की भाषा बोलने लगा । वह कहता है –"इस रक्त-लांछित क्षात्र-धर्म से संन्यास ही अच्छा है ।" परन्तु क्या वह अर्जुन का स्वधर्म था? उसकी वह वृत्ति थी क्या? अर्जुन संन्यासी का वेष तो बड़े मजे में बना सकता था, पर वैसी वृत्ति कैसे ला सकता था? संन्यास के नाम पर यदि वह जंगल में जाकर रहता, तो वहाँ हिरन मारना शुरू कर देता । अतः भगवान ने साफ ही कहा–"अर्जुन, तू जो यह कह रहा है कि मैं लडूँगा नहीं, वह तेरा भ्रम है । आज तक जो तेरा स्वभाव बना हुआ है, वह तुझे लड़ाये बिना रहेगा नहीं ।"

अर्जुन को स्वधर्म विगुण मालूम होने लगा । परन्तु स्वधर्म कितना ही विगुण हो, तो भी उसी में रहकर मनुष्य को अपना विकास कर लेना चाहिये, क्योंकि उसमें रहने से ही विकास हो सकता है । इसमें अभिमान का कोई प्रश्न नहीं है । यह तो विकास का सूत्र है । स्वधर्म ऐसी वस्तु नहीं है कि जिसे बड़ा समझकर ग्रहण करें और छोटा समझकर छोड़ दें । वस्तुतः वह न बड़ा होता है, न छोटा । वह हमारे नाप का होता है । "श्रेयान् स्व धर्मो विगुणः– इस गीता-वचन में "धर्म" शब्द का अर्थ हिंदू-धर्म, इस्लाम-धर्म, ईसाई-धर्म आदि जैसा नहीं है । प्रत्येक व्यक्ति का अपना भिन्न-भिन्न धर्म है । मेरे सामने यहाँ जो दो सौ व्यक्ति मौजूद है, उनके दो सौ धर्म हैं । मेरा भी धर्म जो दस वर्ष पहले था, वह आज नहीं है । आज का धर्म दस वर्ष बाद टिकेगा नहीं । चिंतन और अनुभव से जैसे-जैसे वृत्तियाँ बदलती जाती हैं वैसे-वैसे पहले का धर्म छूटता जाता है और नवीन धर्म प्राप्त होता जाता है । हठ पकड़कर कुछ भी नहीं करना है ।

दूसरे का धर्म भले ही श्रेष्ठ मालूम हो, उसे ग्रहण करने में मेरा कल्याण नहीं है । सूर्य का प्रकाश मुझे प्रिय है । उस प्रकाश से मैं बढ़ता हूँ । सूर्य मेरे लिये वंदनीय भी है । परन्तु इसलिए यदि मैं पृथ्वी पर रहना छोड़कर उसके पास जाना चाहूंगा, तो जलकर खाक हो जाऊँगा । इसके विपरीत भले ही पृथ्वी पर रहना विगुण हो, सूर्य के सामने पृथ्वी बिलकुल तुच्छ हो, स्वयं प्रकाशी न हो तो भी जब तक सूर्य के तेज को सहन करने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है, तब तक सूर्य से दूर पृथ्वी पर रहकर ही मुझे अपना विकास कर लेना होगा । मछली से यदि कोई कहे कि "पानी से दूध कीमती है, तुम दूध में रहो' तो क्या मछली उसे मंजूर करेगी? मछली तो पानी में ही जी सकती है । दूध में मर जायेगी ।

दूसरे का धर्म सरल मालूम हो, तो भी उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए । बहुत बार सरलता आभासमात्र ही होती है । घर-गृहस्थी में बाल-बच्चों की ठीक संभाल नहीं कर पाता, इसलिए ऊबकर यदि कोई गृहस्थ संन्यास ले ले, तो वह ढोंग होगा और भारी भी पड़ेगा । मौका पाते ही

उसकी वासनाएँ जोर पकड़ेंगी । संसार का बोझ उठाया नहीं जाता, इसलिए जंगल में जानेवाला पहले वहाँ छोटी सी कुटिया बनायेगा । फिर उसीकी रक्षा के लिए बाड़ लगायेगा । ऐसा करते-करते उस पर वहाँ सवाया संसार खड़ा करने की नौबत आ जायेगी । यदि सचमुच मन में वैराग्यवृत्ति हो तो फिर संन्यास भी कौन कठिन बात है? संन्यास को आसान बताने वाले स्मृतिवचन तो हैं ही । परन्तु मुख्य बात वृत्ति की है । जिसकी जो सच्ची वृत्ति होगी, उसी के अनुसार उसका धर्म होगा । श्रेष्ठ-कनिष्ठ, सरल-कठिन का यह प्रश्न नहीं है । विकास सच्चा होना चाहिए परिणति सच्ची होनी चाहिए ।

परन्तु कुछ भावुक व्यक्ति पूछते हैं–"यदि युद्ध - धर्म से संन्यास सदा ही श्रेष्ठ है, तो फिर भगवान् ने अर्जुन को सच्चा संन्यासी ही क्यों नहीं बनाया? उनके लिए क्या यह असंभव था?". उनके लिए असंभव तो कुछ भी नहीं था । परन्तु फिर उसमें अर्जुन का पुरुषार्थ ही क्या रह जाता? परमेश्वर ने स्वतन्त्रता दे रखी है । अतः हर आदमी अपने लिए प्रयत्न करता रहे, इसी में मजा है । छोटे बच्चों को स्वयं चित्र बनाने में आनन्द आता है । उन्हें यह पसन्द नहीं आता कि कोई उनसे हाथ पकड़कर चित्र बनवाये । शिक्षक यदि बच्चों के सवाल झट् हल कर दिया करें, तो फिर बच्चों की बुद्धि बढ़ेगी कैसे ? माँ-बाप और गुरु का काम सिर्फ सुझाव देना है । परमेश्वर अंदर से हमें सुझाता रहता है । इससे अधिक वह कुछ नहीं करता । कुम्हार की तरह भगवान् ठोक-पीटकर अथवा थपथपाकर हर एक का मटका तैयार करे तो, उसमें मजा ही क्या? हम हंडिया नहीं हैं, हम तो चिन्मय हैं ।

इस सारे विवेचन से एक बात आपकी समझ में आ गयी होगी कि गीता का जन्म, स्वधर्म बाधक का जो मोह है, उसके निवारणार्थ हुआ है । अर्जुन धर्म-संमूढ़ हो गया था । स्वधर्म के विषय में उसके मन में मोह पैदा हो गया था । श्रीकृष्ण के पहले उलाहने के बाद यह बात अर्जुन खुद ही स्वीकार करता है । वह मोह, वह ममत्व, वह आसक्ति दूर करना गीता का मुख्य काम है । इसीलिए सारी गीता सुना चुकने के बाद भगवान् ने पूछा है–"अर्जुन, तेरा मोह गया न?" और अर्जुन जवाब देता है, "हाँ, भगवान, मोह नष्ट हो गया, मुझे स्वधर्म का भान हो गया ।" इस तरह यदि गीता के उपक्रम और उपसंहार को मिलाकर देखें तो मोह-निरसन ही उसका तात्पर्य निकलता है । गीता ही नहीं सारे महाभारत का यही उद्देश्य है । व्यासजी ने महाभारत के प्रारम्भ में ही कहा है कि लोकहृदय के मोहावरण को दूर करने के लिए मैं यह इतिहास-प्रदीप जला रहा हूँ ।

(गीतामृत-1 से साभार)

●

आर्य अष्टांगिक मार्ग

(पूर्व प्रकाशित के बाद)

–डा. प्रेमनारायण सोमानी

(२) सम्यक संकल्प क्या है ?

निष्कामता अथवा निष्क्रमण, संसार त्याग यानी मन में वैराग्य, द्वेष विहीनता तथा अविहिंसा से संबंधित संकल्पों का होना ही सम्यक संकल्प है । इसके लिये चित्त में जैसा भी संकल्प जागे उसे केवल जानना है, दूर करने का प्रयास नहीं करना चाहिये । यदि कोई ऐसा उपक्रम करने लगे कि ये कलुषित विचार तो निकलने ही चाहिये तो वह सम्यक संकल्प नहीं कहलाता । इस प्रकार दूषित विचारों को जानते रहने से शनैः शनैः मन इन से रिक्त हो जाता है, तब होता है सम्यक संकल्प ।

(३) सम्यक वचन क्या है ?

सम्यक वचन, वाणी के दूषणों से बचना है जैसे झूठ बोलने से विरत रहना, चुगली खाने से विरत रहना, कठोर वचन बोलने से विरत रहना, निकम्मी फिजूल बकवास से विरत रहना । इसे मात्र बुद्धि के स्तर पर जान लेने से कुछ नहीं होता जब तक यह न जाने कि जो कुछ मैं बोल रहा हूँ उसमें झूठ, कटुवचन, चुगली, असत्य का अंश नहीं है ।

(४) क्या होता है सम्यक कर्मान्त ?

मेरे शरीर का कोई ऐसा कर्म न हो जिससे औरों की हत्या हो, चोरी हो या व्यभिचार हो ।

(५) क्या है सम्यक आजीविका ?

हर व्यक्ति को जीवन यापन के लिये कोई न कोई कार्य करना आवश्यक है, चाहे वह नौकरी हो या व्यवसाय । इसका मापदण्ड यही है कि आजीविका के साधन से अन्य किसी को हानि न हो । जिससे हमें आमदनी होती है, उसे धोखा न दे । मिथ्या आजीविकाओं से बचे । मिथ्या आजीविका है – नशीले पदार्थों का व्यवसाय, अस्त्र शस्त्रों का व्यापार, झूठ बोलकर ठगना, खाद्यान्नों में मिलावट, कम मात्रा में तोलना, जिस कार्य के लिये व्यक्ति को नौकर रखा गया उसे न करना, आदि ।

(६) क्या है सम्यक व्यायाम ?

जिस प्रकार शरीर के विकार, शरीर के रोग दूर करने के लिये उचित व्यायाम आवश्यक है उसी प्रकार मन की निर्बलता एवं विकार दूर करने के लिये मन का व्यायाम आवश्यक है । यह

व्यायाम है (a) अपने मन का निरीक्षण करना और देखना कि यह खराबी है, यह बुराई है तो उसे निकालने का प्रयास करना है । (b) फिर मन को देखते हैं जो बुराई मन में नहीं है वह आने न पाये (c) फिर मन को देखते हैं कि यह अच्छाई है, ये सद्‌गुण हैं तो प्रयत्न करते हैं कि वे कायम रहें, उनका संवर्धन हो (d) जो सद्‌गुण हमारे अन्दर नहीं हैं, वे आने चाहिये उसके लिये प्रयास करते हैं यही मन के सम्यक व्यायाम हैं ।

(७) क्या है सम्यक स्मृति ?

स्मृति का मुख्य अर्थ यहाँ पर जागरूकता, सावधानी है । जागरूकता वर्तमान क्षणों की हुआ करती है, बीते हुए क्षणों की नहीं । हम वर्तमान के क्षण के प्रति जितने-जितने सजग हैं, उतनी-उतनी सम्यक स्मृति है । यह सजगता, राग, द्वेष को दूर कर साढे तीन हाथ की काया में होने वाली संवेदनाओं के प्रति एवं चित्त में उठने वाले वितर्क एवं विचारों के प्रति सजग रहने को कहते हैं ।

(८) क्या है सम्यक समाधि ?

समाधि का अर्थ है चित्त की एकाग्रता । मन किसी भी आलम्बन को लेकर एकाग्र हो सकता है लेकिन मन की एकाग्रता मात्र सम्यक समाधि नहीं है । आलम्बन को देखने का प्रयत्न राग, द्वेष एवं मोह विहीन हो । हमारा चित्त एकाग्र हो और इस क्षण की सच्चाई के प्रति सतत जागरूक हो और साथ ही राग, द्वेष, मोह विहीन हो । बस यही सम्यक समाधि है । समाधिस्थ अवस्था में :–

प्रथम ध्यान : कोई कामों से अलग हो, अकुशल धर्मों से अलग हो, विवेक से उत्पन्न स- वितर्क और सविचार प्रीति और सुख को प्राप्त करता है । शांत होने पर भीतरी शांत और चित्त की एकाग्रता वाले विचार वितर्क विहीन प्रीति सुख को प्राप्त करता है ।

तृतीय ध्यान में : फिर प्रीति से विरक्त हो, उपेक्षक बन शरीर से सुख अनुभव करता है ।

चतुर्थ ध्यान में : फिर सुख और दुख के परित्याग, चित्तोल्लास एवं चित्त संताप का पहले ही अन्त हो जाने से सुख दुख रहित हो जाता है ।

भली भाँति आख्यात किया गया यह मार्ग स्वयं चलकर देखने योग्य है । तत्काल फलदायक है, आओ और करो कहलाने योग्य है, निर्वाण तक ले जाने वाला है । प्रत्येक समझदार व्यक्ति इसे करने में सक्षम है । इस मार्ग के शुद्ध स्वरूप के विषय में पाली भाषा के विलुप्त हो जाने से एवं इसमें तरह तरह की परम्पराओं के मिश्रण होने से बहुत सी भ्रांतियाँ आ गई हैं । जन साधारण की भाषा हिन्दी में यह सब सहज एवं साधारण रूप से आचरण करने वाला लगता है जैसा आप ऊपर देखते हैं । इसका प्रचार एवं प्रसार हो, लोग निर्मल चित्त हों, जन मन मंगल हो ।

इस मार्ग पर किसी भी समुदाय या धर्म का व्यक्ति निःसंकोच चल सकता है । विपस्सना ध्यान करने से वह मार्ग हृदय में स्वयं प्रकाशित हो जाता है ।

●

वाङ्माधुरी

एक दिन सायं काल श्री श्री माँ बैठी हैं भक्तगण मातृ वचनामृत का आनन्द ले रहे हैं । एक महिला कह रही थीं इस संसार में तृप्ति नहीं है, यदि किसी के पास गाड़ी, मकान, और गहना है तो वह और-और कहता ही चला जायगा ।

यह सुनकर माँ अपनी उंगलियों पर गिनती हुईं कहने लगीं, "गाड़ी, बाड़ी (मकान) कहना" ।

प्रश्न,–एक नारी को क्या करना चाहिये ?

माँ– नारी अर्धाङ्गिनी है और सहधर्मिणी अर्थात् अपने स्वामी की साथी, धर्म पथ पर दोनों का मन यदि एक हो तो यह अनुकूल है । नहीं तो छोड़ा-छोड़ी (घोड़ा गाड़ी) । "यह कहती हुई माँ ने गुरुप्रिया दीदी ओर देखते हुये कहा– "विन्ध्याचल वासिनी" आगे माँ कहने लगीं– "यदि दोनों मान जायें तो अच्छा रहता है । इतना कहकर माँ ने एक स्वामीजी का दृष्टान्त देते हुये कहा, उक्त स्वामीजी के साथ माँ की मुलाकात लक्ष्मण झूले पर हुई थी । उनको देखने पर माँ ने देखा था कि लाल किनारे की साड़ी पहने एक महिला उनके पास खड़ी हैं । (इस सम्बन्ध में माँ को पहले से कुछ मालूम नहीं था ।) असली बात यह थी कि उक्त स्वामीजी विवाहित थे । जब वे गृहत्यागी होकर साधु बने तब उनकी पत्नी ने आत्महत्या कर ली ।

प्रश्न– क्या यह उसके लिये अच्छा हुआ ?

माँ – यहाँ अच्छे बुरे का कोई प्रश्न ही नहीं आता ।

प्रश्न – तब इतने वर्षों के बाद माँ ने उसको कैसे देखा ?

माँ – ऐसी बात है एक तो वह अपने पति के बिना रह नहीं सकती । दूसरी बात यह है कि वह अपने पति की देह से अधिक आसक्त थी, और यही मुख्य आकर्षण था । माँ ने और भी कहा - "जब आने का समय होता है तब बिना आये रहा नहीं जांता । जो - गति अर्थात् जगत् । उक्त महात्माजी ने पहले अपने शिष्य को माँ के पास भेजा था - माँ से एकान्त में कुछ बातचीत करने के लिये । भाई जी भी एकतरफ चले गये । शिष्य ने माँ से पूछा -" मेरे गुरुजी ने आपसे पूछा है कि आप किसप्रकार के स्वप्न देखती हैं ? माँ कहती हैं उसने बड़े ढंग से पूछा - क्योंकि जो ब्रह्मस्थिति होती है वहाँ स्वप्न नहीं रहते । माँ ने जवाब दिया - "जहाँ निद्रा नहीं तो स्वप्न कहाँ ? एक बात और है - यह सब जगत् स्वप्नदृष्टि है ।" शिष्य के माध्यम से माँ के उत्तर को सुनकर महात्मा जी अत्यन्त प्रभावित हुये, उन्होंने माँ को अपने यहाँ आमन्त्रित किया । माँ ने प्रसंग को बढ़ाते हुये कहा, देह के ऊपर लोभ होना राक्षसी वृत्ति है । जैसा राक्षस का मांस पर लोभ होता है । शरीर से आकर्षण होने से अपना शरीर नष्ट होता है ।

प्रश्न– क्या सभी स्वप्न कल्पना हैं ?

माँ – जैसे स्वप्न में देखा घोड़ा उड़ रहा है । पक्षी के पंख घोड़े की पीठ पर लग गये हैं । पूरी कल्पना नहीं है । जैसे फूल देखा और बात सुनी अभिव्यक्ति की भावना छूट जाती है ।

जीव माने बन्धन - जगत सब विश्व ब्रह्माण्ड । नष्ट अर्थात् ना-इष्ट, जो परिवर्तन हो जाय, जो बदल जाय, जो नष्ट हो जाये । परमात्मा अर्थात् जहाँ परिवर्तन नहीं होता । अंगूर का गुच्छा जैसे खराब हो जाता है ।

पानी – माँ ने कहा जैसे पानी को तुम छान लो तो शुद्ध हो जाता है और यह खराब नहीं होता । उंसकी गंदगी चली जाती है । उसी प्रकार आत्मा जब छान लिया (आवरण मुक्त) जाता है शुद्ध हो जाता है यह नष्ट नहीं होता । जो पानी बन्द रहता है, वह गंदा होता है ।

इसके अनन्तर माँ ने बच्चा एवं उसकी परछाई के प्रसंग में कहा – " बच्चे ने अपनी माँ के कमरे में रखे हुए शीशे में अपनी परछाई देखी । रातभर वह परेशान रहा क्योंकि उसकी माँ के पास दूसरा सो रहा था जिसको उसने अभी -अभी शीशे में देखा है । जागने पर उसने अपने को माँ के पास देखा और समझा यह तो मैं ही हूँ । उसका सारा दर्द चला गया वह प्रसन्न हुआ ।

शीशे में देखकर वह दुखी हो गया था । द्वन्द्व में दुःख है । द्वैत का निवारण ही वेदान्त की सीमा है ।

प्रश्न – प्रत्येक के ग्रहण करने के विविध प्रकार हैं ।

उत्तर – मन से जितना अधिक माना-मानी चला जायगा ।
मन से उतना अधिक माना जा सकेगा । इसी के लिये ही साधना ।

प्रश्न – क्या कोई दुःख को सुख में परिवर्तित कर सकता है ?

उत्तर – किसी के लिये मान प्रतिष्ठा ही सुख है तो किसी के लिये धन ही सुख है । आपेक्षिक सुख, आपेक्षिक दुःख ।

●

वेद-वेदान्त, द्वैत-अद्वैत, परिणाम-विवर्त की दार्शनिक पृष्ठभूमि एवं समसामयिकता

(२)

—डॉ. विमला कर्णाटक

यहाँ प्रसङ्ग प्राप्त तीन तत्त्व हैं— माया, जगत् तथा जीव ।

माया— माया ब्रह्मरूप चैतन्य - तोयनिधि की तरंग सदृश है । यह ईश्वर की प्रकृति है, शक्ति है, उसकी महिमा है । यही प्रकृति जगदाकार होती है । इसी में परिणाम संगठित होता है । माया के चित् और अचित् दो रूप हैं । अचित् रूप में वह सांख्य की प्रकृति है और चिद् रूप में ब्रह्म की शक्ति ।

जगत्— वेदान्त के जगन्मिथ्यात्व का तात्पर्य यह नहीं है कि यह प्रत्यक्ष जगत् कुछ है ही नहीं अथवा कभी हुआ ही नहीं । किन्तु उसका आशय यह है कि ब्रह्म श्रद्धा का स्थान तर्क लेता है, तभी शब्दजाल का ताना बाना मत-मतान्तरों के रूप में बुना जाने लगता है और अध्यात्मविद्या शास्त्रार्थ का विषय बनकर रह जाती है ।

मेरी अल्प दृष्टि में वेद और वेदनिस्सृत अध्यात्मवाद अखण्ड भूमण्डल की शाश्वत धरोहर है । यह तो कालान्तर में मनुष्यकृत भौगोलिक वर्गीकरण से इसे किसी देशविशेष की सम्पत्ति कहा जाने लगा । मनुष्यकृत इसी द्वैतबुद्धि के खण्डनार्थ शंकराचार्य ने उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक अद्वैतवाद का जयघोष किया । चाहे, इसे जीव-ब्रह्म की एकता नाम से परिभाषित किया जाय अथवा प्राणि मात्र की एकता के नाम से जाना जाय । शंकराचार्य तो अपने विचारों के पारस से विभिन्नता तथा विविधता रूप लोहे को सोना बनाना चाहते हैं, जिससे 'वाचारम्भणो विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्' श्रुति में अन्तर्निहित ब्रह्माद्वैत का नारा व्यष्टि में विभक्त मनुष्य को उसके समष्टि रूप का दिग्दर्शन करा सके तथा नर को नारायण की पदवी से अलंकृत कर सके ।

किन्तु यह तभी सम्भव है जब हम शंकराचार्य के अध्यात्म सन्देश को काल्पनिक नहीं, अपितु गणित के नियमों से भी बढ़कर निश्चित एवं शाश्वत सत्य समझें । सात विषम संख्याओं का जोड़ सर्वदा विषम रहता है । गणित के इस नियम की भाँति अटूट आध्यात्मिक तथ्यों के प्रतिपादक वेद-वेदान्त शास्त्र हैं, ऐसा विश्वास कर सकें । यह शास्त्र उस तत्त्व का अन्वेषण करता है, जिस पर अन्य समस्त ज्ञान अवलम्बित हैं । ऐसा वचन भी है – 'ब्रह्मविदां सर्वविद्या प्रतिष्ठाम् ।'

शब्दान्तर में मनुष्यता बनाम वेदान्त सम्पूर्ण मानवीय ज्ञान और अनुभवों को अपने में समाहित ? अनुभव की एक स्थिति ऐसी होती है, जिसमें जगत् का लोप हो जाता है । यह दृश्य अदृश्य हो जाता है ।, वचन भी है— 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म, नेह नानास्ति किंचन' अर्थात् सब कुछ

ब्रह्मरूप है । उसके अतिरिक्त कुछ नहीं है । नाम तथा रूपात्मक यह जगत् अनित्य है । उसके नाम और रूप सर्वदा बदलते रहते हैं । केवल अपरिवर्तनीय सत्-चित्-आनन्द स्वरूप ब्रह्म नित्य है । सूक्ष्म दृष्टि से चराचर जगत् का नानात्व केवल भ्रम नहीं है । उसकी व्यावहारिक सत्ता तो है ही ।

जीव – उपनिषद् में ऐसे अनेक वाक्य मिलते हैं, जिनसे जीव और ब्रह्म का एकत्व सिद्ध होता है । 'अहं ब्रह्मास्मि' और 'तत्त्वमसि' आदि वाक्यों से जहां यह तथ्य उपवर्णित हुआ है वहीं दूसरी ओर 'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया' आदि उपनिषद् वाक्य दोनों के भेद को भी प्रतिपादित करते हैं । जीव और ब्रह्म दोनों देह रूप वृक्ष पर वास करते हैं । तात्त्विक दृष्टि से जीव और ब्रह्म दोनों एक ही हैं जिस प्रकार घट के नष्ट हो जाने पर उसके भीतर का आकाश बाहर के आकाश से मिल जाता है, उसी प्रकार उपाधियों के विलीन होने पर ब्रह्म ज्ञानी (जीव) ब्रह्मस्वरूप हो जाता है । जैसा कि कहा गया है–

घटे नष्टे यथा व्योम व्योमैव भवति स्वयम् ।
तथैवोपाधिविलये ब्रह्मैव ब्रह्मवित् स्वयम् ॥

अतः जीव और ब्रह्म दोनों तत्त्वतः एक हैं । अन्तर केवल इतना है कि जीव मायाधीन है और ईश्वराधीन है– माया । वह मायाधीश है । जीव को जब-जब ईश्वर या ब्रह्म कहा जाता है तो वह उसी प्रकार औपचारिक है, जिस प्रकार श्रेष्ठ महात्मा के लिये भगवान् और राजा के लिये ईश्वर शब्द का प्रयोग किया जाता है । ज्ञातव्य है कि जिज्ञासा का स्थान जब जिगीषा तथा किया हुआ है धर्म- सम्प्रदाय, मत-मतान्तर, योगादि तथा समस्त विज्ञान एवं कलाएँ उस तक पहुँचने के उपकरण, साधन अथवा सोपानमात्र हैं । सर्वात्म दृष्टि प्राप्त होने पर कोई वस्तु अप्राप्य नहीं रह जाती है । इस प्रकार भौतिक संसाधनों की प्राप्ति के आधुनिक दौर में आचार्य शंकर के सिद्धान्त अत्यन्त उपयोगी एवं समसामयिक हैं ।

●

तुलसीदास की अंतिम याचना

—श्री प्रकाश नारायण पाठक

भक्त शिरोमणि, महान-आत्मा गोस्वामी तुलसीदास रचित सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'श्री रामचरित-मानस' वास्तव में ज्ञान एवं भक्ति का अगाध सागर है। उसकी प्रत्येक चौपाई एक मंत्र है ऐसा प्रायः माना जाता है। ऐसे उत्कृष्ट ग्रन्थ के अंतिम दोहे के रूप में पूज्य गोस्वामी जी ने मांगा है।

"कामिहि नारि पिआरि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरन्तर, प्रिय लागहु मोहि राम ॥

कुछ व्यक्तियों को यह दोहा पढ़कर यह शंका होने लगती है कि गोस्वामी जी ने भगवान के प्रति प्रेम माँगा यह तो अच्छी बात है परन्तु उन्होंने उस प्रेम के रूप के बारे में जो 'कामी' व 'लोभी' के दो उदाहरण दिये हैं, यह अच्छा नहीं किया। चूँकि काम क्रोध लोभ व मोह तो मानव की उन्नति के लिये बाधक एवं शत्रु ही माने जाते हैं। प्रायः सन्त एवं सद्ग्रन्थ इन चारों को, भक्तों के लिये अवगुण ही मानते हैं। गोस्वामी जी ने फिर भी अपने इष्ट देव "राम" से अंतिम याचना यह क्यों की है कि "हे राम, आप मुझे निरन्तर अर्थात हमेशा इस प्रकार प्रिय लगते रहें जैसे कि कामी पुरुष को नारि (स्त्री) प्रिय लगती है अथवा जैसे लोभी को (दाम) धन प्यारा लगता है।"

इस संसार में उत्कृष्ट प्रेम के अनेक मान्य रूप हैं। जैसे पिता–पुत्र का प्रेम, माँ बेटे का प्रेम, स्वामी - सेवक का प्रेम आदि आदि जिनमें से अनेक के आदर्श भी इतिहास में मिलते हैं। फिर भी गोस्वामी जी ने 'कामी के नारि के प्रति प्रेम' अथवा 'लोभी के धन के प्रति प्रेम' को ही उदाहरणार्थ क्यों चुना। यह भी सर्वमान्य है कि गोस्वामी जी की रचना में कोई भी शब्द अथवा दृष्टान्त निरर्थक नहीं होता अतः आइये हम और आप मिलकर विचार करें व खोजें कि कामी अथवा लोभी के प्रेम में क्या-क्या विशेषताएं हैं? काफी मनन एवं विश्लेषण करने पर मेरी तुच्छ बुद्धि में निम्न विचार आये हैं –

1– कामी-पुरुष जिस स्त्री को प्रेम करता है वह उससे चाहे कितनी ही दूर देश में हो परन्तु कामी पुरुष का मन सदा उसमें ही अनुरक्त रहता है। उक्त दूरी से उसके प्रेम में कोई बाधा नहीं आती है।

2– कामी पुरुष किसी नारी का केवल वर्णन सुनकर ही अनुरक्त हो जाते हैं उसी के ध्यान में मग्न रहते हैं और दर्शन की पिपासा से पीड़ित रहते हैं प्रिय को देखा नहीं है परन्तु उसके प्रेम में दीवाने रहते हैं। दर्शनों के लिये आकुल रहते हैं।

3– इसी प्रकार कामी के प्रेम में दिन या रात्रि से कोई अन्तर नहीं पड़ता है। चौवीसों घण्टे हर दिन, माह, वर्ष, हर मौसम, सर्दी, गर्मी, अथवा बरसात में कामी पुरुष नारी की प्राप्ति के लिये

प्रयत्नशील एवं उसी के ध्यान में मग्न उसी का स्मरण करता रहता है। एक प्रकार से जैसे जाप करता रहता है।

4- कामी पुरुष अपना सांसारिक कार्य व्यवहार, करते हुए भी अर्थात् नहाते धोते, खाना खाते, ऑफिस अथवा व्यापार का कार्य करते हुये भी मन से एक ध्यान योगी के समान अपनी प्रेमिका में ही रमा रहता है।

5- कामी पुरुष प्रेमिका के ध्यान अथवा वियोग से ग्रसित होता है उस समय उसे खाना, पीना, सिनेमा, मनोरंजन, घूमना, हंसी, मजाक, पिकनिक, कुछ अच्छा नहीं लगता। कभी वह कहता है कि मुझे भूख नहीं है। कभी कहता है कि मेरा मन नहीं है और आप लोग जायँ। तथा स्वयं किसी एकान्त में बैठकर अपनी प्रेमिका के हास विलास, लीला, उठना-बैठना, बोलना, आदि को लेकर ही मन ही मन मग्न रहकर प्रेमी भक्त के समान आनन्दित होता रहता है।

6- अपनी प्रिय नारी के ध्यान में मग्न कामी पुरुष अपनी जिव्हा का रस भी भूल जाता है। प्रिय के ध्यान में डूबा हुआ वह खाना तो खा लेता है परन्तु उसे यह ध्यान भी नहीं होता है कि किस चीज में नमक अथवा मिठास कम या ज्यादा थी या थी ही नहीं।

7- कामी पुरुष अपनी प्रेमिका के ध्यान में जब डूबा होता है उस समय उसकी आखें खुली होते हुए भी वह यह नहीं देखता कि सामने क्या हो रहा है या कौन कब आया या चला गया।

8- कामी पुरुष जब अपनी प्रेमिका के ध्यान में डूबा होता है तब उसकी श्रवण इन्द्रिय व त्वचा से भी उसका सम्पर्क टूट सा जाता है प्रायः देखा गया है कि औरों की बातें तो वह सुनता ही नहीं, बल्कि कभी-कभी तो स्वयं अपने को भी काफी आवाज दिये जाने पर चौंकता है। छूने से नहीं बल्कि झिझोड़ने से चैतन्य होता है। तब पूछता है कि क्या हुआ? क्या कहा? क्या करूँ मैं सुन नहीं पाया। मेरा ध्यान कहीं और था।

9- प्रायः कामी के साथ कुत्ता शब्द भी जोड़ दिया जाता है। अर्थात कुत्ते को कामी का एक विशेष प्रतीक माना गया है। उसके विषय में संक्षेप में यह समझ लेना ही काफी होगा कि कामी कुत्ता अपनी प्रेमिका से मिलन के लिये (पास अथवा दूर से ही) आतुर रहता है तथा निरंतर उसी के सहवास में रहना चाहता है। वह कामी कुत्ता बिलकुल अशक्त, अस्वस्थ जर्जर अथवा मरणोन्मुख अवस्था में ही क्यों न पहुँच गया हो। मरते वक्त भी अंतिम क्षण तक, यदि उसके नेत्रों में देखने की शक्ति है तो, उसी अपनी प्रिया की ओर आतुर दृष्टि से टुकुर-टुकुर देखता हुआ प्रिय के मिलने की आशा लिये ही प्राण छोड़ देता है। लोग चाहे ललकारें, चाहे पत्थर मारें, वह अपनी प्रेमिका के प्रेम को त्यागना नहीं चाहता है।

10- चातक का स्वाति जल प्रेम भी सुप्रसिद्ध है उसको अन्य जलों के प्रति (चाहे वह गंगाजल ही क्यों न हो) कोई रुचि नहीं होती। उसे कोई अन्य जल ग्राह्य ही नहीं है। इसी प्रकार कामी-पुरुष अपनी प्रिया के अतिरिक्त अन्य किसी की ओर उन्मुख नहीं होता है। चाहे सुन्दर से सुन्दर अन्य स्त्री अथवा अप्सरा ही क्यों न सम्मुख आ जाय। अतः यह अनन्य प्रेम का भाव भी कामी के प्रेम से ही मिलता है।

11– देश-प्रेम तक अन्य ऊपर गिनाये गये प्रेमों में प्रेमी को प्रतिफल की कामना रहती है सुयश मिलने की भी आशा अथवा आकांक्षा भी रहती है परन्तु कामी की ऐसी कोई भावना नहीं होती उसका प्रेम तो एकात्मक है निःस्वार्थ है, उसे कोई सुयश नहीं चाहिये बल्कि वह अपने प्रेम के तथ्य तक को भी छिपाना चाहता है ।

12– कामी पुरुष संसार के दृश्य जगत के बीच में से निःसंग भाव से निकलता हुआ अपने लक्ष्य (प्रिय) की ओर चलता जाता है । सांसरिक व्यापार से उसका कोई लगाव नहीं । उसे कोई लेना देना नहीं । वह ऐसे सांसारिक जीवन के बीच में से ऐसे बढ़ता चला जाता है जैसे "बाजार से निकला है खरीदना नहीं है" ।

13– जैसा कि ऊपर बतलाया गया है कि अपने प्रिय के ध्यान में मग्न कामी पुरुष को कहीं घूमने या कुछ देखने, जाने आने में रुचि नहीं होती । हर जगह के लिये वह मन ही करता रहता है । परन्तु यदि उसको किसी माध्यम से यह जानकारी मिले कि उसकी प्रिय नारी अमुक स्थान पर मिल सकती है, तो सारे घर परिवार को छोड़कर, सारे बंधन तोड़कर, सारे कष्ट भोगकर अपनी प्रियतमा से मिलने हेतु उस स्थान पर पहुँचने को आतुर हो जाता है । वह वास्तव में चरितार्थ कर देता है इस कथन को कि जाके प्रिय न राम वेदेही, तजिये ताहि कोटि वैरीसम जद्यपि परम सनेही ।

14– अपनी प्रिया के बिना उसे सुगन्ध भी दुर्गन्ध लगती है । प्रिय के संयोग में दुर्गन्ध भी उसे परेशान नहीं करती । उसे तो आभास ही नहीं होता । गहरी-गहरी सासें चलने लगती हैं और जैसे स्वयं प्रणायाम हो रहा हो । निरंतर प्रिय का स्मरण चलता रहता है जैसे अजपा-जाप चल रहा हो ।

15– कामी पुरुष अपनी प्रिया की रूपलीला के ध्यान में मग्न स्वयं कभी बड़बड़ाने लगता है कभी हंसता, कभी रोता, कभी गुनगुनाने लगता है । दूसरे लोग उसे पागल समझेंगे या उसकी हंसी उड़ायेंगे इसकी उसको कोई चिन्ता नहीं होती वह तो भाव-समाधि में रमकर मस्त-फकीर बन चुका होता है ।

16– कामी को धर्म, अर्थ, मोक्ष, काम आदि की कोई अभिलाषा नहीं होती । परन्तु ये सारे सद्‌गुण बिना किसी प्रयास के स्वयं ही, उसे प्राप्त होते हैं । किसी अन्य वस्तु में लगाव न रहने के कारण वह सब कुछ दान करने को तत्पर रहता है अतः इस दृष्टिकोण से वह ज्ञानी ध्यानी योगी व दानी बन जाता है ।

17– लगभग यही उपरोक्त गुण अथवा अवगुण धन के लोभी में भी होते हैं अतः उनके दोबारा वर्णन की आवश्यकता नहीं है । लोभी का ध्यान भी सदा धन कमाने एवं धन वढ़ाने में ही लगा रहता है । वह सदैव निन्यानबे के फेरे में रहता है । इस प्रकार धन के साथ ही साथ उसका धन के प्रति लोभ भी निरन्तर बढ़ता ही जाता है । कम नहीं होने पाता । वह कभी तृप्त नहीं होता । ऐसी ही भावनाएँ भगवत्प्रेमी में भी हों तो फिर क्या कहना ।

18– कामी एवं लोभी के प्रेम में अन्य प्रेमों से एक मुख्य भिन्नता अथवा एक वहुत वड़ी विशेषता और भी है । जहाँ अन्य सभी प्रकार के प्रेमी अपनी चर्चा प्रशंसा अथवा प्रतिफल प्राप्ति के लिये इच्छुक रहते है वहाँ उसके विपरीत कामी व्यक्ति अपने इस प्रेम-भाव को प्रकट ही नहीं होने देना चाहता । वह नहीं चाहता कि किसी को यह पता चले कि वह कामी है ।

इसी प्रकार अनंत धन संचय करने की भावना होते हुए भी लोभी नहीं चाहता कि किसी को यह पता चले या कोई कहे कि वह लोभी है ।

ऐसे 'लोभी' या 'कामी' के समान जो भी राम को प्रेम करेगा उसका मन अन्य सब ओर से हटकर स्वतः उदासीन हो जायगा । वह विदेह हो जायगा । एक अनन्य-भक्त हो जायगा । निरन्तर इसी भाव में डूबे रहने के कारण उसका संसार मात्र से कोई लगाव नहीं रहेगा । अतः मृत्यूपरान्त वह मोक्ष पाने का अधिकारी होगा । यदि मरते समय भी उसकी लालसा अपने प्रिय राम से मिलने की बनी रहतीं है तो वह मानव शरीर त्याग कर बिना प्रयास के ही आलोक्य, सामीप्य, अथवा सायुज्य मुक्ति को प्राप्त करने का अधिकारी होता है ।

अतः मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार कामी व लोभी के प्रेम के उपरोक्त विशिष्ट गुणों व फल को देखते हुए ही परमभक्त महाकवि तुलसीदास जी ने अपने इष्ट देव से यही याचना की है कि "हे राम आप मुझे निरन्तर अर्थात् सदैव इस प्रकार प्रिय लगते रहें जैसे कि कामी-पुरुष को (उसकी प्रियतमा) नारी प्रिय लगती है अथवा जैसे लोभी को दाम (धन) प्रिय लगता है ।

●

बसंत पञ्चमी

—आशा शिवपुरी

माँ शारदे ! पुष्प बिखेर दे चहुँ ओर,
काँटों से मैं बिद्ध हो जाऊँ,
सुवासित हो उठें मन दिशाएँ,
व्याप्त विष अंजलि मैं बन जाऊँ ।
देवि ! कर मन प्रदूषण से परित्राण !!

जल-थल का भेद न जानें,
बन दुर्योधन कर रहे मनमाने,
हैं अबोध ये सब अज्ञानी
हुए अपराध सब अनजाने ।
हे वेदमयी ! कर अज्ञान से परित्राण !!

अन्धे ने क्या कभी देखा दिन,
जो वह जाने रात क्या है,
नेत्रहीन को ज्ञान ज्योति दे माँ
कर सुबुद्धि इन को प्रदान ।
हे सूर्या माँ ! कर अन्धकार से परित्राण !!

जन प्रकृति करे निछावर
स्व कर्मबद्ध बुद्धि अनुसार
न कर चयन, कर सब ग्रहण
निर्भेद-भाव से बन उदार ।
हे सुखदा ! कर निराशा से परित्राण !!

विश्वास की डोर थाम कर
आशान्वित खड़े सब तेरे द्वार
हे बोधमयी! कर अबोध दलन
तेरे चरणों में नत भिक्षुक यह संसार ।
हे ममतामयी ! कर जड़ता से परित्राण !!

●

महापुरुष मधुर वाणी

सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकम् शरणम् व्रज ।
अहम् त्वाम् सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

– भगवद्गीता

मुक्तिमिच्छसि चेत् तात विषयान् विषवत्त्यज ।
क्षमार्जवदयातोष सत्यम् पीयूषवद्भज ॥

– अष्टावक्र गीता

(१) आध्यात्मिक जीवन में सफलताएँ तुम्हारे मार्ग की रुकावटें नहीं हैं । याद रखो वे तो तुम्हारी सफलता की सीढ़ियाँ हैं ।

(२) शरणागति भूमि पर की घास की तरह है जो तूफानों से भी प्रभावित रहती है । भगवान की लीला अपरंपार है । तुम्हारा कर्तव्य है कि भगवान के प्रति स्वयम् को श्रद्धा, कृतज्ञता और प्रसन्नता से समर्पित कर दो ।

(३) नामस्मरण सबसे श्रेष्ठ साधन है । दुःख तो यह है कि तुम विश्वास नहीं करते कि वह तुम्हें ठीक कर सकता है ।

(४) महापुरुषों के उपदेशों का पालन करो, उनकी सलाह मानो उनके ही कहने के अनुसार चलो और तब देखो आप में कितना परिवर्तन होता है ।

(५) राजसिक और तामसिक शक्तियाँ हैं जिन्होंने तुम्हारे हृदय को घेरे रखा है । वे ही तुम्हारे मन को हिरण्यकश्यप बना देती हैं और तुम्हारे पतन के लिये सन्नद्ध हैं । नामजप उनके लिये नृसिंहभगवान की तरह हैं जो उन्हें जान से मारकर आपके प्रह्लादरूपी आत्मा को अनंत सुख शान्ति देता है ।

(६) तुम्हारा भगवान और नामजप के साथ कितना अनुराग कितनी दृढ़ता के साथ है यही कसौटी है । शेष का कोई महत्व नहीं ।

(७) प्रेम और शरणागति का प्रकाश फैलाओ, तब दुःख, ईर्ष्या और अहंकार रूपी चमगादड़ दूर भाग जाएँगे ।

(८) सुख और दुःख अपने ही कर्मो से आते हैं । भूतकाल के पापों की वजह से जो दुःख आ रहे हैं उनके निवारण का एक ही उपाय है वर्तमान काल में (आज, अब) पुण्य कर्म करना । नामस्मरण सबसे श्रेष्ठ पुण्यकर्म है ।

(९) मृत्यु किसी भी क्षण कहीं भी आ सकती है । उसके निवारण के लिये निरन्तर नामजप और हृदय में भगवान का स्मरण जारी रखो ।

(१०) प्रेम, शान्ति और आनन्द प्रकट नहीं होंगे यदि इन्द्रिय सुख और अहंकार मन को आक्रान्त रखेंगे ।

(११) मन ही सब कुछ है । मन विषयों में आसक्त होगा तो दुःख का अन्त कभी हो नहीं सकता । मन यदि भगवान और नामजप में आसक्त होगा तो दुःख, क्लेश दूर हो जाएँगे और शान्ति, आनन्द उनका स्थान लेंगे ।

(१२) भक्ति, साधना और विनयपूर्ण शरणागति एक सामान्य मानव को भी बहुमूल्य रत्न में परिवर्तित करते हैं ।

(१३) तुम भगवान के प्रति अपनी शरणागति को परिपूर्ण कर दो । जिस क्षण तुम्हारी शरणागति पूर्ण हो जायगी उसी क्षण तुम्हें शाश्वत आनन्द प्राप्त हो जायगा ।

(१४) जहाँ अहंकार है वहाँ घोर पतन और दुःख क्लेश निश्चित है । अहंकार कैन्सर (कर्क रोग) की बीमारी है जो साधक को बर्बाद कर देती है । इससे बचना हो तो चार बातें आवश्यक हैं :– (१) बालभाव अर्थात् अपने आप को एक दो साल के छोटे बच्चे की तरह असहाय और मासूम जानना । (२) भगवत्‌शरणागति । (३) नियमित साधना और निरंतर नामस्मरण । (४) अपने दोषों को पापों को याद करना ।

(१५) जो स्वयम् को दूसरों से थोड़ा सा भी ऊँचा समझता है उसे बहुत दुःख भुगतना ही पड़ेगा, यह एक अकाट्य नियम है । इसलिये सदा बालभाव तथा सेवक भाव को बनाये रखो ।

प्रणति-कुसुमाञ्जलि

—डा. प्रेमलता शर्मा

पूज्यपाद "बाबू जी" (म. म. श्री गोपीनाथजी कविराज) के दर्शन का सौभाग्य सन् १९५१ में हुआ। तब से उनके कक्ष में श्री श्री माँ का चित्र बराबर दृष्टि-पथ में पड़ता रहा। उनका नाम काशी आने से पूर्व ही मथुरा में सुन चुकी थी। वृन्दावन में निर्मित उनका आश्रम ही नाम-श्रवण का उपलक्ष्य बना था। सन् १९५२ में गंगा के तीरवर्ती स्याद्वाद विद्यालय में संस्कृत वाद-विवाद-प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए अपनी सखी सुश्री तिलोत्तमा देसाई (अधुना सौभाग्यवती तिलोत्तमा जानी) के साथ गई थी। तब उस विद्यालय के मार्ग में श्री श्री माँ के आश्रम का 'दर्शन' अनायास हुआ था। सन् १९५३ में शिवरात्रि के पर्व पर मेरे माता-पिता, छोटी बहिन चि. ऊर्मिला में प्रथम 'प्रवेश' हुआ। किन्तु अपार जन-समूह में माँ के दर्शन को तो असम्भव ही मान लिया था। सन् १९५६ में, श्री श्री माँ की षष्टि-पूर्ति के अवसर पर, माँ के अनन्य भक्त स्व. डा. श्री गोपाल प्रसाद दासगुप्त के अनुरोध से, हमारे संगीत-गुरु स्व. पं. ओंकारनाथजी ठाकुर के गायन का आश्रम में आयोजन हुआ था। उनके साथ छात्र-छात्राओं का जो समूह उस समय गया था, उसमें मैं भी सम्मिलित थी। प्रायः दो घण्टे तक माँ हम लोगों के सम्मुख बैठ कर संगीत सुनती रहीं। 'दर्शन' तो भरपूर हुआ, किन्तु प्राणों का आप्यायन नहीं हुआ। माँ से एक भी शब्द कहने-सुनने का अवसर कहाँ मिला? संगीत-कार्य-क्रम समाप्त होने पर मन मार कर सबके साथ लौट आना पड़ा।

अगस्त, १९६७ मं पूज्यपाद बाबूजी की प्रेरणा से आश्रम के श्री पानूदा डॉ. सुश्री पद्मा मिश्र के साथ मेरे विभाग में मिलने आये। उन्होंने बतलाया कि माँ की 'अमर वाणी' (मूल और व्याख्या) का जो हिन्दी अनुवाद 'आनन्द-वार्ता' में प्रकाशित हुआ था, उसे पुस्तकाकार में छापने की योजना है और उसके सम्पादन का कार्य मुझे सौंपने की इच्छा श्री कविराजजी ने प्रकट की है। उनकी इच्छा मेरे लिए आदेश थी। इसलिए अपने समस्त जगज्जंजालों की उपेक्षा करके तत्काल श्री पानूदा से कह दिया कि प्रकाशित सामग्रीं मेरे पास भिजवा दें। अगले ही दिन माँ अपनी वाणी के रूप में मेरे कमरे में पधार गईं। मन में हुआ—'यह भी खूब रही। जिनके 'दर्शन' 'श्रवण' के लिए आज तक ठीक-ठीक अवसर नहीं मिला। वे 'अक्षर'—देह में स्वयं ही मेरे पास आकर विराजमान हैं। सम्भवतः भगवान् की यही इच्छा है कि 'दर्शन' से पूर्व उनकी वाणी का 'श्रवण-मनन' हो।" कभी-कभी पू. बाबूजी के कक्ष में 'आनन्द-वार्ता' के अंक उलटने-पलटने का अवसर मिला करता था। अब तो सात वर्षों की 'फाइल' का ढेर मेरे कमरे में था। 'अघटनघटनापटीयसी' इसी को तो कहते हैं।

अक्टूबर, १९६८ के अन्त में मेरी परम आत्मीया सुश्री विमल बहन (ठकार) जब चार-पाँच दिन के लिए मेरे पास आईं तब उन्होंने अपना पुराना प्रश्न फिर एक बार दोहराया–"काशी में रहती हो। कभी माँ के दर्शन के लिए नहीं गईं? क्या इच्छा नहीं होती?" इस प्रश्न का समाधानकारक उत्तर मेरे पास कभी भी नहीं रहा। इस बार भी नहीं था। किन्तु इस बार जरा उत्साह में भर कर मैंने कहा–"ताई! (मराठी में बड़ी बहन के लिए सम्बोधन) अब तो माँ वाणी के रूप मेरे पास आ गई हैं। समय आने पर दर्शन भी हो ही जाएगा।" इस पर विमल बहन ने बहुत प्रसन्नता व्यक्त की।

सम्पादन का काम बहुत मन्थर गति से चलने लगा। कुछ महीने बाद एक दिन अचानक पू. पा. बाबूजी पूछ बैठे–"तुमने मां का दर्शन कभी किया है या नहीं?" अब तक जो 'दर्शन' हुआ था, उसे दर्शन के रूपमें स्वीकार करने को हृदय प्रस्तुत नहीं था। इसलिए मैं झट से बोल उठी–"जी नहीं।" उन्होंने कहा–"दर्शन तो तुम्हें करना चाहिए।" दीर्घकाल से सञ्चित सुप्त-गुप्त आकांक्षा को मुखर होने के लिए अच्छा अवसर मिल गया। तत्काल बोल उठी–"आप जब कभी माँ के आश्रम जाएँ, तब यदि मुझे पता चल जाये तो–।" हृदय की बात समझ कर वे बोले–"हाँ, ठीक है, अब मार्च में जब माँ यहाँ आएँगी तब किसी दिन तुम्हें साथ ले चलेंगे।" २३ मार्च, ६८, को प्रातःकाल परीक्षा का काम पूरा करके, कानपुर से लौटी और उसी दिन रात को कलकत्ता जाने वाली थी। सोचा कहीं ऐसा न हो कि कलकत्ता से लौटने तक माँ काशी से चली जाएँ। एक दिन में कई काम निपटाना आवश्यक था। इसलिए स्वयं कहीं निकल भी नहीं सकती थी। आदमी के हाथ पू. बाबूजी के पास पत्र भेजा कि उसी दिन यदि सम्भव हो तो दर्शन के लिए चला जाए। उत्तर मिला कि इतनी दौड़धूप में सम्भव नहीं होगा, एप्रिल में जब माँ यहाँ आयेंगी, तब बहुत दिन रहेंगी। उस समय शान्ति से दर्शन हो सकेगा। १५ एप्रिल के आसपास माँ का शुभागमन होगा, ऐसा अनुमान था, इसलिए १९ एप्रिल को पुनः आदमी के हाथ पू. बाबूजी के पास पत्र भेजा। कब दर्शन के लिए ले चलेंगे, इस उत्कण्ठा की अभिव्यक्ति के साथ ही यह भी लिख दिया था कि रविवार, २१ ता. अपराह्न में पू. बाबूजी के पास जाऊँगी। उत्तर मिला–"परसों जब आओगी तब तिथि और समय निश्चित किया जाएगा।" रविवार का दिन आया, किन्तु कुछ ऐसे अप्रत्याशित काम भी साथ ले आया कि थक कर चूर हो कर उस कड़ी धूप में बाहर निकलने का साहस नहीं हुआ। सोचा–आज न सही, कल चली जाऊँगी, अभी तो समय ही निश्चित करना है। किन्तु यह क्या पता था कि शुभ अवसर तो आज ही उपस्थित है, कल तक वही मेरी प्रतीक्षा काहे को करेगा।

शाम को प्रायः ५॥ बजे भाई श्री सीतारामजी (बाबूजी के अखण्ड स्नेहपात्र परिजन) तेजी से मेरे बाहर के कमरे में अचानक घुसे और बोले–"बाबूजी आए हैं।' बाबूजी का घर में पदार्पण हो इसकी साध कई वर्षों से थी, किन्तु वह इस प्रकार अप्रत्याशित रूप से पूरी होगी, यह कौन जानता था? छोटी बहन उर्मिला और मैं दौड़कर बाहर फाटक के पास गईं। पीछे-पीछे माता-पिता भी पहुँच गये। देखा, बाबूजी मोटर में बैठे हैं। वे तुरन्त बोले–चलो, झटपट तैयार हो जाओ, माँ के आश्रम

में चलना है न ।" हर्ष का विषय एक हो तो कोई किसी प्रकार संभले भी । किन्तु एक-साथ दो-दो प्रबल प्रसंग उपस्थित हो जाएँ तो कैसे संभला जाय? किसी प्रकार काँपते हुए कण्ठ से मैंने कहा– "तैयार तो अभी हो जाती हूं, किन्तु आप एक मिनट भीतर चलिए न ।" वे बोले–"देर हो जाएगी ।" किन्तु फिर भी मेरे 'दुराग्रह' को टाल नहीं सके और कुछ क्षणों के लिए भीतर पधारे । हम दोनों बहिने झटपट तैयार होकर पू. बाबूजी एवं उनके अन्य साथियों के साथ मोटर में बैठकर चल दीं । रास्ते में श्रीसीतारामजी ने बताया कि परसों मेरे पत्र का उत्तर भिजवाने के बाद ही आज रविवार सांयकाल का समय निश्चित हो गया था और तब यह सोचा गया था कि आज जब मैं पू. बाबूजी के पास जाऊंगी तब वे मुझे अपने साथ आश्रम ले जाएँगे । किन्तु मेरा तो उस दिन दोहरा सौभाग्य उदित होने वाला था । इसलिए स्वयं घर से निकलती कैसे? जब सब लोग ५ बजे तक मेरी प्रतीक्षा कर चुके तब श्रीसीतारामजी ने यह सुझाव दिया कि क्यों न घर से ही मुझे ले लिया जाए? कुछ मास पूर्व वे मुझे वचन दे चुके थे कि जब कभी पू. बाबूजी-मां के आश्रम में जाने के लिए घर से निकलेंगे तब वे कुछ समय के लिए उन्हें मेरे यहाँ लिवा लाएँगे । अपना वचन पूरा करने के लिए आज उन्हें (श्रीसीतारामजी को) अच्छा अवसर हाथ लगा । रास्ते भर ये लोग सड़क के दोनों ओर ताकते हुए आए ताकि कहीं ऐसा न हो कि मैं पू. बाबूजी के निवास-स्थान की ओर जा रही होऊँ । इधर मैं तो घर पर आराम कर रही थी, आसन्न सद्भाग्य-उदय से बिल्कुल बेखबर ।

एक अवर्णनीय उत्कण्ठा, उत्साह, उमंग लेकर आश्रम के निकट पहुँची । बाहर बहुत से लोग पू. बाबूजी की प्रतीक्षा कर रहे थे । उनके पहुँचने में इतने अधिक विलम्ब पर सब लोग आश्चर्य प्रकट कर रहे थे । विलम्ब का कारण उन लोगों के सम्मुख 'सशरीर' उपस्थित था । अस्तु! पू. पा. बाबूजी के पीछे-पीछे 'माँ के कक्ष में प्रवेश किया । प्रणाम, पू. बाबूजी द्वारा परिचय-प्रदान आदि के अतिरिक्त केवल एक ही बात की सुधि रही है–श्री श्रीमाँ की परम स्निग्ध, मधुर, वात्सल्य-पूरित दृष्टि । ऐसा लगता था मानो वात्सल्य, करुणा का प्रवाह मेरी ओर उमड़ा पड़ रहा हो । 'माता' तो वही है न जो सन्तान को 'माफ' कर, उसकी समस्त दीनता, हीनता, त्रुटि, विच्युति, अबोधता, जड़ता, दुर्बलता आदि को क्षमा करते हुए उसे अपनाये रहे । ऐसी दिव्य 'माता' के सम्मुख अपने को पाकर कैसे पुलक का अनुभव कर रही थी, उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं । ऐसा लगता था कि सारी कुण्ठाएँ, सब संकोच समग्र जड़ता क्रमशः विगलित हो रही थी । पू. बाबूजी के साथ माँ प्राय-आध घण्टे तक विविध विषयों पर बातचीत करती रहीं । बीच-बीच में हम दोनों बहिनों का परिचय-प्रदान, 'अमर-वाणी' का सम्पादन भी बातचीत का विषय बनते रहे । विदा देने के पूर्व श्रीश्रीमाँ ने एक बार पुनः मेरा नाम पूछ लिया और कहा–"अब तो परिचय हो गया । अब जब भी आना चाहो आ सकती हो ।" उस कक्ष में जो दो-चार अनुगता बहनें खड़ी थीं उनसे भी माँ ने कृपापूर्वक कहा–"इसका नाम याद रखना । जब कभी यह आए तब मेरे पास बुला देना ।" मेरे दीर्घकालीन संकोच को श्रीश्रीमाँ ने एक वाक्य में ही बहा दिया । इतने में कोई लोग पुष्पमाला लेकर पहुँचे । तुरन्त बोलीं–"लो तुम्हारे लिए माला भी आ गई" और एक माला मेरे गले में डाल दी ।

इस अद्भुत 'दर्शन' की बात विमल बहन को मैंने तत्काल उनके हालैण्ड के पते पर लिख भेजी। उन्होंने मेरे 'भाग्य' की भरपूर सराहना करते हुए, अध्यात्म-जीवन में नवीन प्रवेश के लिए बधाई देते हुए उत्तर भेजा। मेरा 'भाग्य' क्या है? यह पूरा प्रसंग अहैतुकी कृपा के अतिरिक्त कुछ नहीं।

इस प्रथम दर्शन के बाद परीक्षा सम्बन्धी व्यस्तता, दिल्ली-यात्रा आदि में कई दिन यों ही बीत गये। इस बीच श्रीश्रीमाँ का जन्मोत्सव-पक्ष-आनन्द-ज्योति-मन्दिर की प्रतिष्ठा आदि की धूमधाम चलती रही। १५ मई को प्रातः अपने सहयोगियों (मुख्यतः सुहृद्वर पं. श्रीबलवन्तराय भट्ट) और संगीत महाविद्यालय के कुछ छात्र-छात्राओं द्वारा श्रीश्रीमाँ की सेवा में भजन-गायन का कार्यक्रम प्रस्तुत करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। माँ डेढ़ घण्टे के पूरे कार्यक्रम में 'स्टेज' पर ही विराजमान रहीं। और उनकी वही स्नेह–वात्सल्य-करुणापूरित दृष्टि पूरे समय मुझे आप्लावित करती रही। अन्त में उन्होंने हम सभी को माला, फूल, फल, मिष्ठान्न आदि का प्रसाद दिया और अत्यन्त प्रसन्नता व्यक्त की। मुझे पूछ लिया–"तुम श्रीगोपी बाबू (कविराजजी) के साथ आई थीं न।" मैंने कहा–"हाँ, माँ।" फिर तो दो दिन बाद श्रीश्रीमाँ का काशी से प्रस्थान हो गया और उस धूमधाम में पुनः दर्शन की सुविधा मिलना असम्भव था।

पू. पा. बाबूजी की इच्छा थी कि 'अमर-वाणी' की प्रस्तावना में मैं भी कुछ लिखूँ। लिखने बैठी तो और कुछ नहीं, श्रीश्रीमाँ के नाम-श्रवण से लेकर दर्शन तक की सभी घटनाएँ स्मृति-पटल पर उद्घाटित होती चली गईं। और क्या लिख भी सकती थी? श्रीश्रीमाँ का तत्त्व मैं अबोध क्या जानूँ? यही बार-बार लगता है कि अमर-वाणी का समागम, श्रीश्रीमाँ का दर्शन–यह सब कुछ कल्पनातीत है। इसमें मेरी अपनी योजना कुछ भी नहीं। इस अवसर पर श्री श्रीमाँ के चरणों में अनन्त प्रणति-निवेदन के साथ-साथ पू. पा. बाबूजी के श्रीचरणों में भी प्रणामाञ्जलि अर्पित करना चाहती हूँ,–जिनका अखण्ड अबाधित स्नेह गत सत्रह वर्षों में सदा-सर्वदा मुझ पर बरसता रहा है। दोनों ही जानते हैं कि मैं अध्यात्म-सम्पद् से हीन, अत्यन्त अकिञ्चन हूँ। दोनों की कृपादृष्टि सदा हृदय में 'अमृत' का सञ्चार करती रहे। अबोध सन्तान, जिसे कौड़ी और रत्न के मूल्य-भेद की प्रतीति नहीं है, जो रत्न को छोड़कर कौड़ी की ओर लपकती, उसी पर तो माँ का सर्वाधिक स्नेह होता है। यह अबोधता ही मेरी एकमात्र अधिकार-सम्पत् है। *

●

* [श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित "अमर-वाणी' ग्रन्थ से संकलित।]

महोत्सव की श्रृखंला

(एक-विवरण)

भारत की संस्कृति में यज्ञ का महान् स्थान रहा है । वैदिक युग में आर्यजाति के सामाजिक जीवन में अग्नि देवता का स्थान बहुत ऊँचा था । उस समय तीनों वर्ण और तीनों आश्रमों में किसी न किसी रूप में अग्नि परिचर्या और अग्नि उपासना प्रचलित थी ।

श्री श्री माँ के सान्निध्य में एकाधिक विराट् यज्ञों का अनुष्ठान हो चुका है । जिनमें १४-१-४७ से १४-१-५० तक तीन वर्ष व्यापी अखंड महायज्ञ सम्पन्न हुआ था । जिसमें एक करोड़ गायत्री महामन्त्र की आहुति प्रदान की गयी थी । उद्देश्य था विश्वकल्याण । इस यज्ञ का विस्तृत आद्योपान्त विवरण श्री गुरुप्रियादेवी लिखित अखंड महायज्ञ पुस्तक में मिलता है । जिसको पढ़ने पर यज्ञ देवता की प्रत्यक्षानुभूति से रोमांच हो आता है ।

श्री श्री माँ की पावन उपस्थिति में सन् १९८१ में कनखल अतिरुद्र अनुष्ठित महायज्ञ भी विधि-विधानानुसार विशेष आयोजन सहित सम्पन्न हुआ था अभी हॉल में ही महाकुम्भ के समय विष्णु यज्ञ अनुष्ठित हुआ था जिसका विवरण हमें यज्ञ की मुख्य उद्योक्ता आश्रम की वरिष्ठ ब्रह्मचारिणी वर्तमान आदरणीया पूर्णानन्दजी से इस प्रकार प्राप्त हुआ है ।

हरिद्वार में महाकुम्भ के अवसर पर कई अनुष्ठान आयोजित हुये थे । जिनमें 27 मार्च से ३१ मार्च तक होने वाले विष्णुयज्ञ का विशेष महत्त्व था । इस अनुष्ठान के लिये वाराणसी से ११ विद्वान होता आमन्त्रित किये गये थे । विद्वतप्रवर पं. वामदेवमिश्र आचार्य पद पर आसीन थे । ५ कलश स्थापित हुये थे । एक प्रधान कलश था । एक ही कुण्ड में आहुति दी गई थी ! यह यज्ञ कनखल आश्रम परिसर के अन्तर्गत नवनिर्मित अतिरुद्र यज्ञशाला में हुआ था । सन् १९८१ में श्री श्री माँ की उपस्थिति में यहाँ अतिरुद्र महायज्ञ का विशाल आयोजन किया गया था जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है । यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि यह यज्ञशाला शास्त्रीय विधान का एक अनुपम दृष्टान्त है ।

उक्त यज्ञशाला के मुख्य कुण्ड में २७ मार्च १९९८ की शाम को ११ ऋत्विगों के वेदोच्चारण तथा सुनिपुण आचार्यप्रवर के निदर्शन में अरणि मन्थन द्वारा अग्नि प्रकट हुई । २८ ता. के प्रातः से आहुति प्रारम्भ हुई एवं ३0 ता. को शाम तक प्रतिदिन प्रातः सायम् आहुति हुई । इसके साथ ही विविध वस्तुओं से अर्चना की गई जैसे २८ को १००८ तुलसी, १००८ पुष्प से, २९ ता. को १००८ रूमाल तथा ३0 ता. को १००८ फल तथा १००८ मिठाई से अर्चना की गई ।

इस वर्ष ठंड अधिक पड़ने के कारण तुलसी पत्र का अभाव रहा । पूर्णानन्द जी की इच्छा थी कि अतिरुद्र यज्ञशाला में पहली बार विष्णु यज्ञ हो रहा है । १००८ तुलसी की अर्चना होनी चाहिये । अतः तुलसी की खोज में कनखल, दिल्ली, वृन्दावन देहरादून, सर्वत्र फोन द्वारा पता करने पर भी

तुलसी की कोई व्यवस्था न हो सकी । पाले से सर्वत्र तुलसी नष्ट हो गयी थी । इस समय मोहनानन्दजी महाराज का यज्ञ हरिद्वार में हो रहा था, वहाँ से भी तुलसी पत्र के निमित्त लोग हमारे आश्रम में आ रहे थे । इधर तुलसी की खोज में पूर्णानन्दजी स्वयं हैरान थीं । उन्होंने यद्यपि १०८ स्वर्णतुलसी बनवाकर रखी थी, पर हरी तुलसी की महिमा कुछ और ही है ।

हरिद्वार में ही B.H.E.L. के परिसर में सुनीता बहन रहती है वे माँ के आश्रम से सम्बन्धित भी हैं । उन्होंने यज्ञ से पूर्व स्वप्न में श्री श्री माँ के दर्शन किये, माँ प्रसन्नमुद्रा में थीं । यज्ञ में उपस्थित दृष्टिगोचर हुईं । माँ ने सुनीता बहन की ओर संकेत करते हुये कहा, "पूछ लो यज्ञ में कुछ लगेगा तो नहीं ।" इधर जब तुलसी की खोज हो रही थी, तब ध्यानानन्दजी ने पूर्णानन्द जी का ध्यानाकर्षण करते हुये कहा, "जरा सुनीता से पूछ लें तुलसी की व्यवस्था कर सकेगी या नहीं । सुनीता बहन से पूछने पर उन्होंने आशातीत उत्तर दिया वे पर्याप्त तुलसी दे पायेंगी । एक मात्र पूरे B.H.E.L. परिसर में सुनीता बहन की तुलसी की क्यारियाँ हरी भरी हैं । बाकी सब नष्ट हो चुकी हैं । तुलसी की समस्या मिट गयी । तुलसी का अभाव सुनकर श्रीमती सुनन्दासेन (दिल्ली) ने ५ स्वर्ण तुलसी तथा २ स्वर्ण कमल अर्चना के निमित्त भेजा ।

यज्ञ में २०० ब्राह्मणों को भोजन कराया गया २८ ता. से प्रतिदिन ५० ब्राह्मणों को यज्ञ के निमित्त भोजन कराया जाता था साथ ही प्रति ब्राह्मण को मखमल में बंधी हुई एक पञ्चरत्न गीता, एक चाँदी की तुलसी दक्षिणा आदि के साथ भेंट चढ़ायी गयी । ३१ मार्च को अपरान्ह में विष्णु यज्ञ की पूर्णाहुति के अन्त में अवभृथ स्नान (यज्ञान्त स्नान) के साथ श्री माँ की कृपा से यज्ञ की परिसमाप्ति हुई । ३१ मार्च शाम को नव दुर्गा पाठ की भी परिसमाप्ति हुई । इस अनुष्ठान की पूर्णाहुति भी इसी कुण्ड में दी गयी । इस यज्ञ में शाकल्य एवं विविध शाकादि से आहुति दी गयी । यथा लौकी, नीम्बू, पालक आदि आहुति के रूप में अर्पण किये गये । इसी दिन प्रातः काल हवनात्मक लघु-रुद्री का अनुष्ठान हुआ था ।

इस महाकुम्भ के अवसर पर एक और विशेष अनुष्ठान का आयोजन किया गया । वह यह कि १८ अप्रैल से ६ मई तक अखण्ड महानाम संकीर्तन । वृन्दावन, बरसाना, दिल्ली आदि से कीर्तन मंडली आमन्त्रित की गयी थी जिसमें सुगायक भी थे । ६ ता. को नाम कीर्तन की समाप्ति के पूर्व कीर्तन मंडली नगर भ्रमण में गयी थी । आगे आगे भक्तप्राण गुलाब की पंखुड़िया छिड़कते जा रहे थे । नाम नामी अभेद की दृष्टि से ।

कीर्तन परिक्रमा गंगा के पुल के उस पार से यज्ञशाला, गंगा मंदिर आदि होती हुई सत्संग हॉल में पहुँची । इतने दिनों के नाम गान से एक अपूर्व तन्मयता आ गयी थी । सारा वातावरण नाममय हो गया था । नाम कीर्तन की परिसमाप्ति एक अलौकिक आनन्दमय परिवेश के साथ हुई । स्वयं कीर्तन गाने वालों ने अपना अनुभव सुनाया कि उन्हें इस प्रकार का आनन्द आगे कभी भी प्राप्त नहीं हुआ ।

केवल महाकुम्भ ही नहीं तीन उत्सवों का सम्मेलन था–महाकुम्भ, चैत्र नवरात्र एवं श्री श्री माँ का जन्मोत्सव, अंत में ७ ता. से नवान्ह रामायण का मधुर गायन प्रारम्भ हुआ । गायक मंडली थी श्री श्री माँ की प्रिय रामायण पार्टी के मुख्य गायकवृन्द श्री प्रकाशनारायण पाठक (दादा) बहन श्रीमती मालती भार्गव व योगेश शर्मा आदि । इस प्रकार मधुर रसमय परिवेश में उत्सव श्रृंखला समाप्त हुई ।

जय माँ

आश्रम-संवाद

कनखल– २८ अक्टूबर से ४ नवम्बर पर्यन्त प्रतिवर्ष की भाँति संयम सप्ताह का आयोजन किया गया था। परम पूज्य १००८ स्वामी चिदानन्द जी महाराज (अध्यक्ष-डिवाईन लाईफ सोसाइटी) २७ अक्तूबर को ही पधार गये थे आप सप्ताह व्यापी सम्पूर्ण कार्यकाल आश्रम में ही उपस्थित थे। आश्रम की साधु-कुटिया में आपका निवास था। पू. स्वामीजी प्रतिदिन प्रातः ८-९ एवं सायम् ३-४ बजे के मौन में उपस्थित रहते थे। रात्रि में ८ से ८:४५ आपके प्रवचन का समय था। इस समय में आप विविध देवी देवताओं के नाम का संकीर्तन भी कराते थे। एक अपूर्व भाव मय परिवेश की सृष्टि होती थी।

कैलास आश्रम ऋषीकेश के म. म. परम पूज्य श्री १००८ स्वामी विद्यानन्द जी महाराज ने प्रतिदिन १0-से ११ पर्यन्त उपनिषद् की सुललित व्याख्या की। आपने बृहदारण्यककोपनिषंद् में वर्णित प्राणोपासना पर विशेष दृष्टि डाली।

प्रतिदिन सायम् काल के मौन के उपरान्त ४ से ५ साधना सदन के श्री स्वामी परमेश्वरानन्द जी महाराज पुराण गाथा सुनाते थे। इस बार आपका विषय था पद्म पुराण।

५ बजे से गरीबदासी आश्रम के महामण्डलेश्वर श्री १००८ स्वामी श्याम सुन्दर दास जी अपने विचार प्रकट करके साधकों को उत्साहित करते थे। तदुपरान्त भोलागिरिआश्रम के महामण्डलेश्वर श्री १००८ देवानन्द जी महाराज अपनी गुरुगम्भीर सुललित वाणी में अध्यात्मपिपासुओं को ज्ञान मार्ग का उपदेश देते थे। इस बीच जगद्गुरु आश्रम के वयोवृद्ध महामण्डलेश्वर श्री १००८ स्वामी प्रकाशानन्दजी अपने विद्वत्तापूर्ण प्रवचन से जिज्ञासुओं की जिज्ञासा का समाधान करते थे। साधनासदन के नये महामण्डलेश्वर श्री १००८ स्वामी विश्वात्मानन्दजी ने भी कई दिनों तक अपने वेदान्त ज्ञान को सरल सहज शब्दों में व्रतियों में परिवेशित किया। वयोवृद्ध महन्त श्री गिरिधरनारायण पुरीजी प्रतिदिन प्रातः मौन के समय उपस्थित रहते थे।

प्रवचन के अतिरिक्त गीतश्री ६ छविबन्द्योपाध्याय के सुमधुर भक्तिसंगीत सुनने का अवसर व्रतियों को प्रतिदिन प्राप्त होता था। वरिष्ठब्रह्मचारिणी वर्तमान में भजनानन्द जी (पुष्पदी) ने प्रतिदिन दोनों समय मौन के पूर्व एवं पश्चात् संयम के निर्धारित कीर्तन को गाया।

संयम की परम्परानुसार दिनांक ४ नवम्बर को महामण्डलेश्वर एवं विशिष्ट महात्मागणों को भोजन कराया गया। उत्सव के अंतिम दिन सभी महात्माओं को परम्परानुसार भेंट दी गयी। यह कार्यक्रम आश्रम के वरिष्ठ कार्यकर्ता ब्रह्मचारी श्री पानुदा के निदर्शन में संघ के महासचिव स्वामी स्वरूपानन्द जी के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। स्वामी स्वरूपानन्दजी की अस्वस्थता के कारण इस कार्य में स्वामी भास्करानन्दजी एवं स्वामी निर्गुणानन्द जी का सहयोग भी लिया गया था।

इस वर्ष उत्सव के अंत में संघ की वार्षिक सभा में संघ के अध्यक्ष माननीय श्री गोविन्द नारायण जी द्वारा आश्रम के वयोवृद्ध वरिष्ठ ब्रह्मचारी श्री विरजानन्द जी महाराज, स्वामी भास्करान्द जी, स्वामी विजयानन्द जी आदि को शाल ओढ़ाकर विशेष सम्मान प्रदर्शित किया गया।

स्वामी भास्करानन्द जी विदेशियों के दीर्घ दिन के आमन्त्रण पर पाश्चात्य भ्रमण कर दो नवम्बर को वापस आये । आपने बताया कि सुदूर पश्चिम देशों में, छोटे-छोटे द्वीपों में भी श्री श्री माँ के नाम पर विभिन्न आश्रम चल रहे हैं । विदेशियों की माँ के प्रति अपार श्रद्धा को देखते हुये अवाक् हो जाना पड़ता है । आश्रम के वरिष्ठ ब्रह्मचारी निर्वाणानन्दजी भी विदेश भ्रमण कर ५ नवम्बर को वापस लौटे ।

केवल देश ही नहीं विश्व के कोने कोने में श्री श्री माँ की अपार महिमा को देखते हुये मूक होना पड़ता है ।

वाराणसी– वाराणसी आश्रम में १९ अक्तूबर को अन्नपूर्णा मन्दिर में श्री काली पूजा तथा २१ अक्तूबर को अन्नकूट का उत्सव भली भांति सम्पन्न हुआ । इस अवसर पर कलकत्ते के नवव्रत ब्रह्मचारी उपस्थित थे । सायंकाल श्रीमद्भागवत पर प्रवचन एवं भजन आदि होते थे ।

२६ नवम्बर से ३० नवम्बर पर्यन्त गीता जयन्ती का उत्सव प्रतिवर्ष की भाँति सम्पन्न हुआ ।

नई दिल्लीः– श्री श्री माँ के भक्तों द्वारा १९ एवं २० अक्तूबर को कालीपूजा का विशेष उत्सव अनुष्ठित हुआ । १९ ता. को काली मंदिर के प्रांगण में रात्रि के ९ बजे से ११ बजे तक भजन कीर्तन तथा रात्रि के ११ बजे से मध्यरात्रि के १ बजे तक पूजा हवन आदि सम्पन्न हुये ।

जमशेदपुर– नवनिर्मित आश्रम के मन्दिर में श्री माँ काली की विशेष पूजा सम्पन्न हुई । इस अवसर पर भक्त – समागम हुआ था । कीर्तन भजन व प्रसाद ग्रहण की सुव्यवस्था थी ।

उत्तर काशी– उत्तर काशी काली मन्दिर में १९ अक्तूबर ९८ सोमवार को विशेष प्रकार से काली पूजा सम्पन्न हुई । कार्यक्रम इस प्रकार था रात्रि के १0 बजे से पूजारम्भ । रात्रि शेष ३ बजे कुमारी पूजा । साढ़े-तीन बजे हवन सम्पन्न हुआ । सुबह १0 बजे से साधु भण्डारा तथा ११ बजे प्रसाद वितरण सम्पन्न हुआ ।

इस प्रकार श्री श्री माँ के सभी आश्रमों में विविध अनुष्ठान होते रहते हैं ।

●

आगामी उत्सवों की सूची

१.	मकर संक्रान्ति	–	१४ जनवरी
२.	वसन्त पञ्चमी	–	२२ जनवरी
३.	माघी पूर्णिमा	–	३१ जनवरी
४.	महाशिवरात्रि	–	१४ फरवरी
५.	फाल्गुन पूर्णिमा (होली)	–	२ मार्च
६.	चैत्र नवरात्र व वासन्ती पूजा	–	१८ मार्च से २५ मार्च

* * * * *

पूर्णिमा	एकादशी	आमावस्या
२ जनवरी	१३ जनवरी	१७ जनवरी
३१ जनवरी	२७ जनवरी	१६ जनवरी
२ मार्च	१२ फरवरी	१७ मार्च
३१ मार्च	२६ जनवरी	
	१३ मार्च	
	२७ मार्च	

●

स्मरणाञ्जलि

(१) विट्ठन देवी– श्री श्री माँ के वाराणसी आश्रम में आने-जाने वाले सभी भक्तों की दृष्टि पड़ती थी एक विशेष व्यक्तित्व पर वह व्यक्तित्व था एक धर्मप्राण वृद्धा का। अपने इष्टदेव प्रिया-प्रियतम की एकनिष्ठ सेवा ही जिनकी एक मात्र दिनचर्या थी। कमर झुक गयी थी शरीर लड़खड़ाता था फिर भी घुटनों पर हाथों को रखकर पूरी शक्ति लगाकर चलते हुये ठाकुर की नित्य सेवा अपने हाथों से करती थीं, नाम था विट्ठन देवी।

विट्ठन देवी का जन्म उन्नीस सौ के प्रथम दशक में हुआ था। आपके पिता रामनगर के साहूकार थे। तत्कालीन प्रथानुसार आपका विवाह किशोरावस्था में ही हो गया था। आप के पति वाराणसी के "साव" थे। पान की दुकान आपका मुख्य व्यवसाय था। विट्ठन देवी प्रारम्भ से ही धर्मप्राण थीं। आपके पतिदेव की इच्छा थी राधा-गोविन्द जी का एक मन्दिर बने। इसी अभिलाषा से आपने राधा गोविन्द की संगमरमर की मूर्ति खरीद कर रखी थी। पर उनकी इच्छा पूर्ण होने के पूर्व ही वे इस संसार से चल बसे। ठाकुर जी बक्से में ही बन्द रह गये।

पूजा-पाठ, मंदिर दर्शन, गंगा स्नान, यही आपका जीवन था। श्री श्री माँ के आश्रम में तीन-वर्ष व्यापी अखंड सावित्री यज्ञ चला। सम्पूर्ण काशी नगरी का आकर्षण का केन्द्र बना माँ का आश्रम। धर्मप्राण विट्ठन देवी भी आयी तथा चुनने बीनने के काम में हाथ बँटाया। शुरू हुआ आश्रम आने जाने का सिलसिला।

एक बार विट्ठन देवी श्री श्री माँ के पास पहुँचीं, माँ के चरणों में प्रणाम किया, माँ को वर्क लगे हुये ताम्बूल अर्पण किये। आपकी विशेषता यह थी कि आप कभी भी खाली हाथ नहीं आती थीं। श्री श्री माँ ने आपसे कहा, "माँ, तुम रोज आकर यहाँ प्रसाद लेना।" विट्ठन जी के शब्दों में -"माँ का कहना मना भी नहीं किया जा सकता, बिना कुछ सेवा किये भोजन पाना भी अपराध है। मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गयी। मैंने माँ से कहा, माँ मेरे लायक कोई सेवा बता दें। माँ ने अन्नपूर्णा जी के चावल बीनने को कहा। मैं आती थी चावल बीनकर चली जाती थी। प्रसाद पाती थी, कई वर्ष बीते। किसी दिन यह परम्परा भी टूटी। लड़के का विवाह हुआ बहू को गृहस्थी सिखाने में लगीं। प्रतिदिन नहीं तो कभी-कभी आतीं। पर माँ के काशी आने पर तो नित्य प्रति आती थीं। माँ भी बड़े प्यार से विट्ठन जी को माँ, माँ कहकर पास बुलातीं कुशल मंगल पूछतीं। हाथ भर कर प्रसाद देतीं।

एक दिन विट्ठन देवी ने स्वप्न में देखा कि ठाकुर जी कह रहे हैं और कितने दिन बक्से में बन्द रहेंगे। अब क्या था विट्ठन देवी खुद कहती हैं, "हाय हाय मैंने तो ठाकुर को भुला दिया था। अब क्या होगा। ठाकुर को कहाँ बिठाऊँगी। मेरे पास तो कुछ नहीं है।" वे दौड़ी दौड़ी माँ के पास आयीं।

माँ ने समस्या का समाधान कर दिया । माघी पूर्णिमा के दशक में ठाकुर जी की प्रतिष्ठा हुई । संगमरमर की सुन्दर मूर्ति राधा एवं गोविन्द । माँ ने कन्यापीठ के ठाकुर घर में काँच का मंदिर बनवाकर ठाकुर जी स्थापित करा दिया । कन्यापीठ की लड़कियों को पूजा एवं श्रृंगार का भार सौंपा गया । श्री श्री माँ की अपार करुणा से विड्ढन देवी द्रवित हो गयीं । उनके मन में आया मैं भी ठाकुर जी के लिये कुछ करूँ । ढूँढने पर उनके पास कुछ चाँदी के गहने मिले । उन्हें लाकर गुरुप्रिया देवी को देती हुई उन्होंने कहा – "दीदी इसे ठाकुर सेवा के लिये रख लो ।" दीदी ने कहा, "चाँदी से क्या करेंगे आप इन्हें बेचकर पैसे दे दें तो उसे बैंक में रख देंगे । उसके व्याज को पूजा में लगा देंगे ।" आपने गहनों को बेचकर करीब ५ हजार रुपया दिया, जिसे ठाकुर सेवा के लिये रख दिया गया । ठाकुर सेवा होने लगी विड्ढन देवी आतीं दर्शन करतीं श्रृंगार करतीं पान भोग लगातीं । बत्ती बनाना आपका अनिवार्य काम था । आते समय बत्ती बनाकर ले आतीं । वर्ष बीते ।

विड्ढनजी अब बुढ़ापे के दरवाजे पर पहुँचीं । सीढ़ी चढ़ना नामुमकिन था । असहायों के सहाय दीन दयामयी श्री श्री मां के पास पुनः फरियाद की । माँ ने तुरन्त व्यवस्था करवायी चण्डीमण्डप के पूर्व की दीवाल के बीच ठाकुरजी का स्थान बनवाया गया । ठाकुरजी वहाँ प्रतिष्ठित हुये । विड्ढन देवी भी घर का मोह त्याग ठाकुर जी की सेवा में आ गयीं । प्रारम्भ हुई उनकी दिनचर्या, प्रातः चार बजे ठाकुर जी को जगातीं मंगल आरती करतीं । तत्पश्चात् पूजा की व्यवस्था करतीं । पर्व आदि पर गंगास्नान तो था ही फिर सात से १० बजे तक अपलक नेत्रों से ठाकुर जी की ओर टकटकी लगायें जप करती । फिर उठकर पूजा के बरतन मलतीं । अपना कुछ काम करतीं । भोग के बाद पर्दा डाल कर फिर प्रसाद पातीं । थोड़ी देर विश्राम के उपरान्त तीन बजे आतीं अपना आनन्द सागर तथा रामायण पढतीं । चार बजे ठाकुर जी को उठातीं । फिर बैठ जातीं ठाकुर जी के पास, सन्ध्या के समय आरती उतारती चंन्दन घिसना, फूल ठीक करना सब वे स्वयं करतीं दूध गरम कर ले जातीं भोग लगातीं, रात्रि के नौ बजे शयन देतीं । फिर थोड़ा कुछ खाकर वे स्वयं विश्राम करतीं, पुनः तीन बजे उठकर चार बजे तक ठाकुरजी के दरवाजे पर पहुँच जातीं ।

आश्रम में कितने भी बड़े बड़े उत्सव क्यों न हों कितनी भी चहल पहल क्यों न हो विड्ढन देवी की दिनचर्या में तनिक भी परिवर्तन नहीं होता था कभी कभी जब वे अधिक बीमार हो जाती थीं तो स्वयं ही अस्पताल में जाकर भर्ती हो जाती थीं । किसी पर उनका बोझ रहे यह बिलकुल नहीं चाहती थीं । खुद का खर्चा स्वयं ही चलाती थीं ।

बाबा विश्वनाथ के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा थी प्रति दिन बिल्व पत्र पर लाल चन्दन से राम नाम लिखकर विश्वनाथ मंदिर में जाकर बाबा पर चढ़ाती थीं । शारीरिक दृष्टि से असमर्थ होने पर प्रति सोमवार को यह कार्य निर्धारित था । पर बाद में विशेष पर्वो तक ही सीमित रहा ।

प्रायः दो वर्ष पूर्व ऋषिकेश, दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्द जी से आपने गैरिक वस्त्र धारण किया । पू. स्वामीजी भी आप पर बड़ा ही स्नेह रखते थे ।

अभी नवरात्र के उपरान्त विद्दन देवी का शरीर कुछ अधिक ही असमर्थ हो रहा है यह समझ कर आपने आश्रम व्यवस्थापना से पूजा की व्यवस्था किये जाने का अनुरोध किया तथा अपने हाथों से सेवाकार्य छोड़ा पर नाम स्मरण तथा नेत्रों से दर्शन निरन्तर करती थीं ।

कार्तिक का महीना समाप्त हुआ । पूर्णिमा विगत हुई, एवं भक्तिमती साधिका विद्दन देवी सदा के लिये अपने परमधन राधे गोविन्द के चरणों में विलीन हो गयीं । ५ ता. नवम्बर १९९८ प्रातः नियम से तीन बजे शय्या त्यागा । सेविका से स्नानागार में ले जाने को कहा शौचादि से निवृत्त होकर स्वच्छ वस्त्र धारण किया । तत्पश्चात् मौन होकर आकर लेट गयीं । सूर्योदय हुआ भगवान् भास्कर अपनी परिक्रमा पर चले इधर विद्दन देवी की इहलीला समाप्त हुई ।

इस प्रकार एक तितिक्षामय साधक जीवन का अंत हुआ । श्री श्री माँ के चरणों में प्रार्थना है कि निष्ठापूर्णठाकुर सेवा का यह प्रत्यक्ष दृष्टान्त हम सबके जीवन में सदा आदर्श बन कर रहे ।

(२) श्री रमेश भाई पटेल – "श्री श्री माँ के प्राचीन भक्तों में मूलजी भाई पटेल के नाम से सभी परिचित हैं । श्री रमेश भाई पटेल इसी परिवार के हैं । आप लोग नाडियाद के संतराम मंदिर से विशेष रूप से सम्बन्धित हैं । श्री श्री माँ से भी आपका पुराना सम्बन्ध था । रमेश भाई मुख्यतः अमेरिका में ही रहते थे । पूज्य स्वामी भास्करानन्द जी की अस्वस्थता के उपरान्त आप सर्वदा ही भास्करानन्दजी के साथ उनकी सेवा में रहते थे । आपकी बहुत इच्छा थी कि पू. भास्करानन्द जी को एक बार पाश्चात्य भ्रमण कराने के साथ उनकी भली भाँति चिकित्सा दी जाय । अनेक बाधा विघ्नों के बाद गत १९९८ जुलाई को भास्करानन्दजी ने अमेरिका के लिये प्रस्थान किया करीब चार महीने विदेश रहने के उपरान्त गत २ नवम्बर को भास्करानन्दजी दिल्ली पहुँचे, आपके साथ रमेशभाई के स्थान पर उनके छोटे भाई कनुभाई पटेल आये । कनखल में संयम सप्ताह करके जैसे ही भास्करानन्दजी भीमपुरा पहुँचे इधर अमेरिका से सूचना प्राप्त हुई कि रमेश भाई की ऐहिकलीला समाप्त हो गयी । आपकी प्रतिदिन की सायंसन्ध्या का समय था ७:३० से ९:०० तक । १२ नवम्बर क़ो सन्ध्या करने बैठने पर आप और उठे नहीं । उसी परमात्मा में लीन हो गये ।
आपके सुपुत्र देवांग भाई पटेल अभी हाल ही में ७ दिसम्बर को अपने पिताजी का भस्मावशेष लेकर वाराणसी आये थे । आपके साथ संतराम मंदिर, नाडियाद के श्री हरिदास महाराज 'कन्नुभाई' पटेल, तथा कार्यकर्ता प्रकाश थे । आपलोग माँ के आश्रम में ही ठहरे थे । भीमपुरा आश्रम तथा अन्यान्य माँ के आश्रमों में श्री रमेशभाई के माध्यम अनेक आर्थिक सेवा प्राप्त होती थी । कन्यापीठ के प्रति आपका अत्यन्त स्नेह था, आपके अभाव में यथार्थ में आश्रम ने एक हितचिन्तक खो दिया । श्री श्री माँ के चरणों में यही प्रार्थना है कि आपकी दिवंगत आत्मा को चिरशान्ति प्राप्त हो ।

(३) डा. प्रेमलता शर्मा– डा. प्रेमलता शर्मा का श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रति बहुत बड़ा अवदान है– "अमर-वाणी" का सम्पादन । डा. शर्मा संगीत जगत् की एक जानी मानी हस्ती थीं । केवल वाराणसी ही नहीं अपितु पूरे देश भर में उनकी प्रतिष्ठा थी । परन्तु श्री श्री माँ के आश्रम में जब कभी भी हमने उनको देखा एक स्नेहमयी बड़ी दीदी की तरह । हमारी आदरणीया पद्माजी

संगीत से जुड़ी समस्याये-आपसे कहती थीं । आपने कन्यापीठ के लिये सर्वदा ही संगीत व सितार की अध्यापिकाओं की व्यवस्था की है । आप मातृदर्शन का प्रसंग बड़े मार्मिक शब्दों में लिखती है -" अगस्त, १९६७ में पूज्यपाद बाबूजी, (म.म. गोपीनाथ कविराज) की प्रेरणा से आश्रम के श्री पानुदा डा. सुश्री पद्मा मिश्र के साथ मेरे विभाग में मिलने आये । उन्होंने बतलाया कि मां की 'अमर-वाणी' का जो हिन्दी अनुवाद "आनन्द-वार्ता" में प्रकाशित हुआ था, उसे पुस्तकाकार में छापने की योजना है और उसके सम्पादन का कार्य मुझे सौंपने की इच्छा श्री कविराज जी ने प्रकट की है । उनकी इच्छा मेरे लिये आदेश थी । इसलिये अपने समस्त जगज्जंजालों की उपेक्षा करके तत्काल श्री पानूदा से कह दिया कि प्रकाशित सामग्री मेरे पास भिजवा दें । अगले ही दिन माँ अपनी वाणी के रूप में मेरे कमरे में पधार गईं । मन में हुआ - "यह भी खूब रही, जिनके "दर्शन" "श्रवण" के लिए आज तक ठीक-ठीक अवसर नहीं मिला । वे 'अक्षर' –देह में स्वयं ही मेरे पास आकर विराजमान हैं । सम्भवतः भगवान् की यही इच्छा है कि 'दर्शन' से पूर्व उनकी वाणी का "श्रवण-मनन' हो ।" इन शब्दों के साथ ही श्री श्री माँ के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा का परिचय प्राप्त होता है । आप ओंकारनाथ ठाकुर के साथ १९५६ में श्री श्री माँ की षष्टि-पूर्ति के अवसर संगीत का कार्यक्रम करने आयी थीं । श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रकाशन विभाग के साथ आप जुड़ी थीं ।

गत ५ दिसम्बर शुक्रवार की रात्रि को करौंदी स्थित आवास में हृदयगति के रुक जाने पे आपका निधन हो गया । आप ७१ वर्ष की थीं । खैरागढ़ स्थित इंदिरा गांधी संगीत कला विश्वविद्यालय की आप वाइस चांसलर रह चुकी हैं । आपके सम्बन्ध में पत्रकारों ने लिखा है कि, "आप ओंकारनाथ ठाकुर की शिष्या थीं, लेकिन उन्होंने संगीत को प्रदर्शन कला के रूप में अपनाने की जगह उसके शास्त्र में अधिक रुचि ली । विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शास्त्र के अध्ययन की व्यवस्था बनाने में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा ।

आज उनके अभाव से श्री श्री आनन्दमयी संघ के प्रकाशन विभाग ने सुयोग्य परामर्शदाता खो दिया । श्री श्री माँ के त्रितापहारी चरणों में यही प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को चिरशान्ति प्राप्त हो ।

●

प्रकाशन सूची

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित श्री श्री माँ से सम्बन्धित कुछ अमूल्य प्रकाशन संघ के प्रायः सभी शाखा आश्रमों में विक्रय के लिए उपलब्ध हैं ।

1. PICTORIAL BIOGRAPHY OF MA ANANDAMAYEE—

श्री श्री माँ की सम्पूर्ण जीवन गाथा शब्दों तथा चित्रों में अंकित, यह एक निराला ग्रन्थ है । उत्तम कागज पर छपा एवं बहुसंख्यक आर्ट प्लेट्स से युक्त । सजिल्द, मूल्य, ४५०/-

2. आनन्दज्योति (शताब्दी स्मारिका)

यह एक उच्च कोटि का संस्करण है, जिसमें विभिन्न भाषाओं–संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में श्री श्री माँ की पवित्र जीवनानुक्रमणिका (१८९६ से १९९२), १०० अमूल्य वाणियों एवं श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रम एवं संस्थाओं का इतिहास, साथ ही स्वनामधन्य विद्वानों के लेख, विशेष संदेश एवं श्रद्धाञ्जलि सहित श्री श्री माँ के कतिपय मूल्यवान् चित्रों का संकलन है । अति उत्तम कागज पर छपा है । पेपर बैक, मूल्य रु. १००/-

3. माँ आनन्दमयी दिव्यालोक वार्ता–

हिन्दी भाषा में ब्र. गुणीता द्वारा लिखित माँ की जीवन-कथा का संक्षिप्त चित्रण तथा शतवाणी । पेपर बैक, मूल्यं १०/-

4. सद्वाणी–

हिन्दी में अनूदित श्री श्री माँ की मूल्यवान वाणियों का संग्रह । श्री ज्योतिषचन्द्र राय द्वारा संकलित । पेपर बैक, मूल्य रु. १०/-

5. माँ आनन्दमयी–

डॉ. पन्नालाल, आई. सी. एस. (रिटायर्ड) द्वारा हिन्दी में लिखित माँ का अपूर्व जीवन चरित । पेपर बैक, मूल्य रु. २०/-

6. IN YOUR HEART IS MY ABODE—

डॉ. बीथिका मुखर्जी द्वारा अंग्रेजी में लिखित श्री श्री माँ का संक्षिप्त जीवन चित्र । पेपर बैक, मूल्य २०/-

7. MATRI VANI—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. १५/-

8. WORDS OF ANANDAMAYEE MA—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । आत्मानन्द (मिस ब्लैंका श्लाम) द्वारा संकलित एवं अंग्रेजी में अनूदित । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

9. MOTHER AS SEEN BY HER DEVOTEES—

श्री श्री माँ के सम्बन्ध में स्वनामधन्य विद्वानों तथा माँ के विशिष्ट भक्तों द्वारा लिखित मूल्यवान् निबन्धों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

मातृ श्री चरण-कमलों में
कोटि कोटि साष्टांग प्रणाम

❋

—M.P. Murarka
BOMBAY

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6840365)

16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 327835)

17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.

18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)

19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)

20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.

21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.

22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)

23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442–64343)

24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)

2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS
FOR INDIA AS NO. 65432/97

श्री श्री आनन्दमयी संघ
ॐ माँ
मातृ शरणं

रत्ना ऑफसेट्स लिमिटेड कमच्छा, वाराणसी, फोन–३९२८२०

माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

VOL. 3 APRIL 1999 NO. 2

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009
U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalyanvan, 176, Rajpur Road,
P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok,
P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir
P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–३ अप्रैल, १९९८ सं.–२

✤

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)
भारत में – ६0 रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४00 रुपये
एक प्रति – २0/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

●

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

नवीन प्रकाशन

ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया—एक सचित्र जीवनी

आदरणीया गुरुप्रिया दीदी की जन्मशताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह एक उच्चकोटि का प्रकाशन है । अनेक दुर्लभ चित्रों से युक्त यह गुरुप्रिया दीदी की सचित्र जीवनी विशेष रूप से प्रकाशित हुई है । आर्ट पेपर में प्रकाशित विशिष्ट चित्रों की संख्या १३४ है । साथ ही प्रबुद्ध साहित्यिक हिन्दी भाषा में गुरुप्रिया दीदी की जीवनी भी लिखी गई है । इस पुस्तक के प्रकाशन से दीदी गुरुप्रिया की जीवनी, माँ के साथ उनका प्रथम साक्षात्कार, श्री श्री माँ के चरणों में पूर्ण समर्पण, उनके प्रति माँ की अपरम्पार करुणा का वर्षण तथा उनकी महिमामय जीवनशैली का सचित्र परिचय उपलब्ध होता है । यह पुस्तक पाठकों के लिगे प्रेरणास्रोत होगा । यह कृति माँ के भक्तों को परितोष दे सकेगी । यह मातृ भक्ति रूपी स्नेह से प्लावित गुरुप्रिया रूपी वर्त्तिका को आलोकित करता हुआ एक उज्ज्वल दीप स्वरूप है । मातृ भक्तों को केवलमात्र १००/- रु. मूल्य पर यह पुस्तक उपलब्ध करायी जा रही है ।
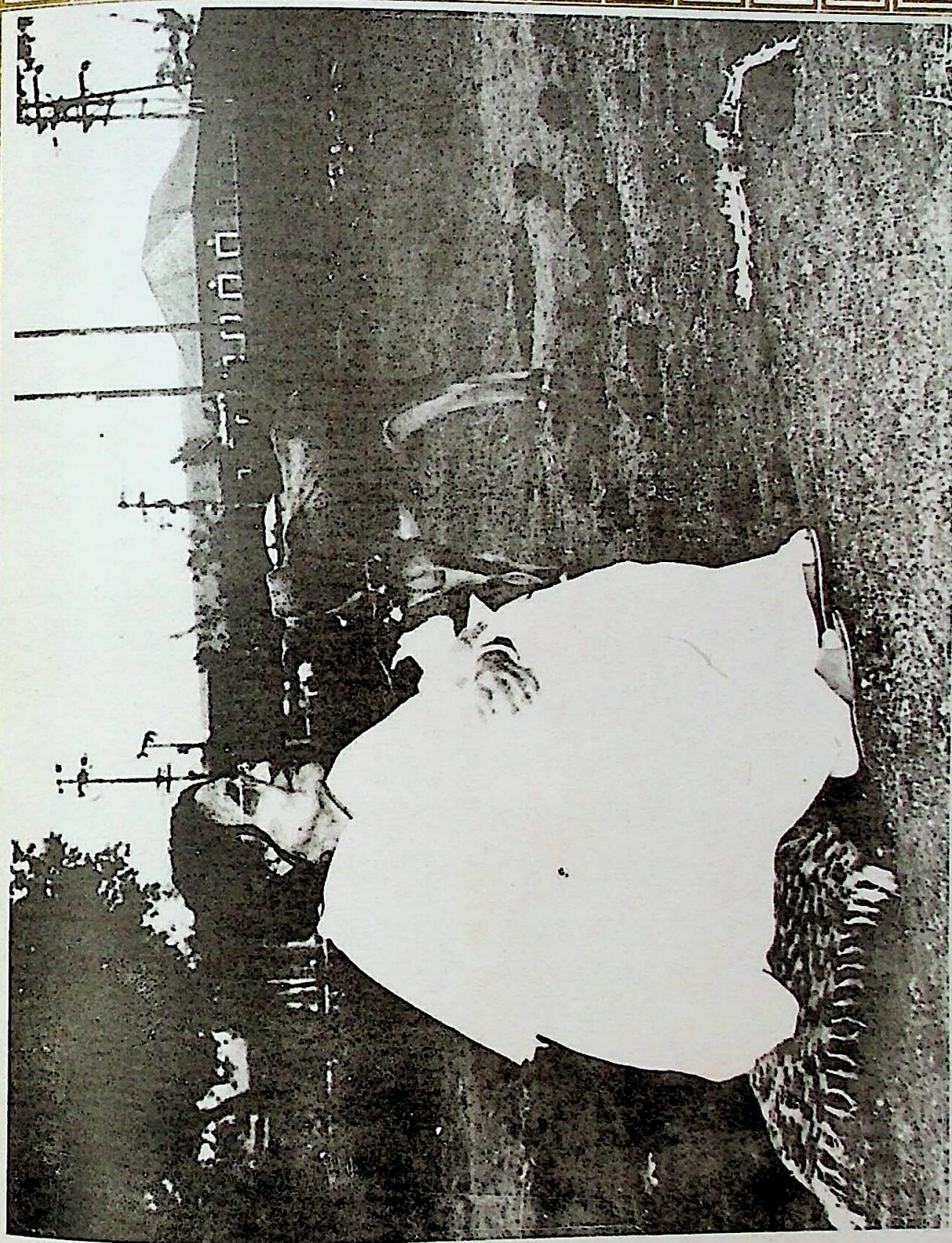
मातृ-वाणी

जितना अधिक भगवान का चिन्तन किया जाय उतना ही लाभ, संसार जहाँ, अभाव वहाँ. मन को उनके चरणों में इच्छा से अनिच्छा से लगाये रहने पर शांति मिलने की आशा है ।

*   *   *

अखण्डभाव से भगवत् चिन्ता में लगे रहना, तभी तो अखण्ड प्रकाश । अपने मन को हर समय भगवत् चिन्ता के अनुकूल रखना होगा । यही मन का सु खाद्य है ।

*   *   *

सर्वदा कोई एक जप मन ही मन करना । निश्वास प्रश्वास खाली न जाय । चुप रहकर जब बैठे रहते हैं, तब भी निश्वास प्रश्वास में जप चलता रहे ।

*   *   *

यह स्मरण रखो कि नाम और उनका एक जप कम से कम, उनका संग करना । उन्हें छोड़ कर मत रहना ।

*   *   *

जितना प्रयत्न करोगे उतना ही आनन्द पाने की आशा है । जब मन एकदम से चुपचाप हो जाता है, तब कम से कम उनके स्मरण और ध्यान की चेष्टा करना ।

*   *   *

भगवत् कथा के आनन्द में रहना ही मनुष्य का कर्तव्य है । "उन्हें छोड़कर" मन में यह सोचने पर ही दुःख होता है । मन्त्र जप के रूप में हो, ध्यान, पूजा-पाठ, स्मरण आदि रूपों में हो, भजन कीर्तन के रूप में हो वे स्वयं स्थित रहते हैं । कोई एक लेकर रहो, उनको छोड़कर रहना नहीं । इसे याद रखना ।

*   *   *

उन्हें पुकारना उन पर निर्भर रहना । जहाँ भी रहो उनकी गोद में, जगत् में सुख पाना चाहते हो तो उनको पाने की इच्छा करो । संसार का क्या रूप है, देख तो रहे हो । दिन प्रतिदिन दुःख का सागर आता जा रहा है । इसी को संसार कहते हैं ।

*   *   *

विराट् जगत् को खण्ड खण्ड न देखकर समष्टि रूप में देखो, तो इस सम्बन्ध में और कि
तरह के सन्देह का स्थान न रहेगा । जो अपना सम्मान करना जानता है, वह दूसरे का उससे
अधिक सम्मान करता है । सम्मान के बिना श्रद्धा नहीं आती है, श्रद्धा न होने से प्रेम जाग्रत न
होता, इसलिये प्रेम के अभाव के कारण प्रेम के ठाकुर बहुत दूर रह जाते हैं । उनका कोई प
नहीं मिलता ।

* * *

धन दौलत किस लिये है ? हमारी जीविका, पुत्र और परिवार के भरण-पोषण के लिये है, पु
परिवार किसलिये हैं; सीधी तरह से जवाब देने पर कहना होगा "हमारे लिये" उसके बाद य
प्रश्न किया जाय कि यह "मैं" कौन है ? तो कोई उत्तर न मिलेगा । यह हुई तुम्हारी बुद्धि की है
"मैं कौन हूँ ।" एक बार अच्छी तरह चिन्ता कर देखो तो देखोगे कि पोथी-पत्रों में, स्कूल-कालेज
बैठकर तुमने जो कुछ पढ़ा है या कर्म क्षेत्र में जो ज्ञान प्राप्त किया है उसके भीतर इसका क
जवाब नहीं है । "मैं और मेरा" का सन्धान पाने के लिये पुरानी चिन्ताधारा को बदलकर उसी ए
तत्त्व की साधना में मनोयोग देना होगा । जब चित्त चञ्चल हो, तभी दृढ़ता से उसे दमन क
रखना होगा । यही आत्म दर्शन का उपाय है ।

* * *

भजन किसे कहते हैं, जानते हो ? भाव का प्रकाश ही भजन होता है ।

* * *

पिताजी, तुम तो अनन्त हो । तुम्हारे भीतर अनन्त भाव, अनन्त मूर्त्तियाँ हैं । देखते नहीं, ए
छोटे से बीज के भीतर कितना बड़ा पेड़, फल, कितने बीज रहते हैं, उसका क्या अन्त है ? भ
तो अनन्त हैं, वे ही तो सभी रूपों में हैं न ।"

* * *

एक वे ही सब हैं । एक के अलावा दो नहीं है । रोग शोक में एक मात्र उनका ध्यान कर
उनके नामों का जप करना चाहिये ।

* * *

परम पति ही तुम्हारे पति हैं । उनकी ओर लक्ष्य रखो, तुम्हारा जन्म इसीलिये हुआ है ।

श्री श्री माँ के जीवन का आदर्श

[गुरुप्रिया दीदी की लेखनी से]

माँ के जीवन पर दृष्टि डालने से मालूम होता है कि वे सदा से ही पूर्ण भाव से लीला करती रही हैं। जब उन्होंने लड़की का पार्ट किया तब माता-पिता की अत्यन्त आज्ञाकारी रहीं। उन्हें गुरु समान समझती थीं। पास-पड़ोसी भी माँ से बड़ा स्नेह करते थे। जरूरत पड़ने पर वे पड़ोसियों के घर जाकर भोजन बना आतीं थीं, और भी दूसरे काम कर दिया करती थीं। सभी कामों में चतुरता का पता लगता था। गरीब की लड़की होने पर भी माँ के सहज और सरल व्यवहार एवं सुन्दर स्वरूप के कारण सभी बाल्यकाल से ही माँ से स्नेह करते थे।

मातृ-आज्ञा-पालन की एक छोटी सी घटना लिखती हूँ। एक दिन माँ एक पत्थर की कटोरी धोने तालाब पर गयीं। जाते समय माँ की माँ (नानीजी, भक्तों में दीदी माँ के नाम से परिचित) ने कहा, "देख यदि हो सके तो तोड़ कर लेती आना"। यह उन्होंने सावधानी बरतने की दृष्टि से कहा था परन्तु सचमुच ही वह कटोरी माँ के हाथों से गिरकर टूट गयी। माँ ने बड़े यत्न से उसके सब टुकड़े बटोर कर धोए और दीदी माँ के पास ले आयीं। दीदी माँ ने कहा, "यह क्या है ?" "माँ ने कहा, कटोरी मेरे हाथ से गिरकर टूट गयी। तुमने जो कहा था कि लेती आना इसी से सब टुकड़े लेती आयी हूँ।" उस समय माँ की अवस्था बहुत छोटी थी। इस बात से दीदी माँ कटोरी टूटने पर क्रोध न कर सकीं और हँसने लगीं।

अब भी देखती हूँ पिता के पास वे ही पुत्री हैं। कहीं भी आने-जाने के समय यदि पिता उपस्थित रहते तो दोनों हाथों से उनके दोनों पैर पकड़ कर मस्तक पैरों पर रखकर प्रणाम करती थीं। फिर जब बहू बनीं तो जेठ-जेठानी की सेवा और उनके बच्चों का पालन बड़े नियमित रूप से यत्नपूर्वक करती थीं। सांसारिक कामों में देखने में तो इतनी लिप्त जान पड़ती थीं कि उन्हें अपने शरीर तक का ध्यान नहीं रहता था। इसके कारण कई बार बीमार भी हो गयी थीं तब भी वधू के कर्तव्य में तनिक त्रुटि नहीं होती थी। जेठानी का यथायोग्य सम्मान करते तो हम लोगों ने भी देखा है।

फिर जब गृहिणी बनीं, तब पति की सेवा को ही जीवन का सर्वश्रेष्ठ कार्य समझ कर स्वीकार किया। पति के चरणों में ही अपने को लीन कर दिया। मैंने माँ को भोलानाथ जी की आज्ञा का इस प्रकार पालन करते देखा है जो किसी साधारण मानवी स्त्री से सम्भव नहीं है। माँ की तुलना स्वयं माँ ही हैं। माँ कौड़ी भी बहुत खेलती थीं। जब माँ पिता के घर पर थीं, तब भोलानाथ जी ने कौड़ी खेलने पर अपनी असहमति प्रकट की बस तभी से माँ ने इस खेल को एकदम छोड़ दिया। सहेलियों के जबर्दस्ती करने पर भी कभी खेलने नहीं बैठीं। यद्यपि भोलानाथ जी उस समय अन्यत्र रहते थे, माँ के खेलने से भी उन्हें पता न चलता। पर ऐसा करना माँ के स्वभाव-विरुद्ध था।

बाजितपुर में जब शरीर आदि की क्रियायें प्रारम्भ हुईं तब भी भोलानाथ जी की सेवा में कोई त्रुटि नहीं हुई । उनको खिला-पिलाकर दफ्तर भेजने तक ही वह निश्चिन्त नहीं होती थीं बल्कि शाम को लौटकर वे हाथ मुँह धोएँगे उसके लिए भी पानी और तौलिया ठीक करके रख देती थीं । तब अपने भजन के लिए बैठतीं । उठते-उठते शाम हो जाती तब गृहिणी के काम धूप-दीप लक्ष्मी का आसन इत्यादि सब व्यवस्था करके फिर भोजन बनाने के काम में लगती थीं । भोजन बनाकर भोलानाथ जी के लिए पान-तम्बाकू सब तैयार कर देतीं । उनके सो जाने पर माँ रात को अपने भजन के लिये बैठतीं । शायद भजन समाप्त करते, खाते-पीते रात्रि शेष हो जाती थी । ऐसे ही दिन-रात के बीच उनका भोजन होता था ।

माँ भोजन बड़ा अच्छा बनाती थीं । भोलानाथ जी अपने पड़ोसियों को अक्सर खिलाया करते थे । वे लोग भी इससे बड़े प्रसन्न होते थे । माँ और भोलानाथ जी दोनों को ही देखा है कि लोगों को खिलाकर बड़ा आनन्द पाते थे । अशुद्धता माँ के स्वभाव-विरुद्ध थी । माँ का काम-काज, घर, दरवाजा, बिछौना, कपड़ा एवं शरीर सर्वदा शुद्ध और स्वच्छ रहते थे । माँ अपने ही हाथों से सब साफ करती थीं । अचार रखना, अमावट बनाना किसी में भी माँ की त्रुटि नहीं होती थी । गृहिणी के जो काम हैं वे उन्होंने बड़ी सुन्दरता से निभाये हैं । ननद और देवर के लिए वे रहस्यमयी भावज थीं । यद्यपि यह सब लीला थोड़े ही दिनों में समाप्त हो गयी । तब भी जितना कुछ किया सो सब पूर्ण । यहाँ तक कि ननद और देवर माँ के व्यवहार को देख उन्हें 'देवी' समझने लगे ।

माँ के हाथों से बने हुए लेस और कालीन आदि बड़े ही सुन्दर होते थे वह अब भी मेरे पास हैं । माँ ने चरखे से सूत कात कर कपड़ा भी तैयार किया है । गृहिणी अवस्था में माँ ने सब काम किये हैं । यद्यपि माँ का गृहिणी जीवन बहुत दिनों तक नहीं रहा, फिर भी उतने ही दिनों में सब कर दिखाया । एक आश्चर्य की बात और है कि माँ साधारण गृहवधू होने पर भी उनकी घनिष्ठता बड़े-बड़े परिवारों से थी । माँ का अलौकिक स्वरूप एवं भीतरी आकर्षण शक्ति ही इसका कारण थी । भूदेव बाबू के पहले जो इस पद पर थे उनका नाम था रास बिंहारी घोष, इनकी स्त्री भी माँ को बहुत प्यार करती थीं । माँ उन्हें मौसी सम्बोधन करती थीं । इन रासबिहारी बाबू की लड़की ही माँ की उषा दीदी थीं ।

इस तरह माँ ने गृहस्थ जीवन की लीला थोड़े ही दिनों में समाप्त कर दी । फिर जब आश्रम वासिनी होकर जगत की माँ के भाव में लीला आरम्भ की तो वह भी अभूतपूर्व है । भोलानाथ जी जब शाहबाग में नौकरी करते थे, तब रायबहादुर योगेश बाबू के घर से कोई आता तो माँ उसका विशेष आदर सत्कार करती थीं क्योंकि योगेश बाबू ही भोलानाथ जी के कार्यक्षेत्र के मालिक थे । सिद्धेश्वरी के महन्त के घर की स्त्रियों के आने पर भी माँ उनका विशेष आदर सत्कार करती थीं क्योंकि वे लोग जमीन्दार की प्रजा (बाबाभोलानाथ तदानीन्तन, शाहबाग की देख-भाल में नियुक्त थे) के घर आते थे । बाद में जब माँ अपने आप काम नहीं कर सकती थीं तब हम लोगों से करवाती थीं । रायबहादुर योगेश घोष में जब माँ के प्रति कुछ श्रद्धा का भाव उत्पन्न हो गया, तब भी देखा है माँ पहले की तरह उनके बगीचे में आने पर घर के भीतर चली जाती थीं । बाद में जब योगेश

बाबू ने माँ को देखना चाहा तो भोलानाथ जी ने जाकर माँ से कहा तब माँ घूँघट डाल कर धीरे-धीरे बाहर आकर बैठती थीं। फिर योगेश बाबू के भाव में परिर्वर्तन होने के साथ ही साथ माँ के व्यवहार में भी परिवर्तन हो गया। बाद में निःसंकोच भाव से उनसे मिलतीं। वे भी माँ पर गुरु भाव से श्रद्धा रखते थे। माँ की सभी क्रियायें इसी प्रकार ठीक-ठीक समयानुसार प्रकट हो जाती थीं। इसी से माँ कहती थीं, "तुम लोगों के भावानुयायी होने से मेरे शरीर में परिवर्तन अपने आप हो जाता है। इसमें मेरी अपनी इच्छा या कर्तव्य कुछ भी नहीं है।" इस प्रकार माँ ने सभी लीलाएँ बड़ी ही सुन्दरता से कीं। कहीं भी त्रुटि नहीं दिखती। वे पूर्ण हैं उनका कोई भी काम अधूरा नहीं होगा।

माँ ने उपदेश देते समय भी अनेक बार कहा है, "जिस समय जो काम करूँगी, जी-जान से करूँगी। वह काम छोटा हो या बड़ा, उससे मेरा कुछ बनता बिगड़ता नहीं। माँ के मुँह से ही सुना है कि उन्होंने पुस्तकें आदि कुछ नहीं पढ़ीं। लिखना-पढ़ना बहुत थोड़ा जानती हैं। इस पर भी धर्म पुस्तक थोड़ी सी सुनते ही जाने कैसी हो जाती हैं। एक बार अष्टग्राम में माँ को एक सज्जन ने (माँ उनको भाई की तरह मानती थीं और वे माँ को लाल दीदी के नाम से बुलाते थे। यह नाम अष्टग्राम में शायद माँ की सुन्दरता के कारण कुछ लोगों में प्रचलित था।) एक धर्म पुस्तक पढ़ कर सुनायी थी। थोड़ी ही देर में माँ की अवस्था बदलती देखकर पूछा, किन्तु माँ के कान में कुछ सुनायी नहीं दिया, वे स्थिर भाव से बैठी रहीं। तब वे धीरे-धीरे किताब लेकर उठ गए और फिर कभी उन्होंने किताब पढ़ कर सुनाने का प्रयत्न नहीं किया।

माँ जिसको एक बार देख लेतीं, फिर उसे भूलतीं नहीं। चाहे बहुत लोगों के बीच में देखें, चाहे दूर रास्ते में देखें परिचय भी न हो, फिर भी यदि वह आदमी बहुत दिन बाद आता तो माँ यह बता देतीं कि एक दिन रास्ते में देखा था।"

गुरुप्रिया दीदी ने एक जगह माँ की बातों को लिखने के प्रसंग में लिखा है – "मेरा विश्वास है कि इस स्मृति से मन का मैल जितना कटता है, बहुत पूजा, जप आदि से भी उतना नहीं कटता। पूर्व जन्म की प्रचुर तपस्याओं से श्री श्री माँ के चरण दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, इसमें सन्देह नहीं है।"

●

[नोट :– "श्री श्री मां आनन्दमयी" तीसरे भाग - - - से उद्धृत]

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

– श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त

सूक्ष्म देह द्वारा मुक्तिबाबा के पास जाकर रोग यन्त्रणा से उनका उद्धार करना –

गुरुप्रिया दीदी– एक प्रसंग आपलोगों को सुनाती हूँ ।

माताजी – इस समय तेरे लिये रात नहीं होती है न ? (सभी की हँसी)

दीदी – (हँसकर) गत १४ फरवरी रात को प्रायः ३ बजे माताजी ने मुझे बुलाकर, कहा मैं देख रही हूँ कि मुक्ति बाबा पैर की पीड़ा से अत्यन्त आतुर हो रहे हैं, यह शरीर उनके कंधे पर सिर रखकर उनके दर्द की जगह पर हाथ रखे हुए है । माताजी का हाथ किस प्रकार रखा हुआ था यह माताजी ने एक सुन्दर मुद्रा द्वारा दिखाया । बाद में माताजी कहने लगीं, " इस समय देखती हूँ कि दीदी मुझे लेने आयी हैं । उसको देखकर मुक्तिबाबा के कंधे से सिर उठाते हुए मैंने कहा, "पिताजी कैसे हैं?" बाबा- "माँ, देह का अवसान हो जाय ऐसी इच्छा होती है ।" पिताजी के मन की भावना ऐसी थी, यदि हाथों के पास किसी प्रकार का जहर उन्हें मिल जाय तो उसे खाकर वे जीवन समाप्त कर देंगे । मैंने पिताजी की बात सुनकर कहा, "पिताजी, बोलिए ऐसी बात और मुँह से नहीं निकालेंगे ।" बाबा ने कहा, "तब आप कहो, आप मुझको छोड़कर नहीं जायेंगी ।" यह सुनकर मैंने (माँ ने) जोर देकर कहा, "नहीं, नहीं, नहीं । ऐसा प्रश्न हो ही नहीं सकता । यह तो नित्य सम्बन्ध है ।" उन्होंने तीन बार यह बात मेरे मुख से निकाल ली एवं इसके बाद ही उनको आराम मिला ।" दीदी कहती हैं – माताजी ने मुझे बुलाकर इस दर्शन की बात कही । इतने दिन मुक्ति बाबा के बारे में हमें अच्छी खबर ही मिल रही थी । उनके पैर में तब तक प्लास्टर नहीं चढ़ा था । चिकित्सक गण जान बूझ कर देर कर रहे थे क्योंकि प्लास्टर करने से हड्डी बहुत दिनों तक नरम रहती है । मुक्तिबाबा की खबर अच्छी ही आ रही थी । इसी समय माता जी ने ऐसा देखा । शीघ्र ही दूसरे प्रकार की खबर आयेगी ऐसा हमने अंदाजा लगा लिया था । इस घटना के दो दिन बाद ही कुसुम (ब्र. निर्वाणानन्द) के पत्र द्वारा सूचना मिली कि गत १४ फरवरी रात को मुक्ति बाबा के पैरों में असह्य यन्त्रणा हुई । चिकित्सक इसका कारण पहले समझ न पाये, जो रॉड मुक्तिबाबा के घुटने के भीतर घुसा कर उसके साथ खींच कर बाँधा गया था वही रॉड टूटकर घुटने के भीतर घुस गया, और उसी कारण टूटी हुई हड्डी पर दवाब पड़ रहा था । इसी से उस दिन असहनीय पीड़ा हो रही थी । जो भी हो मुक्ति बाबा अभी ठीक ही हैं । इस प्रसंग को सुनकर मैंने कहा, "माताजी, आपके दर्शन की बात तो एक प्रकार समझ गया । पर मुक्ति बाबा के साथ आपकी जो बातचीत हुई है, उसका आशय स्पष्ट नहीं हुआ । मुक्तिबाबा ने आपसे विनती की आप मुझे छोड़कर नहीं जाइयेगा, उसके जबाब में आपने कहा, "ऐसा प्रश्न ही नहीं हो सकता ।" इसका स्पष्ट अर्थ तो यह है कि आपके लिए तो दो का प्रश्न ही नहीं है अतः उक्त बात का प्रश्न आपकी

दृष्टि में हो ही नहीं सकता । परन्तु इससे मुक्तिबाबा का कौन सा प्रयोजन सिद्ध हुआ तथा हमलोगों का भी क्या होगा ? इससे हम लोगों को शान्ति क्यों मिलेगी?

माताजी– मुक्तिबाबा को यह बात कहकर इस शरीर के साथ वे अभिन्न हैं इस ज्ञान की सूचना तब कर दी गयी साथ ही उन्हें एक ऐसी स्थिति दे दी गयी जिसके फलस्वरूप उसी समय उन्होंने मन में शक्ति का अनुभव किया । यद्यपि यह थोड़े ही समय के लिए है । तुमको भूख लगने पर भोजन दे दिया जाय तो तुम्हारी भूख मिट जाती है । यह भी उसी प्रकार है । पर इसका अर्थ यह नहीं है कि तुम्हें और भूख ही नहीं लगेगी । इसके अलावा उनके टूटे पैर पर मेरा हाथ रखा था यह बात भी कही गयी है ।

रात अधिक देख हमलोग उठकर चले आये ।

हरिद्वार में शिवरात्रि–

बंगाब्द १० फाल्गुन, शनिवार २३-२-५२ । आज सोलन के राजा साहब ने नर्मदेश्वर शिव की प्रतिष्ठा की । पिछले दो दिनों से पूजा, यज्ञ इत्यादि शिव प्रतिष्ठा के नानाविध आनुषंगिक कार्यक्रम चल रहे थे । आज दोपहर प्रायः १ बजे शिवलिंग मन्दिर में प्रतिष्ठित हुए । शिवचतुर्दशी होने के कारण आज हम सब उपवासी हैं । रात्रि में शिवमन्दिर में तो पूजा हुई ही साथ ही मन्दिर के पश्चिम ओर के बरामदे में विद्यापीठ के बालकों ने तथा दक्षिण बरामदे में अन्यान्य भक्तमहिलाओं ने पूजा सम्पन्न की । आश्रम के हॉल में भी प्रायः सारी रात कीर्तन चलता रहा । प्रथम प्रहर की पूजा के बाद माताजी ने मुझे बरामदे में ले जाकर मेरे भाल पर भस्म लगा दिया तथा गले में रुद्राक्ष की माला पहना दी, और माला जपने को कहा । मैं माला जपना नहीं जानता अतः कैसे जप करना है वह भी सिखा दिया । मैं माताजी को प्रणाम करके चला आया । बाद में सुनने में आया कि माताजी ने आज सभी के भाल पर भस्म लगा दिया तथा किसी किसी को रुद्राक्ष की माला दी ।

रात्रि शेष में पूजा के समय माताजी ने मुझे बुला भेजा, एवं मेरे मंदिर में उपस्थित होने पर मुझे पूजा के सामने बैठने को कहा । इतनी देर मैं हॉल में ही था कारण बाहर काफी ठंड थी । बाहर की ठंड़ बरदाश्त नहीं होगी इसीलिये मैं मन्दिर की पूजा के सामने नहीं बैठा, यद्यपि माताजी ने प्रायः सारी रात यहीं बितायी । माँ के पास बैठने पर खुकुनी दीदी (गुरुप्रिया दीदी) ने मुझे कुछ फूल तथा बिल्वपत्र लाकर दिया, एवं कहा, "आज शिवरात्रि है, मां के चरणों में अञ्जलि नहीं देंगे ?" मैंने सानन्द स्वीकृति से दीदी के द्वारा दिये गये फूल एवं बिल्वपत्र द्वारा माताजी के चरणों में अञ्जलि प्रदान की । दीदी की कृपा से अपना परम सौभाग्य समझ, दीदी के प्रति कृतज्ञता से मेरा मन भर आया ।

मन्दिर में जब पूजा हो रही थी तब वहाँ बहुशाखा युक्त एक दीपाधार मैंने देखा । सुना काशी आश्रम के लिए यह खरीदा गया है । इतने दिन यह दिल्ली में पड़ा था । टिहरी की रानी साहिबा को कहकर इसे दिल्ली से हरिद्वार लाया गया । मन्दिर में आरती होने के उपरान्त माताजी ने

हमलोगों से कहा, "यह जो धूप-दीप इत्यादि देख रहे हो जानना कि इनके साथ भी कर्म का सम्बन्ध है । कर्म के लिए ही वस्तुओं का योगायोग होता है । इतने दिन जो यह "झाड़" दिल्ली में पड़ा था यह भी व्यर्थ नहीं है । कारण शिव प्रतिष्ठा के अवसर पर शिवजी को इस प्रकार आलोक प्रदान करेगा इसीलिए मानो यह प्रतीक्षा कर रहा था । शिवजी के नीचे जो रुद्राक्ष की माला देख रहे हो। यह रुद्राक्ष भी ढाका आश्रम के हैं । कमलाकान्त के पास ढाका आश्रम के १०८ रुद्राक्ष थे । उसने वह सब योगी भाई को दिया । योगी भाई ने उनको चाँदी के तार से गुँथवा कर शिवजी को पहना दिया । यह जो सब योगायोग देख रहे हो यह सब आकस्मिक नहीं है । सभी चीजों के साथ कर्म का योगायोग रहता है । मुँह से कहोगे एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति, और जड़ चेतन बुद्धि से वस्तुओं का बँटवारा करोगे यह क्या हो सकता है ? मन्दिर में पूजा समाप्ति के उपरान्त श्री श्री माँ ने फूल तथा बिल्व पत्र सहित हमलोगों के मस्तक स्पर्श कर आशीर्वाद दिया । हरिद्वार में विविध प्रकार से माताजी की कृपा प्राप्त कर मैं अपने को कृतकृत्य मान रहा हूँ । पर मैं अत्यन्त अनिच्छा सहित ही हरिद्वार रवाना हुआ था ।

सूर्य ग्रहण :– ११ फाल्गुन, बंगाब्द रविवार, २८-२-५२ । आज शिवरात्रि का पारण हैं । श्री श्री माँ के हाथों से हमें फल प्रसाद प्राप्त हुआ । जिन्होंने कल बिलकुल उपवास किया हैं माताजी ने उनको अधिक-अधिक फल दिया । आज शाम को "ग्रहण" है । इसीलिए जल्दी-जल्दी हमलोगों ने आहारादि समाप्त किया । ग्रहण के कारण आज सूर्यास्त के पूर्व ही अनेको ने अन्न ग्रहण कर लिया । शाम को माताजी गंगा के घाट पर जाकर बैठीं । हम सब वहां जाकर एकत्रित हुए । कीर्तन चलता रहा । त्रिवेणी पुरीजी महाराज भी ग्रहण के समय गंगा तट पर आये । सभी आज गंगा स्नान के लिए तैयार होकर आये हैं । हरिद्वार के इस ठंडे जल में नहाने की हिम्मत मुझमें नहीं थी अतः मैंने नहीं नहाने का निर्णय लिया । माताजी ने मुझ से पूछा –"तुम गंगा स्नान नहीं करोगे ?

मैं– नहीं

माताजी – गंगा स्पर्श करना । मैंने वही किया । महात्मा त्रिवेणीपुरी जी ने स्नान किया । श्री श्री माँ ने भी स्नान किया । भक्तगण आनन्दोल्लास से नहाने लगे । हमलोग तट पर खड़े होकर इस दृश्य को देखने लगे । ग्रहण छूटने के बाद हम सब आश्रम लौट आये ।

देहरादून गमन :– बंगाब्द १३ फाल्गुन, मंगलवार, २६-२-५२ । आज प्रातः की गाड़ी में हम लोग हरिद्वार से देहरादून रवाना हुए । राजासाहब ने प्रातः काल ही हमारे भोजन का प्रवन्ध कर दिया था । भोजनादि करके दिन के नौ बजे स्टेशन आकर हमलोगों ने देहरादून की गाड़ी पकड़ी ।

●

अतुलनीया दीदी

(बँगला से अनूदित)

–डा. गोविन्द गोपाल मुखोपाध्याय

भारत के अध्यात्म जगत में अवतार या महामानव के आविर्भाव में प्रायः सर्वदा ही द्वैत या युग्मरूप देखा जाता है । देव-देवियों की तो बात ही छोड़ी जाय । हमलोग सर्वदा ही युगल के उपासक हैं । वह, शैव, शाक्त, वैष्णव कोई भी क्यों न हो, गौरी-शंकर हो या सीताराम अथवा राधा-कृष्ण की उपासना हमलोग अक्सर करते हैं । अर्थात् शक्ति को युक्त करके उनको ही प्रथम स्थान देते हुए हमलोग देवता की अपने अपने इष्ट की उपासना करते हैं । परवर्ती काल पर दृष्टि डालने से हम देखते हैं-गौर-निताई, रामकृष्ण-विवेकानन्द आदि युग्म पुरुषों का अविर्भाव इस बंग भूमि में हुआ है । निताई या नित्यानन्द के न होने पर गौड़ीय वैष्णव धर्म का कोई भी प्रचार या प्रसार सम्भव ही न होता । गौर अर्थात् गौरांग या श्रीचैतन्य अपने भावावेश में निमग्न रहते थे । बाहर की ओर उनकी दृष्टि ही नहीं थी । सर्वदा ही अन्तर्मुख, कृष्णभाव में विभोर तथा अन्त्य लीला में पुरुषोत्तम क्षेत्र जगन्नाथ धाम में उसी जगन्नाथ में ही वे विलीन हो गये । परन्तु उनको प्रकाश करके स्वरूप में परिचित कराया नित्यानन्द ने ही एवं उनको ही अवलम्बन कर गौड़ीय वैष्णव धर्म की प्रतिष्ठा भी उन्होंने ही की । इसीलिए "संकीर्तनैक पितरौ युगधर्मपालौ" के रूप में गौर-निताई ही अभिन्न स्वरूप में पूजित होते हैं । उसी प्रकार श्री रामकृष्ण भाव समाधि में ही विभोर रहते हैं, "माँ के बिना कुछ नहीं जानता" । "नरेन शिक्षा देगा ।" यह कहकर उनको पहचानने का उत्तरदायित्व उन्होंने अर्पण किया उनके प्रिय नरेन को अर्थात् पूर्वाश्रम में नरेन्द्रनाथ नाम से परिचित स्वामी विवेकानन्द को । अभी सर्वत्र ही एक श्वास में दो नाम उच्चरित होते हैं रामकृष्ण-विवेकानन्द ।

परन्तु दो महीयसी नारी के युग्म आविर्भाव की बात इससे पहले कभी सुनने में नहीं आयी । श्री श्री आनन्दमयी माँ के साथ ही साथ मानो आविर्भूत हुईं श्री गुरुप्रिया देवी, उनकी अभिन्न सहचरी तथा सेविका के रूप में । श्री श्री माँ का शताब्दी-महोत्सव अभी हाल में ही पूरे देश में महासमारोह सहित प्रतिपालित हुआ । यह वर्ष श्री गुरुप्रिया देवी का है, जो सबके पास केवल "दीदी " या "खुकुनी दीदी" के नाम से परिचित हैं । उनकी शतवार्षिकी मनाये जाने का आयोजन हो रहा है । माँ के साथ एक ही साँस में दीदी यह नाम भी निकल आता है । जहाँ माँ वहीं दीदी । स्वयं माँ भी उनको प्रकाश्य रूप में 'दीदी' सम्बोधन ही करती थीं, वह मानो सबकी ही दीदी हैं जैसे माँ सबकी माँ , छाया की भाँति सदा सर्वदा माँ की अनुगामिनी, एकान्त परिचारिणी, सेवा कर्म में सदा निमग्न रहने वाली यह दीदी यदि नहीं रहतीं तब कहाँ, कैसे प्रतिष्ठित होते श्री श्री माँ के

इतने आश्रम । श्री श्री माँ के भावादर्श पर शिक्षित कर, कौन स्थापित करता श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ ?

अनन्य साधारण कौन है यह दीदी ? मैं पहली बार ढाका में नवाबों की बागान बाड़ी शाहबाग में, मेरे पूजनीय पितृदेव स्व. श्री प्राणगोपाल मुखोपाध्याय तथा पूजनीया मातृदेवी स्व. श्री सुरबाला देवी के साथ आश्चर्य अलौकिक सुन्दर कुलवधू निर्मलासुन्दरी देवी को देखने गया था उनके पति श्री रमणीमोहन चक्रवर्ती के वासस्थान पर । वह शायद सन् १९२३ या २४ की बात है तब मैं चार पाँच साल का था । नवाबों के इस बाग में रमणीबाबू सुपरिटेन्डेन्ट के रूप में नियुक्त थे एवं इसी बाग में ही रमणीय तथा शान्त परिवेश में रमणीबाबू के लिए निर्दिष्ट क्वाटर थे । बाहरी लोगों का वहाँ आना जाना नहीं था । शान्त परिवेश में रहते हुए भी रमणी बाबू उस समय अशान्त परिवेश में दिन व्यतीत कर रहे थे । उनके घर पर बड़ी अशान्ति है । अशान्ति है उनकी सहधर्मिणी असूर्यम्पश्या, अवगुण्ठनवती लज्जापटावृता निर्मलासुन्दरी को लेकर । असाधारण रूपवती तथा गुणवती, पति की एकान्त अनुगता इस सहधर्मिणी का केवल एक ही दोष है; हरिनाम सुन कर वह स्थिर नहीं रह सकती । जब तब जहाँ तहाँ उनकी स्वाभाविक स्थिति विपर्यस्त हो जाती है । रसोई बनाते-बनाते हाथ से कोई बरतन गिर गया । किसी दिन कोई अघटन न घटे । इस प्रकार की नाना दुश्चिन्ताओं के कारण अपनी सहधर्मिणी को लेकर रमणी बाबू की चिन्ता तथा अशान्ति की सीमा नहीं थी ।

ठीक इसी समय आकस्मिक रूप से मेरे पूजनीय पितृदेव के साथ रमणी बाबू का योगायोग हो गया, पितृदेव के ही एक मित्र, रमना रेसकोर्स के नित्यप्रातर्भ्रमण के साथी थे अध्यापक ननी बाबू के माध्यम से । तब शाहबाग में ननी बाबू, पितृदेव, एवं कुछ दिन बाद बाउल चन्द्र बसाक, नामक एक और सज्जन, इन तीनों का आनाजाना प्रारम्भ हुआ । इसीके कुछ दिन बाद ढाका के तदानीन्तन सिविलसर्जन डाक्टर शशाङ्कमोहन मुखोपाध्याय मेरे पितृदेव के माध्यम से इन दिव्य अलौकिक भावमयी जननी निर्मला का सन्धान पाकर उनके दर्शनों के लिये शाहबाग गये एवं उन्हें देख कर मुग्ध हो गये । कुछ दिनों के पश्चात् शशांकबाबू अपनी कन्या आदरिणी को भी इस माँ के पास ले गये एवं उसी प्रथम दर्शन के दिन से ही उनके जन्मजन्मान्तर का सम्बन्ध पुनः नवीन रूप में स्थापित हो जाता है । यह सब अभी प्रागैतिहासिक काल की घटना है । परवर्ती काल में उन्हीं निर्मला सुन्दरी का जगज्जननी माता श्री श्री आनन्दमयी के रूप में प्रकाश एक अभिनव युगान्तकारी इतिहास है । इन्हीं के साथ अविच्छेद्य सेविका के रूप में शशांकमोहन कन्या आदरिणी का ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया के रूप में उत्तरण भी एक और इतिहास है ।

भवरोग निवारिणी आनन्दमयी के आविर्भाव के संक्षिप्त इतिहास का यहाँ उल्लेख करने का कारण यह है कि विशिष्ट चिकित्सक शशांकमोहन ने जैसे सब कुछ छोड़कर सरकारी कार्य से अवकाश लेकर इस माँ के आश्रम को स्वीकार किया एवं अन्तिम जीवन में संन्यास ग्रहण करके स्वामी अखण्डानन्दजी के रूप में परिचित हुए, ठीक उसी प्रकार उनकी आदरिणी कन्या भी मानो डॉक्टर के साथ नर्स के रूप में नित्य सेविका के रूप में माँ के चरणों में अर्पित हो गयी । माँ ने उनका जनेऊ कराया, ब्रह्मचर्यव्रत में दीक्षा दिलवायी तथा गुरुप्रिया नाम से अलंकृत किया ।

ढाका छोड़ संसार की क्षुद्र गण्डी का अतिक्रमण कर विश्वभुवन व्याप्त करने के लिए माँ की अविश्रान्त परिक्रमा प्रारम्भ हुई स्थान से स्थानान्तर, तीर्थ से तीर्थान्तर की ओर । पूर्वबंग के एक छोर से सुदूर हिमालय के पाददेश देहरादून जाकर वह उपस्थित हुई । इसके पहले मेरे पितृदेव के एकान्त अनुरोध पर उन्होंने १९२६ ईसवी में वैद्यनाथ धाम देओघर में हम लोगों के घर पर पदार्पण किया एवं कुछ दिनों तक अवस्थान किया । मेरे पितृदेव ने चाहा था, कर्म जीवन से अवकाश लेने के पूर्व जगज्जननी के रूप में उन्होंने जिनका आविष्कार किया था, उनका यह आविष्कार अभ्रान्त अर्थात् यथार्थ है या नहीं इसे अपने गुरुदेव योगीराज बालानन्द ब्रह्मचारीजी द्वारा निर्णीत कर लिया जाय । अतः रमणीबाबू अपनी सहधर्मिणी को लेकर हमारे घर आये सहधर्मिणी के अतिरिक्त लाल किनारे की साड़ी पहनी हुई एक महिला को देखा । सुना शशांकबाबू डाक्टर की कन्या है माँ की देखभाल करती है, अतः साथ आयी है । वही मेरी दीदी को पहली बार अन्तरंग भाव से देखना तथा पहचानना हुआ । उम्र मेरी आठ साल की थी ।

बालक मैं उसी दिन से उन दोनों के अपरिसीम स्नेह से अभिषिक्त होकर आजीवन धन्य हुआ हूँ । सन् १९४४/४५ में जब वाराणसी में तभी तभी आश्रम बना दिन पर दिन दीदी ने माँ के पास बिठाकर अपने हाथों का बना अमृतमय सुस्वादु नाना अन्न व्यञ्जन जैसे माँ के श्रीमुख में दिया, साथ ही साथ मुझे भी परोसा । उन दिनों के उस अतुलनीय स्नेह को क्या कभी भुलाया जा सकता है । पास बैठकर किसी एक व्यञ्जन से चावल मिला कर मुँह में डालने के लिए कौर उठाया, उसी समय माँ ने दीदी से कहा, "वह जैसे खा रहा है मुझे भी ऐसे खिला दे ।'

माँ को खिलाना, सुलाना, स्थान से स्थानान्तर घुमाना सब भार इस दीदी का है । आश्चर्य चकित होकर केवल सोचता, एक व्यक्ति के लिए इतना काम निपुणता से करना कैसे सम्भव होता है ? इतनी अपरिसीम शक्ति की अधिकारिणी वह कौन सी साधना से हुईं ? वह साधना थी उनकी एक मात्र माँ का प्रीति-साधन । माँ क्या करने पर प्रसन्न होगीं, माँ को किस प्रकार सुख-स्वाच्छन्ध में रखेंगी, दीदी की सर्वक्षण यही एक मात्र चिन्ता थी । ध्यान-ज्ञान । यही थी उनकी नित्य पूजा, आराधना । ब्रह्मचारिणी का नित्य क्रिया कर्म निष्ठा के साथ वह पालन करती थीं, अति प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में शय्या त्याग कर साथ-साथ सब नित्य कर्म समाप्त कर वे मातृ सेवा में तत्पर हो जाती थीं । माँ के रन्धन के लिये सब आयोजन कर, अपने हाथों से प्रत्येक व्यञ्जन तैयार करना बनाना । अति शुद्धाचार से प्रतिदिन माँ को खिलाना । माँ अपने श्री शरीर की रक्षा निमित्त अपने हाथों से कुछ भी मुँह में नहीं डालती थीं । दीदी यत्न सहित उनके श्रीमुख में एक-एक कर सब देकर उनके श्री शरीर का सर्वदा पोषण-पालन करती थीं । यहाँ उन्होंने दिन पर दिन स्नेहमयी जननी की भूमिका निभायी है । किसी प्रकार की श्रान्ति क्लान्ति नहीं है । अनुयोग-अभियोग नहीं है । मातृसेवा का जो अतुलनीय दृष्टान्त वह रखकर गयी हैं, वह सभी के द्वारा अनुकरणीय है ।

अभी परमानन्द स्वामीजी नहीं आये थे । दीदी ही एक अकेली माँ की सेवा भी करतीं एवं उसके साथ विविध स्थानों पर श्री श्री माँ के जितने आश्रम स्थापित हुए हैं उन सबकी देखरेख अर्थ

व्यवस्था करना आदि सब स्वयं ही करती थीं । किसी पुरुष में भी इतनी सामर्थ्य एवं इतनी शक्ति नहीं देखी, नारी की तो बात ही क्या । दीदी मानो दशभुजा होकर दस हाथों से काम करती थीं । माँ के लिए भोजन बना रही हैं । उसी बीच माँ के साथ भक्तों का सत्संग चल रहा है वहाँ आकर श्रीमुख की अमृतमयी वाणी, नाना उपदेश लिपिबद्ध कर रखती हैं । खण्डों में प्रकाशित उनकी लिखित दिन लिपि एक अमूल्य सम्पद है, जो हम सबके लिये रख गयी हैं । एक हाथ से भोजन बना रही हैं । दूसरे हाथ से लिख रही हैं, चिट्ठियों के सब जंवाब भी वे ही लिख भेजती थीं, दूसरा कोई उनकी सहायता के लिए उस समय नहीं था । इसके अलावा विशिष्ट अतिथिवृन्द, जो मातृदर्शन के लिए आ रहे हैं, वे उच्चकोटि के साधु महात्मा ही हों अथवा विशिष्ट राजपुरुष, राजा-महाराजा, प्रधानमन्त्री जवाहर लाल, उनकी पत्नी कमला, कन्या इन्दिरा, कोई भी क्यों न हो, सभी का यथायथ मर्यादानुरूप, आदर-सत्कार निपुणता से करने का दायित्व दीदी पर ही था । दीदी का सबसे बड़ा काम था माँ को विविध स्थानों पर अपने आश्रम में सुस्थित करना । पहिले माँ जहाँ भी जाती थीं किसी मन्दिर या धर्मशाला में रहती थीं । कलकत्ते में माँ का दर्शन पहिले पहिले बिरला द्वारा प्रतिष्ठित छोटे-छोटे मन्दिरों में मिलता था । देओघर जाने पर कभी वे निर्वाण मठ में ठहरतीं तो कभी हम लोगों के गुरुदेव के आश्रम में । कृष्णनगर में एक बार आयीं सुना वह ठहरी हैं मन्दिर संलग्न आश्रम के संकीर्ण परिसर में । मैं दौड़ा उनके दर्शनों की इच्छा से । उन दिनों ऐसा ही चलता था । दीदी ने ही आश्रम का सुबन्दोबस्त किया ताकि भक्तजन अनायास सत्संग एवं सदुपदेशादि का लाभ ले सकें । माताजी अवश्य सर्वदा ही बाधा-बन्धन हीन मुक्त विहङ्ग की भाँति विचरण करा करती थीं । उनके लिये दूसरों के मन्दिर या साधारण धर्मशाला भी जो है अपना नामांकित आश्रम भी उसी तरह है । काशी आश्रम में आते जाते अपनी विश्वमोहिनी मधुर मुसकान से कहतीं, "यह तो खुकुनी ने आश्रम किया है । यह शरीर चिड़िया की तरह दो दिन यहाँ रहा । अब उड़कर अन्यत्र चल पड़ा । इसीलिए माँ के लिए इन सब आश्रमों की स्थापना में कोई इतरविशेष न होने पर भी भक्त अनुरागी वृन्दों के लिये एक निर्दिष्ट स्थान में माँ को पाने का जो दुर्लभ अवसर दीदी ने कर दिया है, उसकी तुलना नहीं है । एक दीदी के सिवाय इस नित्य-चञ्चल पक्षी को इस प्रकार पिंजराबद्ध करने की क्षमता किसमें थी ?

अन्त में स्मरण करना पड़ता है दीदी का अतुलनीय अवदान एवं कीर्ति काशी आश्रम में क़न्यापीठ-प्रतिष्ठा । माँ के आदर्श से कन्यायें अपना-अपना जीवन तैयार करने का सुयोग प्राप्त कर सकें, इस महान् उद्देश्य को लेकर दीदी ने कन्यापीठ स्थापना की परिकल्पना की । कन्यायें ब्रह्मचारिणी के रूप में आश्रम में रहेंगी । प्राचीन भारतीय भावधारा में संस्कृत भाषा की शिक्षा लाभ करेंगी । इसी की सम्पूर्ण सुव्यवस्था उन्होंने की । अर्थव्यवस्था विशेष नहीं थी । केवल रहने की व्यवस्था आश्रम दे सकता था । इसीलिए सभी भक्त वृन्दों से आवेदन कर दीदी अर्थ संग्रह करने के लिए उद्योगी हुईं । मेरी गर्भधारिणी माँ को वे मौसी कहती थीं । उनसे भी उन्होंने इस काम के लिये सहायता माँगी । मुझे याद है कि जब तक मेरी माताजी थीं तब प्रत्येक माह के प्रारम्भ में मनिआर्डर द्वारा अपना सामान्य दान दीदी के पास भेज देती थीं । इस प्रकार मधुकरी वृत्ति द्वारा दीदी ने इस अनन्य साधारण प्रतिष्ठान को तैयार किया ।

आज यह कन्यापीठ संस्कृत शिक्षा के क्षेत्र में एक विशिष्ट स्थान पर है । यह अत्यन्त गौरव का विषय है । आश्रम तो भारतवर्ष में अनेक हैं परन्तु कन्याओं के लिए ऐसा कोई दूसरा प्रतिष्ठान है यह मेरे ध्यान में नहीं है । नारी-मुक्ति या नारी शिक्षा की बड़ी-बड़ी बातें हम लोग सदा किया करते हैं । परन्तु नारियों के लिये हमारी माताओं के लिए कुछ करने के लिए कोई आगे नहीं बढ़ता है । आध्यात्मिक भावना से नारी को भावित करने की बात तो कोई सोचता ही नहीं है, परन्तु समाज का जाति का सभी परिवर्तन अपेक्षित है नारी के अवदान पर । उनको यथार्थ शिक्षा से शिक्षित कर उन्हें उन्नत करने की ओर । दीदी की कितनी दूर दृष्टि थी एवं कितना बड़ा कार्य वह कर गयी हैं इसका आकलन आज कौन कर सकता है ।

इस प्रसंग पर मन में जागती है जननी शारदा देवी तथा भगिनी निवेदिता की बात । ठीक वैसी ही आदर्श जोड़ी है श्री श्री माँ आनन्दमयी एवं दीदी गुरुप्रिया की । दोनों क्षेत्रों में ही प्रेरणा दी है माँ ने उनकी भावधारा को कार्यरूप में परिणत किया है एक ओर निवेदिता ने दूसरी ओर गुरुप्रिया ने । निवेदिता एक पाश्चात्य रमणी है जिन्होंने अपने को समर्पित किया था । भारत माता के चरणों में स्वामी विवेकानन्द की शिष्य परम्परा में ऐसी कोई भारतीय नारी उस समय नहीं थी जो उनके आदर्श को रूपायित कर सके । हमारा अशेष सौभाग्य है कि हमने भारत की बंगदेशीया ललना में एक अविरल कर्मशक्ति, आदर्श जीवन गठन की परिकल्पना एवं रूपदान प्रत्यक्ष किया । उनकी शतवार्षिकी के उपलक्ष में उस महाजीवन से सभी, विशेषतः कन्यायें एवं माताएँ यदि प्रेरणा पायें, तभी इस उत्सव पालन की सार्थकता होगी । आशा करता हूँ हम सब इस विषय में सफलप्रयास होंगे ।

मुझे याद आती है एक विदेशी की उक्ति, जो एक विशिष्ट चिकित्सक थे तथा लखनऊ के मेडिकल कालेज में ऊँचे पद पर अधिष्ठित थे । उनका नाम था डाक्टर अलक्जेन्डर बाद में उन्होंने अपने गुरु श्री कृष्ण प्रेम से (जो स्वयं भी पाश्चात्य वासी थे) वैष्णव दीक्षा ली थी एवं हरिदास नाम से परिचित हुए थे । उन्हीं हरिदास ने एकबार नहीं अनेकबार मुझसे कहा था, "आनन्दमयी माँ विशेष क्या हैं, असली व्यक्ति हैं वह दीदी, ऐसा और देखा नहीं जाता ।" तब सोचता था यह माँ को पहचान नहीं सके । अब लगता है हमने दीदी को नहीं पहचाना, जिन्होंने माँ के प्रति अपनी सम्पूर्ण सत्ता को विलीन कर दिया था । उस साहब साधु ने अपनी अन्तर्भेदी दृष्टि से यथार्थ ही दीदी को स्वरूपतः पहचान लिया था ।

मेरे मानस पटल पर दीदी की एक ही मूर्ति सर्वदा जाग्रत रहती है, वह उनके अपार स्नेह की मूर्ति । याद आती है-मैं तब काशीजी में पांडे घाट पर गंगा तट पर एक छोटे से कमरे में रहता था । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में अनुसंधान कर रहा था । अचानक एकदिन प्रातः आश्रम से एक व्यक्ति नें आकर दीदी की लिखी दो पंक्तियों का पत्र मुझे दिया । "गोविन्द भाई । आज आपका आश्रम में "कोचू बाटा" (बंगाल का विशेष खाद्य) खाने का निमन्त्रण है । इति तुम्हारी दीदी ।" साधारण "कोचू बाटा" इतना सुस्वादु हो सकता है यह स्वप्न में भी नहीं सोचा था । दीदी के हाथों

की महिमा एवं स्नेह सिंचन से उस दिन माँ के पास बैठकर एकत्र उस "कोचू बाटा" के आस्वादन का अमृतमय अनुभव आज भी मेरी सत्ता को आच्छादित किये हुए है ।

दीदी के बारे में कहकर या लिखकर समाप्त नहीं किया जा सकता । कौन माँ का संग पाते, कहाँ आश्रम बनते, यदि आज दीदी नहीं रहतीं । अतः माँ के लिए ही दीदी का आविर्भाव, दीदी के लिए माँ का हुआ । उनके अभिन्न युगल-विग्रह के प्रति मेरे सहस्र विनम्र प्रणाम ।

●

श्री शरणागत आदरिणी

श्री– शरणागत आदरिणी
हे देवि तुम्हारी जय जय हो ।
गु– णग्राही हम सब साथ बनें
हे मातृप्रिया तुम्हारी जय जय हो ।
रू– परस आनन्दघन माँ की
हे प्रेमदिवानी तुम्हारी जय जय हो ।
प्रि– य बनें सुप्रिय बनें हम
हे सत् पथ दायिनी तुम्हारी जय जय हो ।
या– द आज अन्तर में जागे
हे हम रात्रि तुम्हारी जय जय हो ।
दि– गन्त व्यापी माँ की अमर वाणी की
हे पुनीत धारा तुम्हारी जय जय हो ।
दी– प जगाया मनमन्दिर में
हे दीपावली तुम्हारी जय जय हो ।
कोटि कोटि वन्दन माँ के श्री चरणों में,
सारा जीवन माँ तुम्हें समर्पित हो ।

सादर समर्पण ।

स्वान्तः सुखाय

●

दीदी गुरुप्रिया के साथ वर्तमान भारत की श्रेष्ठ नारियों का पत्राचार

[१]

मदालसा नारायण

राज भवन, अहमदाबाद
तीर्थराज, प्रयाग,
७-१-७३

परम चैतन्य स्वरूपा श्री श्री माँ आनंदमयी माँ की अखिल विश्व कल्याणकारिणी सेवा में अनन्यरता परम प्रेममयी पूज्य दीदीजी की पवित्र सेवा में श्रद्धापूर्वक प्रणाम ।

आपका कृपापत्र श्री भूपेन्द्र दा से प्राप्त कर परम प्रसन्नता हुई । उसमें परमानंद स्वरूपा श्री श्री माँ की, सकल नारीजगत के लिये, आत्मोन्नति के पथ पर, मानव-समाज को सतत आगे बढ़ाने की अपूर्व प्रेरणा प्राप्त होती है । परम्परागत मानवीय संस्कारों को समृद्ध करने का सुनिश्चित दिग्‌दर्शन एवं समयोचित पथ-दर्शन श्री श्री माँ के पावन हृदयोद्‌गारों में से गंगा माँ के परम पुनीत प्रवाह की तरह सतत प्राप्त हो सकता है । श्री श्री माँ का इतना महान कृपा-अनुग्रह प्राप्त कर धन्यता प्रतीत हो रही है । साथ ही साथ सेवा साधना के पथ पर सतत सावधान होकर चलने का उत्तरदायित्व भी अधिक महसूस हो रहा है ।

पूज्य दीदी,

इस समय वाराणसी में और कानपुर में पूज्य जानकी मां, से संबंधित 'समर्पण और साधना' ग्रन्थ के निमित्त प्रिय अनुज, भाई रामकृष्ण के अनुरोध से ही आना हुआ । इसलिये स्वाभाविक रूप से आप सबके प्यारे भैया - पूज्य पिता जमुनालाल जी का इतना गहरा स्मरण-सान्निध्य प्राप्त हुआ कि वर्षों बाद मन को बड़ा आश्वासन मिला है और गहरी संपन्नता एवं समाधान मिल रहा है । यह प्रतिभावान मातामही श्री श्री माँ की महती कृपा का ही प्रसाद है ।

उसके सहारे यहाँ प्रिय रजत कुमार और अ. सौ. बहू अमला रानी के सुसंग में बड़ा सुख मिल रहा है । ८ जनवरी को चि. रजत दौरे पर से रात को लौटेंगे । ९ को दिन में उनके साथ थोड़ा समय बिता कर रात की ट्रेन से चलकर १0 जनवरी को सुबह मैं दिल्ली पहुँचूंगी ऐसी आशा है । वहां गुजरात भवन में स्नानादि से निवृत्त हो यथाशीघ्र श्री श्री माँ के श्री चरणों में आपके पास पहुँच पाऊंगी ।

आज कानपुर में श्रीमद्‌भागवत-कथा-कीर्तन की परिसमाप्ति का स्मरण करते हुए हम सब का सादर प्रणाम स्वीकार हो ।

पूज्य दीदी, 'श्री श्री मां आनंदमयी कन्या विद्यापीठ वाराणसी' (भदैनी) की भक्तिमती कुमारी कन्याओं की सुमधुर स्मृति में 'पत्रं पुष्पं फलं' स्वरूप सूक्ष्म सा नैवेद्य स्वीकार हो।

पू. निर्मल दा या पू. निर्वाणदा जो भी कानपुर से सीधे वाराणसी जावें उनके साथ प्रिय बहूरानी सौ. अमल की ओर से १००) का जो भी प्रसाद आप भिजवाना चाहें वहीं भिजवा सकेंगे तो संतोष होगा। परम श्रेयस्करी स्नेहमयी परम पूज्या श्री श्री माँ के श्री चरणों में अनन्य प्रणाम पूर्वक - आपकी विनीता

मदालसा के
अभिवंदन

[२]

श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
कानपुर।
दि. ८-१-७३

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। माँ को पढ़के सुनाया।

माँ ने कहा–"मदालसा–माँ को चिट्ठी दो। हृदयस्पर्शी प्रकाश चिट्ठी में। जानकी माँ का तो जन-जनार्दन सेवा में समग्र जीवन अर्पण ! प्राणस्पर्शी यही आदर्श ग्रहण।"

माँ के आशीर्वाद व मेरा सादर प्रेम।

इति
गुरुप्रिया दीदी

[३]

प्रधानमंत्री भवन,
नई दिल्ली,
20 जून, 1980

प्रिय दीदीजी,

आपका 17 जून का पत्र मिला। यह सुनकर खुशी हुई कि माँ का शरीर पहले से कुछ ठीक है।

मुझे तो प्रसन्नता होती अगर मैं पौराणिक संस्थान के नव–निर्मित भवन के उद्घाटन के लिए आ सकती। आजकल हमारी पार्लियामेंट की बैठक है और शायद अगस्त के तीसरे हफ्ते तक चले। रविवार के कार्यक्रम पहले से बन चुके हैं, फिर भी, हो सका तो अवश्य आऊँगी।

माँ के दर्शन से हमेशा ही आनन्द होता है।

आप ने अपने स्वास्थ्य के बारे में नहीं लिखा है। हमारे घर में सब ठीक हैं। राजीव, सोनिया और बच्चे इटली गये हैं। जुलाई के पहले हफ्ते में वापस आयेंगे। संजय और उसका परिवार यहीं है।

माँ को मेरा प्रणाम

आपकी

इन्दिरा गांधी

श्री गुरुप्रिया देवी
श्री श्री माता आनन्दमयी आश्रम
पो. कनखल, सहारनपुर।

[४]

प्रधानमंत्री भवन,
नई दिल्ली,
27 जून, 1980

प्रिय दीदीजी,

एक पत्र भेज रही हूँ जो कुछ दिन पहले लिखा था, परन्तु किसी कारण हस्ताक्षर नहीं हुये और भेजा नहीं गया।

उसके बाद तो आसमान ही फट गया। क्या कह सकती हूँ। संजय की विशेषता दुनिया ने नहीं समझी – संकट के समय जो उसने मुझे सहारा दिया और मेरा बचाव किया वह बड़े भाई या पिता के समान था। उसकी हिम्मत और तीव्र बुद्धि के कम लोग मैं ने देखे हैं।

माँ को मेरा प्रणाम

आपकी

इन्दिरा गांधी

श्री गुरुप्रिया देवी
श्री श्री माता आनन्दमयी आश्रम,
पो. कनखल, सहारनपुर।

[५]

प्रिय कनिष्ठ पुत्र संजय की दुर्घटना से हुई आकस्मिक मृत्यु से शोकार्ता–जननी के व्याकुल हृदय को धीरज देते हुए "आत्मरूप में अपने पास" इत्यादि धैर्य युक्त श्री श्री माँ की अमृतमय शाश्वत वाणी।

माता आनन्दमयी आश्रम
कनखल
27.6.80

प्रिय इन्दिरा बहन जी,

आपके दोनों पत्र मेनका के साथ मिले । माँ ने गम्भीर भाव से सब सुना । लिखने का कलम में नहीं, आ रहा । बोलने का तो आता ही नहीं । इस समय कोई उपदेश या बात मन नहीं मानता । प्राण हा–हा कार करता है ।

फिर माँ ने कहा– "इन्दु माँ को लिखो अपने नाम का काम उसने सर्वांगीण रूप में प्रकाश किया । जन-कल्याण सृष्ट होकर जन जनार्दन भगवान हैं न– निज क्रिया से वह निर्दोष प्रकाश भी दे गया है । स्वयं भगवान् जिस समय जो रूप में प्रकाश । आत्म रूप में अपने पास ही स्मरण रखे । इन्दु माँ तो धीरज, सहन–शक्ति रूपी ।"

मेरा शरीर ज्यादा ठीक नहीं है । माँ की कृपा से किसी प्रकार चल रहा है । मेरा स्नेह व माँ का आशीर्वाद लेना ।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी
प्रधानमंत्री भवन
नई दिल्ली ।

इति
दीदी गुरुप्रिया

हमारी दीदी

– श्री अयोध्या प्रसाद दीक्षित

दीदी नाम से ही मातृभक्तों के मानस पटल पर जो पावन छविं उभर कर आती है उसके प्रति स्वभावतः ही सभी नतमस्तक हो जाते हैं । एक सात्विक परम तत्व भावना तन मन को विभोर कर देती है । बिना प्रयास ही हमारा मन भौतिक जगत से ऊपर उठकर अध्यात्म की सात्विक अलौकिक ऊँचाइयों परआनन्दातिरेक अवस्था में सरलता से पहुँच जाता है, क्योंकि वहाँ दीदी के पास ही थोड़ी और अधिक ऊँचाई पर विराजमान धवल वसना, मृदुल मुसकान लिये हमारी प्यारी 'माँ', जगतजननी, पूर्ण ब्रह्म नारायण के मानस दर्शन पाकर हम सुध बुध खो बैठते हैं ।

यद्यपि दीदी के दर्शन मुझे माँ के प्रथम दर्शन के साथ ही देहरादून में 1951 में हो चुके थे, परन्तु उनकी स्पष्ट प्रबल स्मृति मुझे उस समय से विशेष है जब मैं देहरादून में जिला मैजिस्ट्रेट के पद पर था (1961–1965) विशेष अवसरों पर तो मैं आश्रम में माँ के दरबार में सपरिवार पहुँच ही जाता था । पर जब माँ वहाँ रहती थीं तो नित्य प्रति सरकारी काम समाप्त करके सांयकाल आश्रम जाकर माँ के चरणों में सपरिवार और मित्र गणों के साथ प्रायः नौ बजे तक सत्संग में बैठा रहता था । अन्त में पन्द्रह मिनट के मौन के पश्चात् ही वापस लौटता था । दीदी माँ की चौकी के नीचे माँ के चरणों के पास बैठी रहती थीं । दीदी वहीं से माँ की आज्ञा के अनुसार और अधिकतर माँ के रुख के अनुसार आश्रम की अन्य लड़कियों के सहारे सारी व्यवस्थाका संचालन करती थीं । माँ से वह इतना एकाकार थीं कि उनके किसी काम में कोई त्रुटि नहीं हो पाती थी ।

विशेष अवसरों पर दोपहर अन्न प्रसाद लेने हम अवश्य पहुँच जाते थे । देखते ही दीदी की मृदुल आकर्षक आवाज गूँज उठती थी,

"दीक्षित भाई आ गया"

और हम निहाल हो जाते थे क्योंकि उसी समय माँ की परम पावनी, परम लुभावनी दृष्टि हमारे ऊपर पड़ जाती थी जो हमारे तन मन और बुद्धि को सराबोर कर देती थी । इस परम आनन्द दायक अनुभव का वर्णन करना शब्दों से परे है । अन्न प्रसाद लेते समय जब हम पंक्तिबद्ध बैठे होते थे तो प्रायः माँ के साथ दीदी हमारे बीच आती थीं और हमारे अन्न प्रसाद पर दृष्टि डालती थीं समुचित निर्देश देती थीं और वह अन्न प्रसाद स्वर्गीय अमृत प्रसाद हो जाता था जिसे पाकर हम भाव लोक में देवताओं के समान अमर हो जाते थे ।

दीदी, माँ की बाल सहचरी, मातृ लीला की प्रमुख पात्र, माँ से अभिन्न थीं । जब वे प्रथम बार अपने पूज्य पिता तत्कालीन ब्रिटिश कालीन अभिन्न बंगाल प्रान्त के सिविल सर्जन और कालान्तर में माँ के कृपापात्र संन्यासी स्वामी अखंडानन्द जी महाराज के साथ ढाका में तत्कालीन बालवधू परमसुन्दरी माँ के सम्मुख आईं तो माँ का प्रथम उद्घोष यही था, "तुम अब तक कहाँ रहीं ?"

इससे हम मातृ भक्तों को यह आभास होता है कि माँ अपनी मातृलीला प्रारम्भ करने के लिये दीदी की प्रतीक्षा कर रही थीं। इसी क्षण से दीदी सम्पूर्णता से माँ की हो गईं। माँ को उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। माँ ने ही समय-समय पर उन्हें कभी-कभी विशेष प्रयोजन से अथवा उनके आध्यात्मिक लाभ के लिये कुछ समय के लिये अपने से अलग रखा। कालान्तर में माँ ने दीदी से अनेक महत्वपूर्ण कार्य करवाये। अनेक महत्वपूर्ण धार्मिक अनुष्ठान, उत्सव, आयोजन, कन्यापीठ जैसी महत्वपूर्ण संस्था की स्थापना, सफल संचालन, अनुपम प्रेम पूर्ण अनुशासन, अनेक आश्रमों, मन्दिरों का प्रारम्भ पवित्र संचालन आदि इतने महान कार्य दीदी के हाथों सम्पादित हुए जो एक साधारण व्यक्ति के द्वारा एक जीवन काल में संभव नहीं प्रतीत होते। माँ के प्रति दीदी का समर्पण इतना पूर्ण था कि वस्तुतः दीदी के मानवीय शरीर में सभी कार्यों में माँ थीं। करुणामयी माँ की अलौकिक शक्ति लोक कल्याण के लिये कार्य कर रही थी। "माँ ने कहा है" इसलिये यह कार्य होकर रहेगा, दीदी का अटूट विश्वास था। दीदी की यह बहुत ऊँची अवस्था थी।

दीदी माँ के रंग में रँगी आजन्म ब्रह्मचारिणी थीं। माँ ने उनका यज्ञोपवीत भी कराया था। उनके सरके बाल ब्रह्मचारियों जैसे थे। मातृभक्तों में शिरोमणि वह हमारी गुरु बहन भी थीं और गुरु भाई भी। मुझे नहीं याद पड़ता कि उनका व्यवहार किसी के प्रति कभी कठोर भी था, फिर भी उनकी बात को नकारने का साहस मैंने किसी में भी नहीं देखा। उनके चेहरे पर ब्रह्मचर्य का तेज और अलौकिक आभा थी। हम लोगों में उनके चरणों में गिर जाने की अभिलाषा रहती थी।

प्रायः सभी आश्रमों का शुभारम्भ और निर्माण तथा संचालन माँ ने दीदी के माध्यम से कराया। सभी मातृभक्त, साधु, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणियाँ, धनवान सेठ, साहूकार, राजा महाराजा, महारानियाँ, राजनेता, उच्च पदस्थ सरकारी अधिकारी जो माँ के चरणों में आये समय-समय पर दीदी से अनेक आश्रम सम्बन्धी विषयों पर परामर्श करते और आदेश प्राप्त करते देखे जाते थे। काशी के आश्रम के लिये भूमि ग्रहण की अलौकिक कथा तो सर्वविदित है जब माँ ने रेलवे स्टेशन पर वेटिंग रूम में लगे नगर के नक्शे में गंगा तट के एक स्थान पर उंगली रख दी और कालान्तर में अनेक झंझटों और विघ्न बाधाओं को पार करते हुए दीदी द्वारा अटूट विश्वास और अलौकिक साहस के सहारे माँ की असीम कृपा से काशी आश्रम का निर्माण हुआ जहाँ हमारा पवित्र कन्यापीठ, अन्नपूर्णा मन्दिर, अखंड ज्योति मन्दिर, गोपाल मन्दिर और अस्पताल स्थित है जो असंख्य लोगों का कल्याण कर रहा है। मुझे स्वयं नैमिषारण्य के अनुपम पुराण मंदिर तथा आश्रम के लिये भूमि चयन, भूमि-ग्रहण तथा निर्माण में दीदी के माध्यम से माँ के निर्देशों की आनन्दमय पवित्र स्मृति का अविस्मरणीय अनुभव प्राप्त है।

1960 ई. में मैं काशी से स्थानान्तरित होकर डिप्टी डेवलपमेन्ट कमिश्नर के पद पर इलाहाबाद आया। काशी में माँ के आगमन का समाचार पाकर हम सपरिवार काशी आश्रम गये। दोपहर का समय था। माँ के दर्शन पाकर प्रणाम करके हम धन्य हो गये। दीदी पास ही बैठी थीं। माँ के रुख को देखकर दीदी ने हमारे अन्नप्रसाद की व्यवस्था की। माँ के कमरे के बाहर बरांडे में दीदी ने आसन लगवा कर हमें बैठाया और सदा की तरह प्रेम से भोजन कराया। इन स्वर्गीय

आनन्दमय घटनाओं को हम आजीवन भूल नहीं सकते । इस प्रकार अन्न प्रसाद पाकर उसके एक-एक कण से हमारे अनेक जन्मों के विकारों की मलिनता के परत निकलते चले जाते हैं और हमें माँ के वास्तविक दर्शन की दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है ।

वाराणसी में मुझे महापालिका के प्रशासक तथा जिला मैजिस्ट्रेट के पद पर कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । इस समय 1971 ई. तक मुझे वाराणसी में माताजी के आश्रम में देहरादून की तरह आश्रम की सेवा माँ के अमोघ दर्शन और दीदी के निकट संपर्क में आने का सुअवसर प्राप्त हुआ । यद्यपि आश्रम का मुख्य भार पानू दादा (पानू ब्रह्मचारी) के ऊपर था । परन्तु वह दीदी के बहुत निकट थे और उनका बहुत आदर करते थे । महत्वपूर्ण सभी निर्णय दीदी के परामर्श से लिये जाते थे । माँ से एकाकार होने के कारण इन निर्णयों में माँ की अलौकिक सम्मति और शक्ति सतत कार्य करती थी । उन दिनों की स्मृति मुझे आज भी बड़ी सुखकर लगती है । जैसे ब्रह्म अपनी शक्ति के माध्यम से समस्त ब्रह्माण्ड का सृजन और संचालन करता है उसी प्रकार माँ दीदी के माध्यम से अपनी अलौकिक लीला में हमारे कल्याण के लिये सभी आश्रमों का सृजन और संचालन करती थीं ।

दीदी का सबसे महत्वपूर्ण कार्य मूल बँगला भाषा में लिखी उनकी डायरी है, जो अनन्त काल तक रामायण, गीता और श्रीमद् भागवत् के समान राम लीला और कृष्ण लीला के समान मातृ लीला के अलौकिक दर्शन से समस्त जगत का कल्याण करती रहेगी । यह डायरी बीस खंडों में उपलब्ध है । हिन्दी और अंग्रेजी रूपान्तर भी सुलभ हैं । परम पूज्य भाई जी, श्री ज्योतिष चन्द्र राय, अमूल्य कुमार दत्त गुप्त, श्री पन्नालाल, स्वामी विरजानन्द जी महाराज, आत्मानन्द जी, श्री हरिराम जोशी, प्रेमलता श्रीवास्तव, बीथिका मुखर्जी, गुणीता जी आदि मातृभक्तों के विभिन्न स्तरों से लिखे गये ग्रन्थ बहुत महत्वपूर्ण हैं । परन्तु दीदी की डायरी मूल रूपसे प्रामाणिक और विस्तृत है । जैसे बिना राम कृपा के रामायण नहीं लिखी जा सकती, श्री कृष्ण की अनुकम्पा के बिना कृष्ण लीला नहीं लिखी जा सकती, उसी प्रकार माँ की कृपा के बिना मातृ लीला भी नहीं लिखी जा सकती ।

प्रारंभिक काल में माँ के सत्संग के समय जब भाई जी माँ के वेद वाक्य से भी गहन तत्वदर्शी वचन लिखने लगते थे तो माँ एकाएक चुप हो जाती थीं । निराश होकर भाई जी ने सत्संग के बाद एकान्त में उन वचनों को अंकित किया जो हमें मातृ वाणी के रूप में उपलब्ध हैं ।

दीदी को अपेक्षाकृत अधिक सुविधा और माँ की सम्मति प्राप्त थी ।

मैं स्वयं दीदी की डायरी के हिन्दी रूपान्तर को प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़ता हूँ । उस समय ऐसा लगता है कि मैं भी दीदी के साथ माँ के साथ उसी स्थान पर मौजूद हूँ अथवा साथ-साथ यात्रा कर रहा हूँ । चाहे रेलगाड़ी की यात्रा हो या नाव द्वारा यात्रा हो या मैनपुरी जिले की बैलगाड़ी द्वारा यात्रा हो अथवा पैदल, घोड़े खच्चर की कैलास मानसरोवर यात्रा या हरिबाबा के बाँध आश्रम की हाथी यात्रा । दीदी की डायरी पढ़कर दीदी की और माँ की सतत स्मृति और मानसिक सान्निध्य का लाभ मातृ भक्तों को प्राप्त होता है ।

दीदी की डायरी में माँ के समीप संपर्क में आने वाले अनेक महत्वपूर्ण महात्मा जैसे हरि बाबा, अवधूत जी, स्वामी अखंडानन्द जी, स्वामी चक्रपाणि जी, स्वामी चिद्रानन्द जी, आश्रम के संत वृन्द, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणियाँ, महत्वपूर्ण मातृभक्त सभी के मानसिक दर्शन होते हैं । इसके अतिरिक्त अनेक महत्वपूर्ण राजनेता, जमुना लाल बजाज, महात्मा गाँधी, पं. जवाहर लाल नेहरू, स्वरूपरानी, कमला नेहरू, इंदिरा गांधी की स्मृतियाँ ताजी हो जाती हैं और उनके मानव सुलभ आन्तरिक भावों का दिग्दर्शन होता है ।

सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि मातृ लीला के गूढ़ तत्व, अनेक लोक लोकान्तरों के सूक्ष्म देहधारियों, देवी देवताओं का माँ के प्रति पूज्य भाव स्थान-स्थान पर प्रकट होता है जिससे हम मातृ भक्तों को उनके पूर्ण ब्रह्म नारायण के नारी रूप के चिन्मय शरीर में अवतरण पर विश्वास दृढ़ होता है । दीदी की डायरी में चित्रित मातृ लीला, पुराणों के समान रोचक और ज्ञानवर्धक उपनिषदों के समान तत्वदर्शी तथा 'ओऽम्' के समान बीज मंत्र 'माँ' को सहज सुलभ रूप में प्रदान करने वाली है ।

अन्तिम दर्शन

मैं इलाहाबाद में इन्डस्ट्रियल ट्रिव्यूनल के चेयरमैन के पद पर था । समाचार मिला कि माँ दिल्ली से बनारस जा रही हैं, इलाहाबाद रेलवे स्टेशन से होकर जायेंगी । अधिक विवरण मालूम नहीं था । हम सपरिवार इलाहाबाद के रेलवे स्टेशन पर पहुँचे । ट्रेन आकर ठहरी और हम शीघ्र ही माँ के कम्पार्टमेन्ट के सामने पहुँच गये । अन्दर जाकर माँ को प्रणाम किया । माँ के सम्मुख होकर, माँ के दर्शन पाकर और प्रणाम करके सभी मातृभक्त अपना आपा खोकर बदहवास हो जाते हैं । प्रणाम के बाद उठने पर और माँ की दृष्टि मिलने पर हम आनन्दातिरेक में विह्वल हो जाते हैं । ऐसी ही अवस्था में हम हाथ जोड़े खड़े थे । माँ ने बिना एक क्षण भी खोये तपाक से कहा,

'बगल के डिब्बे में दीदी के दर्शन कर लो ।'

दीदी के डिब्बे में जाकर देखा तो हम स्तब्ध रह गये । एक बर्थ पर हमारी परमप्रिय, परम पूज्य, चिरपरिचित दीदी निश्चेष्ट शिथिल चित लेटी थीं । नाक में आक्सीजन के उपकरण लगे थे आश्रम की सेविका ब्रह्मचारिणी सेवा में तत्पर खड़ी थी । अन्य आवश्यकता पड़ने पर सेवा की प्रतीक्षा में नर्स दूसरी बर्थ पर बैठी थी । डाक्टर स्वयं तत्पर उपस्थित था । हम लोगों ने दीदी के चरणों के पास खड़े होकर प्रणाम किया । बड़ा ही करुण दृश्य था । धीरे-धीरे हम गाड़ी से नीचे उतर आये । थोड़ी देर हम अवाक, शोकग्रस्त प्लेटफार्म पर खड़े रहे और करुणामयी माँ के अमोघ दर्शन करते रहे । जब तक गाड़ी रुकी रही लगता था समय स्थिर हो गया है, काल चक्र पूर्ण ब्रह्म नारायण के आदेश से ठहर गया है ।

फिर गाड़ी ने सीटी दी और चल पड़ी । हमारे लिये दीदी के यह अन्तिम दर्शन थे । काशी जाकर माँ की दीदी, हमारी मार्ग दर्शक दीदी जिस लोक से आई थीं वहीं चली गयीं । उन्हें माँ से सायुज्य प्राप्त हुआ ।

"यद् गत्वा न निवर्तन्ते, तद्धाम परमम् मम"

●

भावप्रसूनाञ्जलि

—ब्र. गुणीता

वन्दन है तुम्हें, अभिवन्दन है ।
अभिनव ब्रह्मचारिणी देवी गुरुप्रिया पुनः पुनः तुम्हें नमन है ।
ऊनविंश शताब्दी का प्रारम्भ था,
प्रारम्भ क्या वह अनारम्भ था ।
तुमने दिखाया आदर्श एक
नारी का ब्रह्मचारिणी वेश ।
पिता की दुलारी थी, माता की लाड़ली,
अनुजों की प्यारी थी, वह सुख में पली ।
पिता ने कर्तव्य निभाया,
कन्या को किया पराया ।
कन्या कब होने वाली थी परायी,
वह तो पिता के पास चली आयी ।
माता पिता ने बहुत समझाया,
सखियों ने विचार विमर्श किया ।
पतिगृह छोड़ पितृगृह निवास
का परिणाम दिखाया ।
पर अडिग थी वह, दिया उत्तर उसने ।
पले बढ़े जिनके पास छोड़ उसी माता पिता को
जाते दूसरों के पास लाज न आती तुम्हें, दिया उत्तर उसने
१९२५ का दिसम्बर था वह या १९२६ की जनवरी ।
पिता ने सुनायी उसे माँ आनन्दमयी की कथा रस भरी ॥
सुना उसने, हुई सिहरन मन में, पर सलज्ज थी वह पिता के सामने ।
न जाने कैसा आकर्षण था उस नाम में, देखा न सुना जिसको कभी
आज चित्त विकल था उसे ही पाने को ॥
बीती रात हुआ प्रातः आदरिणी थी उसी चिन्ता में व्याकुल ।
हुई शाम पिता गये पुनः दर्शनों को, कन्या हुई आकुल ॥

लौटे पिता, देखा कन्या ने, हृदय में हुई धड़कन
हुई रात सारा सँभाल गृह कार्य, कन्या गई पिता के पास
विवरण सुनने को आतुर ।
कहा पिता ने कुछ-कुछ
यह भी कहा, माँ ने बुलाया है तुमको कल ॥

आयी उषा हुआ गगन लाल, पक्षियों ने किया कल गान ।
कन्या की कर्मतत्परता कुछ अधिक थी आज चित्त में
गूँज रहा था कल तान ॥
पिता चले कन्या को ले साथ, पहुँचे शाहबाग ।

पिता का चित्त था सशंकित संकोची कन्या
न जाने क्या कर बैठेगी आज ।
पर यह क्या, कन्या आदरिणी तो
खड़ी है मातृमूर्ति के पास,

अपरिचित नहीं चिरपरिचिता के साथ ।
सिर झुका कन्या का लावण्यमयी
स्नेहमयी करुणामयी के चरणों में ।
आज पा लिया था उसने जीवन सर्वस्व

जिसके लिये त्यागा था यह विषय प्रपंच ।
त्वमेव सर्वम् मम देव देव, त्वमेव सर्वम् मम देव देव,
गूँज उठा यह स्वर सर्वत्र, हुई कन्या आज धन्य ॥
धन्य हुए माता-पिता, सार्थक यह गुरुप्रिया नाम

हुई कीर्ति उसकी अमर, वन्दन है अभिवन्दन है
अभिनव ब्रह्मचारिणी दीदी गुरुप्रिया !
शब्दों के कोटिशः अम्लान कुसुम
चरणों में अर्पित हैं । तुम्हें पुनः पुनः नमन है ।

●

आदरणीया दीदी गुरुप्रिया

—कु. गीता बैनर्जी

भक्त तथा भगवान् का उदात्त महामहिमामय चरित्र अनादि अनन्त काल से जनमानस को अपनी ओर आकर्षिक करता आ रहा है । एक ओर सम्पूर्ण समर्पण, दृढ़ निष्ठा, श्री चरणों में अनुराग, पूर्ण विश्वास तथा भक्ति, प्रेम की पराकाष्ठा एवं दूसरी ओर अपार करुणा, स्नेह, वात्सल्य, अहैतुकी कृपा – इन दोनों के संगम से ही आनन्द-पीयूष-निर्झरिणी की निर्मल मन्दाकिनी प्रवाहित होने लगती है, जिसमें अंवगाहन कर उस प्रेमधारा में सराबोर होकर मनमयूर आनन्दित हो नाच उठता है । तभी तो भक्त भगवन्त की इस अमरगाथा का युग-युगान्तरों से कविगण अपनी काव्य प्रतिभा के द्वारा; गीतंकार संगीतके माध्यम से; भक्तगायक अपनी गायनशैली के द्वारा; कथा-वाचक अपनी वाचनिक प्रतिभा के द्वारा गुणगान कर धन्य होते हैं ।

ऐसे ही एक उदात्त भक्तिरस से ओत-प्रोत महामहिमामय चरित्रसम्पन्न मातृचरणों में समर्पित महनीय व्यक्तित्व का नाम है आदरणीया गुरुप्रिया दीदी ।

सन् १९२६ की जनवरी माह गुरुप्रिया दीदी को श्री श्री माँ का प्रथम दर्शन प्राप्त हुआ । यह दर्शन क्या था? यह तो पूर्ण समर्पण था । महामिलन था । यहाँ तो परिचय अपरिचय का स्थान नहीं था । नित्यमिलन । आत्मा तथा परमात्मा का महामिलन ।

गुरुप्रिया दीदी ने माँ से प्रथम मिलने के अवसर को अपनी अमर लेखनी के द्वारा लिखा है– "मेरे पिताजी श्री शशाङ्क मोहन मुखोपाध्याय अवकाश प्राप्त सिविल सर्जन, डिप्टी पोस्ट मास्टर जनरल श्री प्रमथनाथवंसु महाशयसे माँ की खबर प्राप्त कर दो दिन जाकर माँ का दर्शन कर आये । उसके बाद मुझे ले गये । तब मैं बाहर नहीं निकलती थी । अपरिचित स्त्री या पुरुष किसी से भी बात नहीं कर सकती थी । कैसा ही स्वभाव था । किसी तरह से भी अपरिचित जन के प्रति आँख उठा कर देखना या बोलना मुझसे नहीं हो पाता था । किसी साधु के पास जाना भी मेरे स्वभाव के विरुद्ध था । परन्तु जिसदिन पिताजी श्री श्री माँ के दर्शन कर आये तथा घर पर आकर उन्होंने मुझसे माँ के विषय में कहा तब ही मेरा भी मन मां के दर्शन के लिये व्याकुल हो उठा । मन में चाह थी श्री माँ के दर्शन की । परन्तु पिताजी से कुछ बोल नहीं सकी, अतः पिताजी अकेले ही चले गये ।" दीदी आगे लिखती हैं–

"जब पिताजी की गाड़ी चली गई तब रास्ते की ओर के बरामदे में खड़ी होकर खूब रोई । तब दीदी के मन में विचार उठा कि अरे! यह तो आश्चर्य की बात है जिनको कभी नहीं देखा, जिनके विषय में कुछ नहीं जानती हूं उनको देख नहीं सकी तो इतना रोना क्यों?" दीदी अवाक् रह गईं । पर बाद में दीदी ने समझा कि क्यों तब विना देखे ही रोई थी ? किसका आकर्षण था ? पिताजी के आते ही दीदी पिताजी से माँ की बातों को सुनने गईं । पिताजी ने दीदी से कहा, "माँ ने तुम्हें ले जाने के लिये कहा है ।"

आगे दीदी लिखती हैं,-"दूसरे दिन भोजन आदि के पश्चात अपराह्न में मातृदर्शन के लिये शाहबाग में गई। माँ को देखते ही परिचित जन की भांति माँ के सामने जाकर खड़ी हो गई। आज माँ अपरिचिता हैं-इस प्रकार की चक्षुलज्जा तनिक भी मुझमें नहीं थी। माँ का दर्शन कर प्रणाम किया। मूर्ति जो मैंने देखी-वह मैं क्या वर्णन करूँ? शीष स्वतः ही श्रीचरणों में झुक जाता है। माँ के माथे पर घूँघट था। बड़े लाल किनारे की साड़ी पहनी हुई थीं। ललाट पर सिन्दूर की बिन्दी थी। मुख पर असाधारण ज्योति, लाल छलछलाती हुई भावविभोर आँखें थीं। वाणी अस्पष्ट। मुझे बैठने के लिये माँ ने आसन दिया। पान सजाकर दिया। मैंने कहा, मैं पान नहीं खाती।" माँ ने कहा "मैं खाती हूँ इसलिये तुम्हें भी दिया।" तब दीदी के भीतर भी कैसा एक भाव आया। उन्होंने माँ से कहा- "ठीक है जब आपने दिया, तब मैं अवश्य खाऊँगी।" माँ भाव में विभोर थीं। आँखें भी ठीक से खोल नहीं पा रही थीं। दीदी ने ऐसा अपूर्व भाव इससे पूर्व कभी नहीं देखा था। अतः मन्त्रमुग्ध होकर मां को देखने लगीं और मन ही मन सोचने लगीं जो मैंने चाहा था वह पाकर मैं कृतार्थ हो गई। कब जो 'आप' सम्बोधन छोड़कर दीदी माँ से 'तुम' कहने लगीं दीदी को पता भी नहीं चला। दीदी माँ के श्री अंग से सट कर बैठ गई थीं। माँ दरवाजा बन्द कर खूब परिचित जन की भाँति दीदी से बातें करने लगीं। अचानक माँ ने दीदी से कहा, "तुम इतने दिन कहाँ थी?" माँ की यह अपूर्व अभिव्यक्ति थी। इस वाणी को कह कर माँ मुस्कुराती हुई दीदी की ओर देखने लगीं। माँ पुनः भावावस्था में चली गईं। माँ ने दीदी से कहा, "तुम बैठो मैं अभी आती हूँ।" दीदी ने सोचा माँ कहीं बाहर जायेंगी। दीदी ने रामकृष्णकथामृत पढ़ा था। अतः समझ गईं यह समाधि है। दीदी आँखें बन्द कर माँ को स्पर्श कर बैठी रहीं। बहुत देर बाद माँ उठीं। दीदी ने सोचा थोड़ी सी चित्त की स्थिरता की प्राप्ति के लिये मानव को कितनी साधना करनी पड़ती है और इनको तो देख रही हूँ नित्य महाभाव में ही विराजमान हैं। इसके बाद दीदी माँ की गोद में सिर रख कर लेट गईं। माँ मधुर-मधुर बातें करने लगीं। बाहर दर्शनार्थी खड़े थे। अतः दीदी के पिताजी दीदी को घर चलने के लिये बुलाने लगे। कमरे का दरवाजा खोल दिया गया। दीदी श्री श्री माँ को प्रणाम कर पिता के साथ घर चली आईं।

यह था आदरणीया गुरुप्रिया दीदी का प्रथम मातृदर्शन दीदी जैसी एक विशिष्ट रमणी का पूर्णरूपेण समा जाना। बिन्दु जब सिन्धु में मिलती है तब अपने अस्तित्व के खोने का भय नहीं रहता है, अपितु अपनी लघुता की सीमित अवस्था को परित्याग कर विशालता की असीम अवस्था को प्राप्त होती है। यही तो भक्त भगवन्त का मिलन है। तदरूप हो जाना है।

श्री श्री माँ अधिकतर समाधि में रहती थीं। अतः रसोई इत्यादि का काम सुचारु रूप से करने के लिये माँ को एक सहायिका की आवश्यकता थी। गुरुप्रिया दीदी को देख कर माँ प्रसन्न हुईं। माँ ने दीदी से कहा, "भगा अर्थात् भगवान ने तुम्हें भेजा। अब इस शरीर से सब काम ठीक से नहीं हो पाता है। अतः भगवान ने तुम्हें भेजा है।" धीरे-धीरे दीदी ने मां की सेवा में अपने को न्योछावर कर दिया। माँ भी दीदी के साथ कभी मित्रवत कभी जननी की भाँति व्यवहार करने लगीं।

एक बार दीदी के पिता श्री शशांक बाबू के यहाँ माँ का भोग था। ढाका में 'टिकाटुली' नामक स्थान पर उनका मकान था। उनके घर में माँ का यह प्रथम आगमन था। माँ ने आते ही कहा, "कितनी बार इधर से जाना हुआ। बाहर वाले नल में पैर धोया। तब इस मकान का निर्माण हो रहा था। सोचती थी किसी साहब का मकान होगा। देखो पहले ही मकान पर दृष्टि पड़ी थी, और पिताजी तो साहब का ही काम करते थे।" भोग हो जाने पर माँ ने भोलानाथजी से कहा, "आप पहले भोजन कर लो मैं बाद में करूँगी।" भोलानाथजी के भोजन के बाद उसी थाली में मां दीदी को साथ लेकर भोजन करने बैठीं। उन दिनों माँ अपने हाथ से ही भोजन करती थीं। माँ ने स्वयं थोड़ा सा ही भोजन किया और दीदी को अपने हाथ से खिलाने लगीं। बाद में माँ ने दीदी से कहा "आज मैंने तुम्हें भोजन कराया बाद में तुम मुझे भोजन कराना।"

हमलोगों ने देखा चाहे वासन्ती पूजा हो या दुर्गापूजा या अन्य कोई पर्व हो दीदी के लिये एक पुष्पथाली सजायी जाती थी, जिसमें फूल, बेलपत्ते, दूर्वा, चन्दन, अक्षत आदि होते थे। दीदी माँ की प्रतीक्षा में रहती थीं। अवसर आते ही मां के श्री चरणों में पुष्प बिल्वपत्रों से अंजलि देकर प्रणाम करती थीं। यही दीदी की पूजा थी। कभी अन्य देव देवियों की पूजा करते हमने दीदी को नहीं देखा है। प्रतिदिन संध्यावन्दन के बाद दीदी माँ की चरणरज तथा चरणामृत ग्रहण करती थीं।

इसका भी एक स्वतन्त्र इतिहास है। एक बार शाहबाग में अमावस्या के दिन कीर्तन हो रहा था। माँ भावास्था में थीं। दीदी रोज घर से माँ को चढ़ाने के लिये एक माला तथा थोड़ा सा फूल ले आती थीं। उस दिन भी माला फूल लेकर आई थीं परन्तु माँ कीर्तन के स्थल पर भावावस्था में थीं। दीदी को सबके सामने माला फूल अर्पण करने में संकोच हो रहा था अतः दीदी एक कमरे में अकेली ही खड़ी होकर दुखी हो रही थीं। माँ भावावस्था में कीर्तन में घूम कर जमीन में अपने भाव में समाधि अवस्था में लेटी हुई थीं। कब मां पुनः उठेंगी इसका कोई भी निश्चय नहीं था। परन्तु माँ अचानक उठकर भावावस्था में ही दीदी जिस कमरे में थीं उस कमरे में ही जाने लगीं। दीदी के मन की स्थिति तब अवर्णनीय थी। माँ जाकर दीदी के पास लेट गईं। कमरे में अन्धेरा था। अतः दीदी ने साहस के साथ माँ के गले में माला देकर चरणों में फूलों को अर्पित कर दिया। परन्तु चरणों में फूल अर्पित करते ही माँ का कैसा भाव हो गया। मुख लाल हो गया। शरीर कठिन होने लगा। भोलानाथजी यह देखकर दौड़ते हुए आये। माँ भाव में कहने लगीं मेरें पैरों में फूल दिया है मैं जाऊँ।" तब भोलानाथजी ने माँ से प्रार्थना की कि मत जाओ।" मां अचानक उठ कर बैठीं और अपने चरणों को फैलाकर दीदी से उन पर खड़े होने के लिए कहा और माँ समस्त फूल दीदी के पैरों में देने लगीं। बाद में माँ शान्त होकर दीदी को उतार कर पूर्ववत् ठीक से बैठीं और दीदी से बोलीं, "आज से तुम्हारें पैरों को छू कर कोई प्रणाम न करे। तुम भी दो तीन जन को छोड़ कर और किसी को पैर छू कर प्रणाम नहीं करना।" इसके बाद से प्रत्येक अमावस्या के दिन माँ से अनुमति प्राप्त कर माँ के चरणों में पुष्पाञ्जलि देने लगीं। जिस दिन से माँ के चरणों में पुष्पाञ्जलि अर्पण का दीदी को अधिकार प्राप्त हुआ, उसी दिन से दीदी का अन्य देव देवियों के चरणों में पुष्पाञ्जलि देना निषेध हो गया। बस उन्हीं चरणों का सहारा था। परम श्रद्धेय भाईजी ने

कहा है कि जिन्होंने मातृ चरणों का आश्रय लिया है उन्हें अन्य किसी आश्रय या अवलम्बन की आवश्यकता नहीं है। गुरु तथा इष्ट का एक ही श्री विग्रह में यह महान प्रकाश था।

वर्षों बाद एक बार माँ ने कन्यापीठ की कन्याओं की प्रशंसा करते हुए दीदी से कहा था-दीदी, यह सब तुम्हारे कन्यापीठ की लड़कियों ने किया है। तुम्हारे लिये ही हुआ है। दीदी ने हाथ जोड़ कर माँ के चरणों की ओर देखते हुए कहा था, "सभी इन चरणों में है। इन चरणों का ही है।" दीदी ने ऐसे भावपूर्वक कहा था कि सुनने वाले भी भावविभोर हो उठे।

दीदी का माँ के प्रति पूर्ण विश्वास, सम्पूर्ण निर्भरता को लेकर कभी-कभी हास्यकर परिस्थिति भी हो जाती थी। लोग कहते थे कि माँ यदि कहें कि दीदी आज सूर्य पश्चिम में उदित हुआ है तो दीदी कहेंगी, "हाँ माँ सूर्य पश्चिम में ही उदित हुआ है"। निर्विकार रूप से मातृ आदेश पालन यही दीदी का आदर्श था।

शाहबाग में एक दिन माँ ने भोलानाथ जी से कहा कि, "आज से खुकुनी (दीदी का पूर्वनाम) मुझे खिलायेगी। उसके न होने पर आपलोग खिलाना"।

दीदी की मातृसेवा भी अद्भुत थी। सेव्य सेवक के तादात्म्य के बिना यथार्थ सेवा नहीं होती है। दीदी माँ का भाव समझ जाती थीं। माँ को कब क्या आवश्यक है समझ कर देती थीं। माँ मौन रहती थीं। कमरे में लेटी हैं। दीदी ने एक गिलास जल लेकर माँ को पिला दिया। उस समय माँ को जल ही चाहिए था। समाधि अवस्था में दीदी माँ के शरीर की रक्षा करती थीं। एकबार किसी सज्जन ने माँ से पूछा था कि माँ दीदी अकेली हैं समाधि अवस्था में आपके शरीर की रक्षा करती हैं। आज दीदी साथ नहीं हैं हम सबने मिलकर आपके शरीर की रक्षा की है। तथापि आपके शरीर में चोटें लगी हैं इसका कारण क्या है ?" माँ ने धीरे से कहा, "यह सब लोग समझेंगे नहीं।"

एकदिन माँ ने दीदी से कहा, "खुकुनी मुझे कपड़ा पहना दो।" दीदी को ठीक स्त्रियों के जैसा कपड़ा पहनना नहीं आता था। दीदी ने बहुत सोच विचार कर माँ को उल्टा ही वस्त्र पहना दिया। माँ ने हँसते हुए कहा, "आज मैं इस प्रकार उल्टा ही पहने रहूँगी।" दीदी के पिताजी पास में ही थे। उन्होंने माँ से कहा, "माँ इसे न तो खिलाना आता है और न कपड़ा पहनाना, और इसके हाथ से ही आप सब व्यवस्था कर रही हैं।" माँ ने धीमें स्वर में कहा, "जिसे अपनी ओर ध्यान नहीं रहता है, जो अपनां नहीं जानता मैं उसी से ही ग्रहण करती हूँ।"

निःस्वार्थ सेवा निष्काम सेवा आदर्श कर्मयोगिनी का रूप दीदी में प्रकाशित हुआ था। कन्यापीठ की स्थापना, विद्यापीठ की स्थापना, विभिन्न आश्रमों की स्थापना, माता आनन्दमयी चिकित्सालय की स्थापना, अखण्ड महायज्ञ आदि कितने ही महान कार्य दीदी के कीर्तिस्तम्भ को सुदृढ़ बना रहे हैं। सर्वोपरि मातृलीलागाथा को लिपिबद्ध करना, जो युग-युग तक दीदी की कीर्ति पताका फहराता रहेगा। परन्तु दीदी प्रशंसा प्रतिष्ठा से कोसों दूर रहती थीं। वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि, संस्कृत का यह वाक्य दीदी में यथार्थतः चरितार्थ होता है। एक बार सिद्धेश्वरी में दीदी के शरीर में फूल देते हुए माँ ने कहा था, "मैं पूजा कर रही हूँ। यह कन्या बड़ी जबरदस्त है।" कोई-कोई कहा करते थे कि माँ इच्छाशक्ति तथा ज्ञानशक्ति हैं और दीदी क्रिया

शक्ति हैं । माँ के ख्यालों को दीदी क्रियान्वित करती थीं । अवश्य ही महाशक्तिमयी माँ योग्य आधार देखकर दीदी में शक्तिसञ्चार करती थीं ।

एक बार माँ भावावस्था में सबको प्रणाम करने के लिए उद्यत हुईं । माँ को कौन चरणधूलि दे ? परन्तु दीदी के मन में यह भाव आया कि हमारे भाग्य में जो रहे माँ यदि प्रणाम करके ही शान्त हो जायँ, मैं अवश्य ही माँ को प्रणाम करने दूँगी । 'तत्सुखे सुखीत्वम् ।" यह दीदी का भाव था । माँ अवश्य भोलानाथजी के कहने से अपने चरणों में प्रणाम कर शान्त हो गई थीं ।

पहले-पहले दीदी का चेहरा माँ से बहुत मिलता था । सबलोग माँ तथा दीदी को दो बहनें कहते थे । एक बार माँ ने दीदी से कहा था, "यह जो सब लोग तुम्हारा चेहरा इस शरीर से मिलता है कहते हैं यह क्या अर्थहीन है ? इसका क्या कुछ भी अर्थ नहीं है? "माँ से पहले एक बहन हुई थीं । उनका देहावसान माँ के आविर्भाव के पूर्व ही हो गया था । वे ही इस जन्म में दीदी के रूप में आई थीं ऐसा संकेत भी माँ से मिला है ।

श्री श्री माँ के निर्देश से दीदी के पिताजी को इसी कनखल में ही स्वामी मंगलानन्दगिरिजी से संन्यास प्राप्त हुआ था । उनका नाम हुआ था स्वामी अखण्डानन्द गिरि । दीदी का गुरुप्रिया नाम माँ का ही दिया हुआ था ।

दीदी के प्रति माँ की करुणा भी अपरम्पार है । दीदी माँ के साथ-साथ रहती थीं । श्री अंग की सेवा करती थीं । एक बार माँ ने कहा, "मुझे ज्यादा स्पर्श नहीं करना ।" इससे दीदी को बहुत दुःख हुआ । दीदी ने माँ से कहा, "इस प्रकार दूर रहना बहुत ही कष्टदायक है । इच्छा होती है मैं अस्वस्थ हो जाऊँ तब तो आप मेरे शरीर पर हाथ रखेंगी । मैं आपको स्पर्श कर पाऊंगी ।"

इसके कुछ दिन बाद दीदी को बहुत ज्वर हुआ । उन दिनों दीदी अपने घर में ही थीं । माँ तथा भोलानाथ जी भोग के लिये दीदी के घर पधारे थे । रात में भी वहीं रहने की बात थी रात में माँ को सोने भाव नहीं रहता था । भोलानाथ के कहने पर माँ दीदी के पास गईं । दीदी ज्वर में बेहोश पड़ी थीं । कोई एक महिला पंखा झल रहीं थीं । माँ ने उन्हें उठा दिया । मकान में सभी सो रहे थे । माँ ने स्वयं बाल्टी से जल ला कर दीदी के सिर को धुला दिया । अपने आँचल से दीदी के सिर को पोंछा । तब एक हाथ से पंखा झलने लगीं तथा अन्य हाथ दीदी के शरीर पर फेरने लगीं । स्नेहमयी जननी की इस अपार करुणा से दीदी को खूब आराम प्राप्त हो रहा था । तब माँ ने दीदी से कहा, "अब तो मैं तुम्हारे शरीर पर हाथ फेर रही हूँ तुम्हें अच्छा लग रहा है न? "माँ की इस करुणा की अभिव्यक्ति के लिये उस समय दीदी के पास भाषा कहाँ थी? दीदी तो परमानन्द में मग्न थीं ।

श्री श्री माँ के चरणों का एक नख कुछ काला हो गया था । दीदी उसमें बहुत देर तक तेल लगाती रहती थीं । एक बार दीदी ने माँ से प्रार्थना की कि आप इस नख को ठीक कर लो । तब माँ ने कहा, "मैंने तो तुम्हारे लिये ही इस नख को ऐसा कर रखा है कि तुम्हें इसमें तेल लगाते हुए आनन्द आता है ।" ऐसी दयामयी माँ की तुलना कहाँ है ?

दीदी के अन्तिम समय में करुणामयी माँ स्वयं बम्बई जाकर अपने साथ दीदी को दीदी के कर्मक्षेत्र, मुक्तिक्षेत्र काशीधाम में ले आईं । माँ वृन्दावन चली गईं ।

जिन चरणों का सहारा लेकर वर्षों पूर्व दीदी ने अपना कर्ममय अध्यात्म जीवन प्रारम्भ किया था, श्री श्री माँ के चित्र में दृष्टि निबद्ध कर इन मातृ चरणों का ही ध्यान करती हुई दीदी की आत्मज्योति मातृचरणों की दिव्यज्योति में चिरकाल के लिये समाहित हो गई ।

दीदी के आदर्श, दीदी की मातृ चरणों में निष्ठा दीदी का माँ के प्रति अविचल विश्वास अध्यात्म गगन में ध्रुवज्योति के समान चिरकाल तक सत्यपथ के पथिकों को मार्गदर्शन करते रहेंगे।

आर्यां गुरुप्रियां वन्दे वन्दे मातुः परांप्रियाम् ।
कन्यापीठप्रियां वन्दे वन्दे तां जगतां प्रियाम् ।।

●

आदरणीया दीदी गुरुप्रिया की जन्मशती
तथा
माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की हीरक जयन्ती-महोत्सव

महाजनों की जीवन ज्योति को काल की परिधि में सीमित नहीं किया जा सकता है। कारण उस महाजीवन के ज्योतिर्मय आलोक से आलोकित होते रहते हैं और भी अनेक जीवन अनादि अनन्त काल पर्यन्त।

फिर भी उस पुण्यमय आविर्भाव क्षण को पुनः पुनः स्मरण कर उनकी अमर-कीर्ति का गुणगान कर उनके प्रति कृतज्ञता अर्पण कर उनकी ज्ञानगङ्गा की निर्मल धारा में अभिषिक्त होकर मानव महिमामय पथ पर आरोहण करता है। अतः प्रतिवर्ष महासमारोह पूर्वक महाजीवन की वह पुण्यमयी तिथि अनुष्ठित होती है देश-देश में, नगर-नगर में।

अभी हाल ही में ऐसे ही एक महाजीवन की शताब्दी मनायी गयी बड़े ही उत्साह से। वह अमर नाम है दीदी गुरुप्रिया का। भारत के अध्यात्म-इतिहास में श्री श्री माँ आनन्दमयी के नाम के साथ दीदी गुरुप्रिया का नाम भी स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। श्री श्री माँ के दिव्य जीवन की आभा से आलोकित था दीदी गुरुप्रिया का जीवन।

एक बार दीदी गुरुप्रिया के जन्मदिन पर कन्यापीठ की अध्यापिका कुमारी सती दत्त गुप्त ने श्री श्री माँ से कहा, "हमलोग दीदी का जन्मदिन मनायेंगे, किस प्रकार का अनुष्ठान करना उचित होगा।" माँ ने कहा, "दीदी का जीवन संयमित था। तुमलोग दीदी के जन्मदिन पर संयम-व्रत रखना।"

सन् १९५४ अथवा ५५ की बात है। उस समय दीदी अस्वस्थ थीं। श्री श्री माँ के ख्याल से सती दी के मन में आया कि जन्म-दिन मनाने से आयु वृद्धि होती है। उसी समय से उनका जन्मदिन मनाने का सूत्रपात हुआ।

काशी के आश्रम स्थित कन्यापीठ में दीदी का जन्मदिन मनाने का आयोजन किया गया। श्री श्री माँ के निर्देशानुसार कन्यापीठ के नीचे वाले बरामदे में एक कुर्सी पर दीदी को बैठाया गया। तदनन्तर उन्हें माला, वस्त्र, फलादि अर्पित किये गये। कन्यापीठ की बड़ी लड़कियों एवं बालिकाओं ने उनको अपने-अपने भाव-सुमन सुन्दर शब्दों में अर्पित किये। उस दिन संयम-व्रत का पालन किया गया।

माँ के आदेश-निर्देशों का पालन करना ही दीदी का एकमात्र मन्तव्य था। अतएव चुपचाप बैठकर उस समय इन्होंने ये सब कृत्य करवा लिये, किन्तु बाद में उन्होंने लड़कियों से कहा कि

तुमलोगों ने यह सब क्या प्रारम्भ किया? इस दिन से ही दीदी का जन्मदिन मनाने का अनुष्ठान प्रारम्भ हुआ।

इसी दिन प्रतिवर्ष उनके जन्मदिन का अनुष्ठान जीवितावस्था में और उनके महाप्रयाण के बाद भी मनाया जाता है। कन्यायें प्रातः वेदपाठ करती हैं। उनके चित्र पर माल्यार्पण करके फल-मिठाई का भोग लगाकर आरती करती हैं एवं इस दिन संयम-व्रत भी अनुष्ठित होता है।

इधर कुछ वर्षों से दीदी का जन्मदिन संस्थापिका दिवस के रूप में मनाया जा रहा है। इस उपलक्ष में कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव का आयोजन होता है, जिसमें दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज अवश्य पधारने की कृपा करते हैं, जिससे यह उत्सव दिव्य आध्यात्मिक वातावरण का सृजन करता है।

इस वर्ष गुरुप्रिया दीदी के सौ वर्ष पूरे हुये। उनका चिरन्तन स्मारक एवं परमप्रिय कन्यापीठ होने के कारण सभी लोगों ने काशी में ही उनकी जन्म-शताब्दी समारोह-पूर्वक मनाने की सहमति व्यक्त की। तदनुसार जन्मशताब्दी - महोत्सव कई दिनों तक समारोह-पूर्वक मनाया गया। संयोग वश माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के साठ वर्ष पूरे होने के कारण इसके साथ ही हीरक जयन्ती महोत्सव भी समारोह-पूर्वक अनुष्ठित होने के कारण इस महोत्सव का महत्व और भी बढ़ गया। साथ ही आध्यात्मिक वातावरण की सृष्टि से सभी लोग प्रसन्न एवं धन्य हो गये।

१३ फरवरी, सन् १९९९, माघी संक्रन्ति को दीदी के जन्मदिन के उपलक्ष में संयम दिवस का पालन हुआ। आनन्दज्योतिर्मंदिर के प्रांगण में प्रातः काल एवं मध्याह में ध्यान, मौन, समवेत कीर्त्तन इत्यादि कार्य संपन्न हुये। इसके बाद श्री श्री माँ की षोडशोपचार पूजा कन्यापीठ की प्रधानाचार्या ब्र० जया ने की। पूजा के समय गीतश्री छवि बन्द्योपाध्याय ने भाव-विभोर कर देने वाला कीर्त्तन किया। इस दिन संयम के अनुरूप ही भोग की व्यवस्था की गई थी।

१३ फरवरी के मध्याह्न में गुरुप्रिया दीदी के जन्म-शताब्दी-समारोह के उपलक्ष में श्री श्री माँ आनन्दमयी अस्पताल में महामहिम काशी नरेश का मुख्य अतिथि कें रूप में शुभागमन हुआ। "माँ आनन्दमयी करुणा" की शाखा शिशु कल्याण द्वारा आयोजित कार्यक्रम में उन्होंने १०० गरीब बालक बालिकाओं को वस्त्र, फल एवं मिठाई वितरित की।

१३ फरवरी से २१ फरवरी तक प्रतिदिन प्रातः माँ की पूजा, भजन, समवेत गीताचंडी पाठ, भागवत पाठ तथा भोग होता था एवं सायं स्तव, रामायण पाठ, प्रवचन, दीदी के सम्बन्ध में व्याख्यान, इसके बाद सन्ध्या कीर्त्तन, आरती के पश्चात् अनुष्ठान की समाप्ति होती थी।

१३ फरवरी सायंकाल प्रसिद्ध भागवत विद्वान श्री रमेश भाई ओझा एवं बिहार के प्रसिद्ध संत श्री 'मामाजी' ने सरस एवं मधुर वाणी में भागवत-कथामृत का पान कराया।

१४ फरवरी को महाशिवरात्रि की चार प्रहर की पूजा अखण्ड भाव से कन्यापीठ में सम्पन्न हुई। इस अनुष्ठान में गीतश्री छवि दी ने पूजा की और अपना मधुर गायन बीच-बीच में सुललित ढंग से प्रस्तुत किया। इसी बीच कलकत्ता के प्रसिद्ध ध्रुपद गायक श्री अरुण भट्टाचार्य ने माँ अन्नपूर्णा मंदिर के बरामदे में ध्रुपद गायन से लोगों का मन मोह लिया।
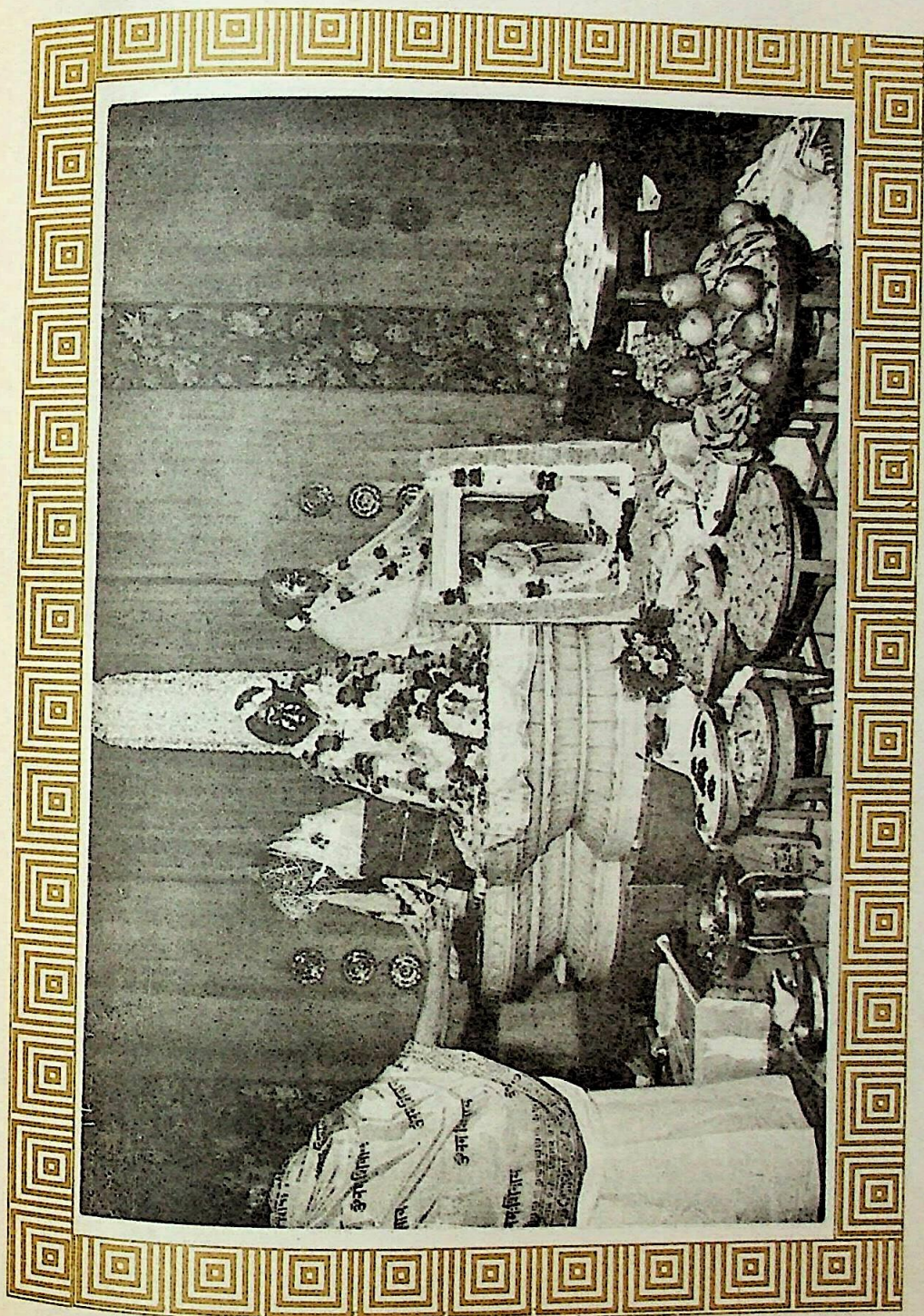
Special puja of Ma being held in Ananda Jyoti Mandir on 13th February, 1999, Didi Gurupriya's 100th birthday.

Unveiling of Didi Gurupriya's Photo by
Pujya Swami Chidanandaji Mahara' - on 19th February, 99
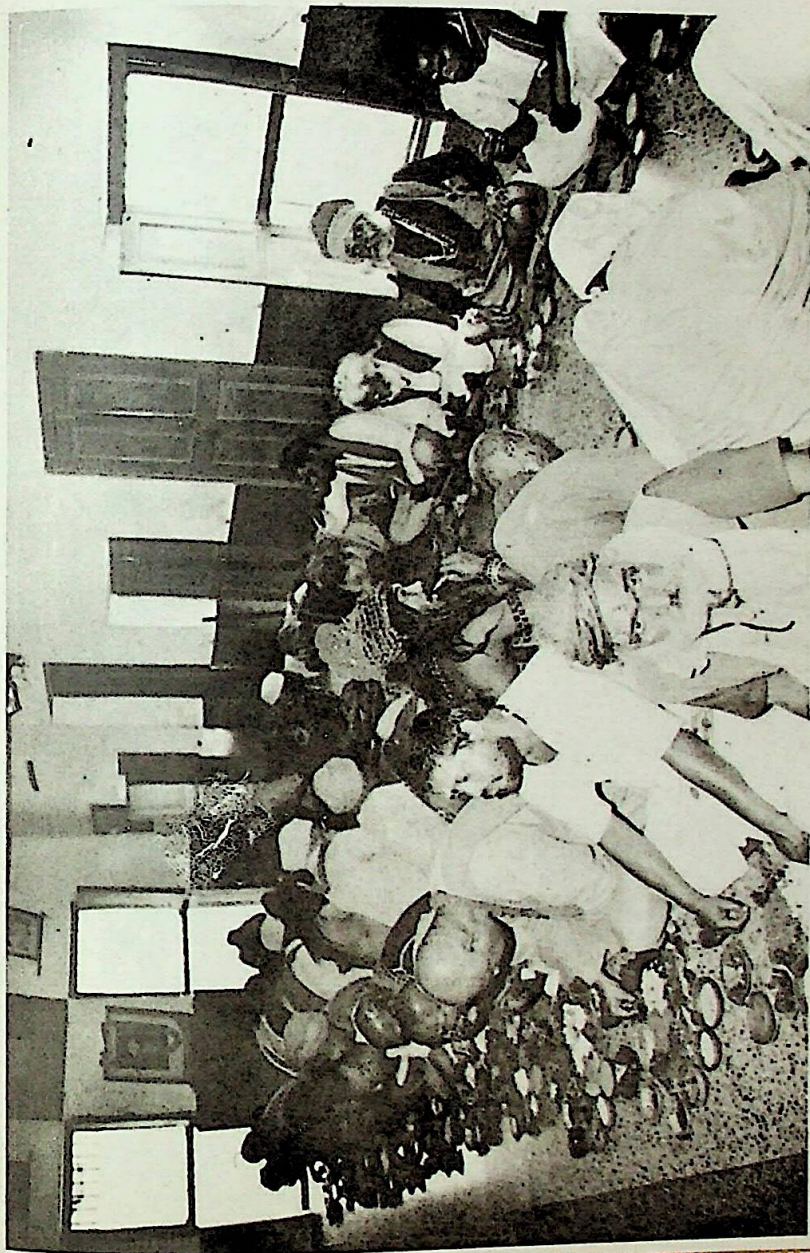
A view of the sadhu bhandara on the occasion of
Didi Gurupriya's birth centenary.celebration - 19" February, 99

Kumari bhojan on the same occasion - 20th February, 99
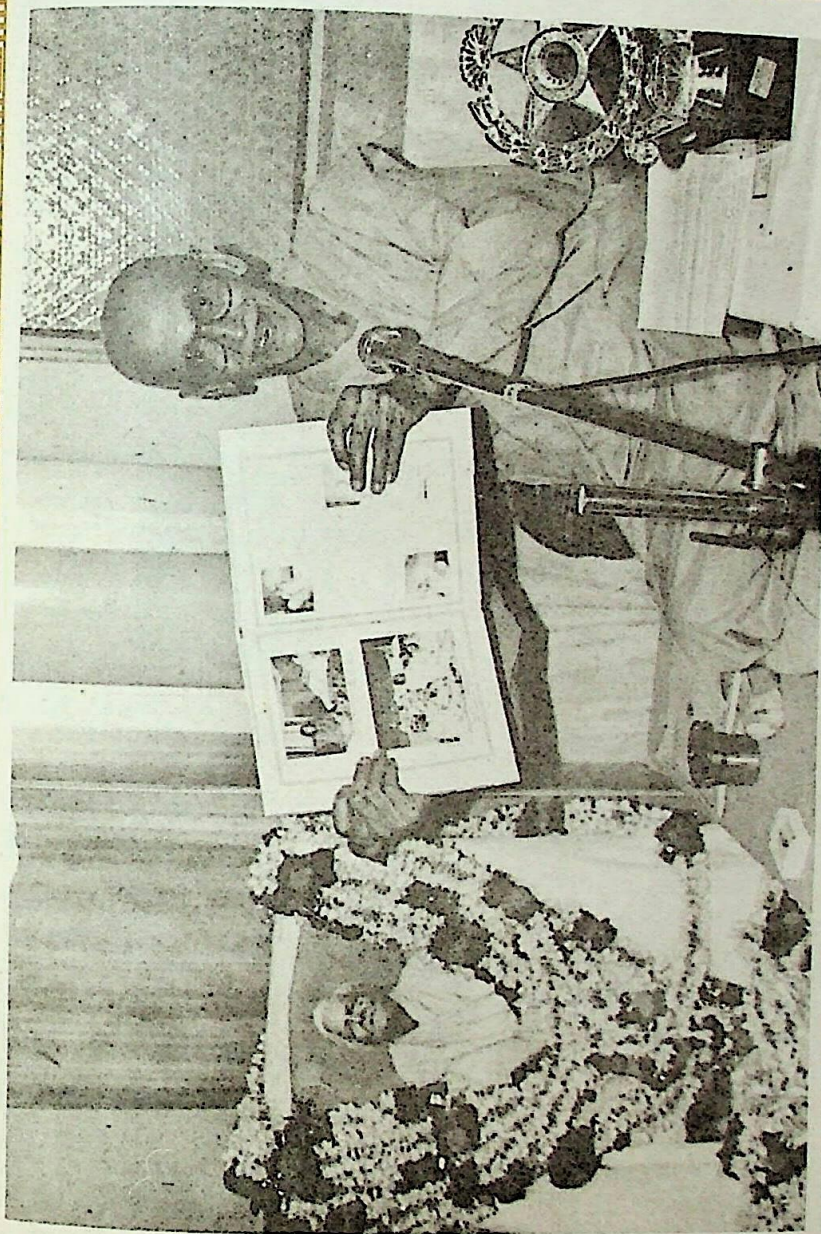
The pictorial biography of Didi Gurupriya being released by
Pujya Swami Chidanandaji Maharaj -19th February, 99
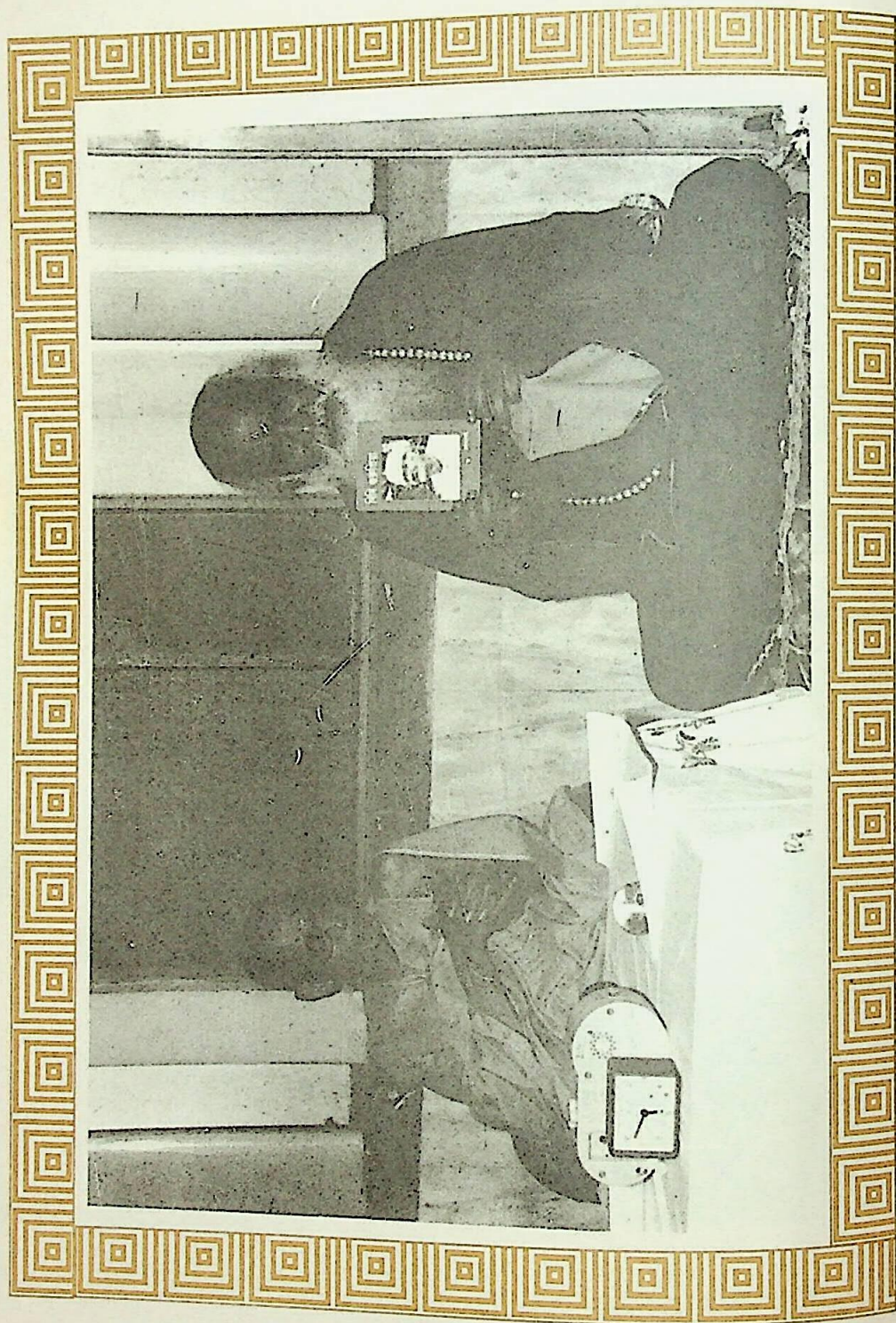
A book on Didi Gurupriya being released by
M.M. Swami Devanandaji Saraswati -20th February, 99
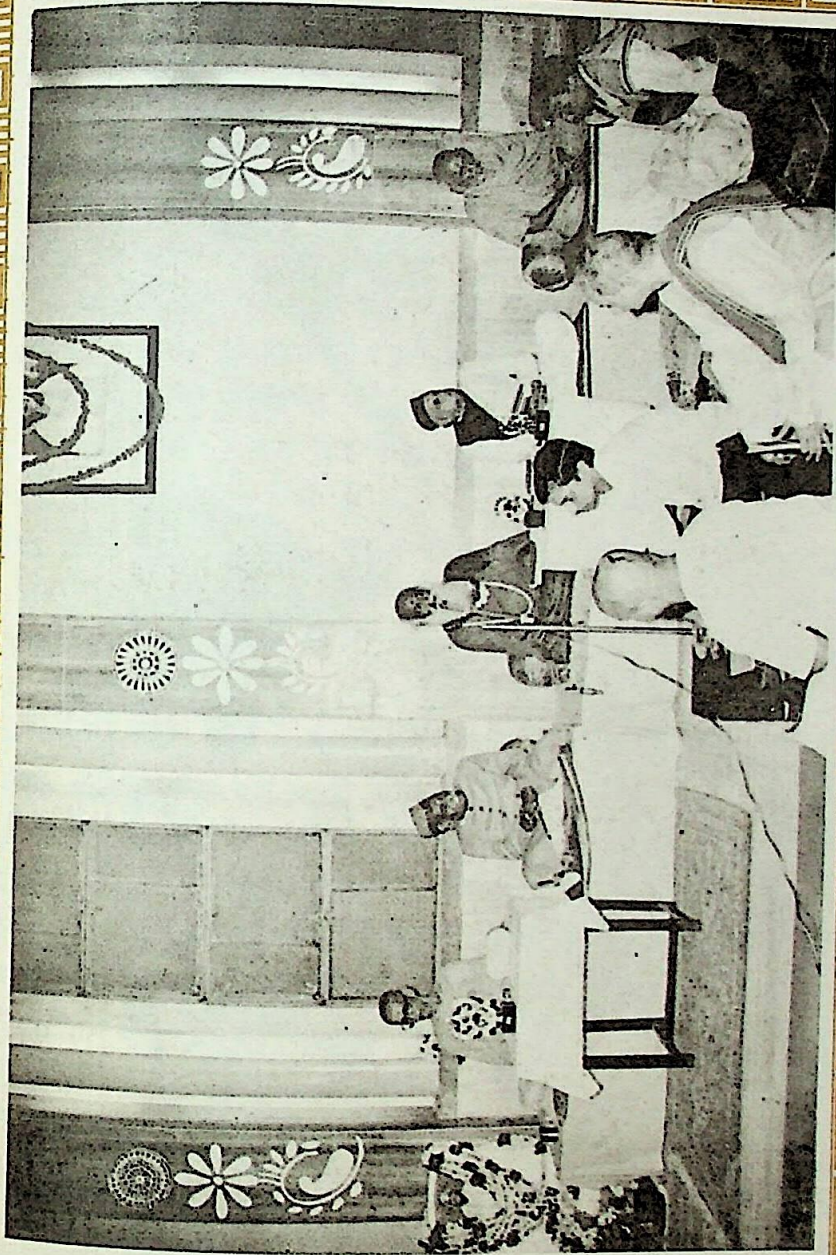
A scene from the inaugural centenary function on 19th February, 1999 in the Ananda Jyoti Mandir.
M.M. Swami Devananda Saraswati addressing the audience with Pujya Swami Chidanandaji and Maharaja Benares on his right and Dr. Mandan Mishra, V.C, Sampurnananda University and Swami Bhaskaranandaji on the left.
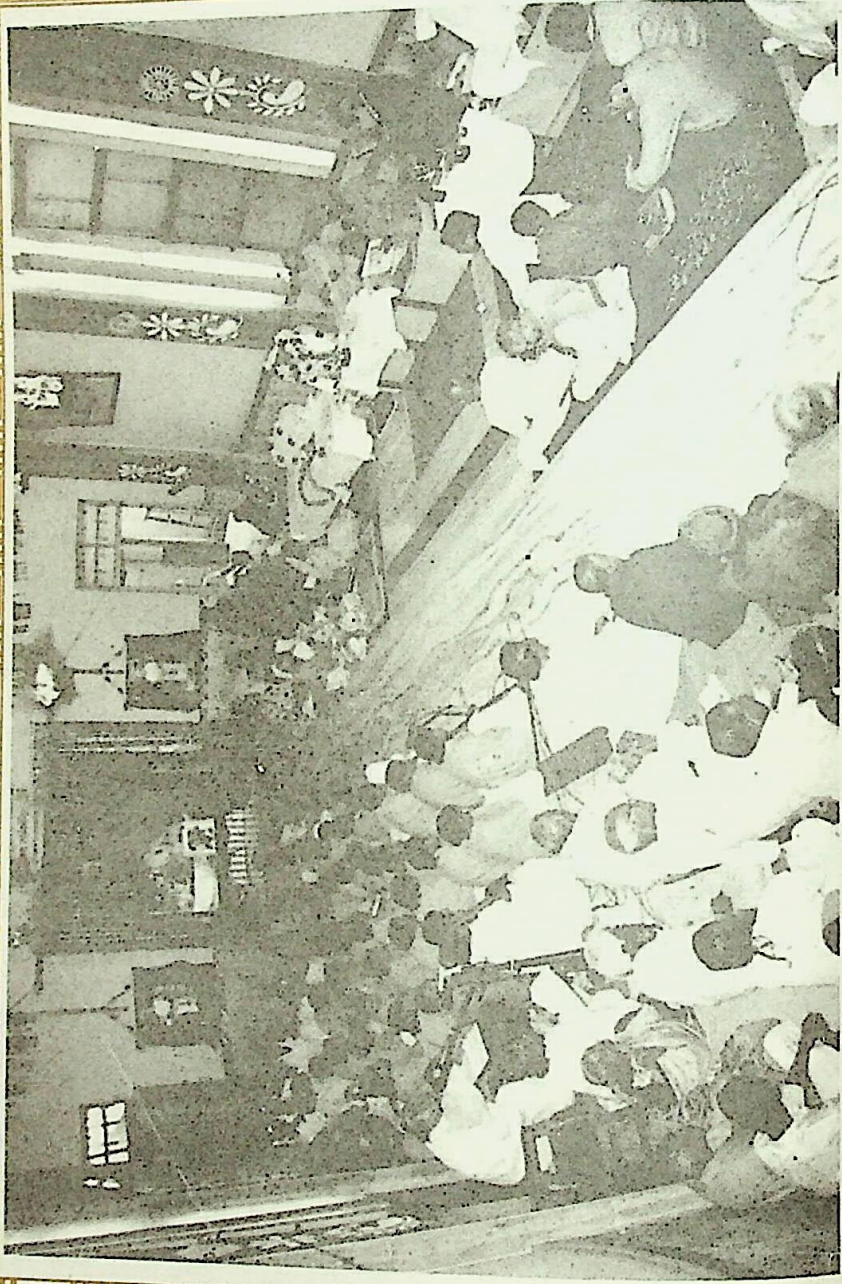
A view of the inaugural function in the Ananda Jyoti Mandir -19th February, 1999.

१५ फरवरी को सायंकाल कीर्तन के पश्चात् कलकत्ता से आए हुए संगीतशिल्पी श्री तारक पाल के ध्रुपद एवं श्यामासंगीत के पश्चात् प्रसिद्ध रामायणी श्री श्रीनाथ मिश्र जी ने सरस एवं सुमधुर वाणी में रामायण की कथा सुनाई ।

प्रसिद्ध दार्शनिक सुधी प्रवर डॉ० निलिनी ब्रह्म के सुयोग्य पुत्र श्री गुरुप्रसाद ब्रह्म ने प्राञ्जल भाषा में दीदी के विषय में व्याख्यान दिया ।

१७ फरवरी को सायंकाल भोलागिरि आश्रम के महामण्डलेश्वर श्रद्धेय १००८ स्वामी देवानन्द सरस्वती महाराज का हरिद्वार से शुभागमन हुआ । इनको इस उत्सव में विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया था ।

१८ फरवरी से २१ फरवरी तक प्रातःकाल माँ की पूजा के उपरान्त आश्रम के वयोवृद्ध महात्मा श्री भास्करानन्द जी महाराज पूज्य दीदी के विषय में सुन्दर बातें बताते थे । तत्पश्चात् श्रद्धेय स्वामी देवानन्दजी सारगर्भित भाषा में भावमग्न कर देने वाला प्रवचन देते थे ।

१८ फरवरी को ही संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति श्री वेङ्कटाचलम् जी ने दीदी की गुरुभक्ति के विषय में विस्तृत चर्चा की । इसके बाद स्वामी देवानन्द जी का भाषण हुआ । इसी दिन दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी का शुभागमन हुआ ।

नौं दिन चलने वाले इस महद् आयोजन के १९,२०,२१ के कार्यक्रम सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे । सर्वप्रमुख १९ ता० को श्री श्री माँ की पूजा तथा प्रवचन के बाद १०० साधुओं के भोजन का आयोजन हुआ । कन्यापीठ के हॉल और बरामदे में साधु भोजन के दर्शनीय दृश्य देख कर अपने को धन्य करने के लिए बहुत से लोग उपस्थित थे । श्री श्री माँ के निर्देशानुसार साधुओं को माला, चंदन, वस्त्र, दक्षिणा, फल एवं प्रसादी रूमाल पुस्तक देकर आरती की गई । यह हमारे लिए गौरव की बात है कि साधुओं के साथ परम श्रद्धेय स्वामी देवानन्दजी महाराज ने भी भोजन ग्रहण किया ।

अपराह्न ३.३० से प्रारंभ होने वाले कार्यक्रम में सभापति काशी नरेश महामहिम डॉ० विभूति नारायण सिंह जी, मुख्य अतिथि सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. मण्डन मिश्र जी, विशिष्ट अतिथि स्वामी चिदानन्दजी महाराज एवं स्वामी देवानन्द जी महाराज तथा स्वामी भास्करानन्दजी महाराज अपनी दिव्य उपस्थिति से सभा भवन को आलोकित कर रहे थे । इसमें महाराजकुमार अनन्तनारायण सिंह तथा राजकुमारियाँ भी उपस्थित थीं ।

इस दिन सर्वप्रथम कन्यापीठ की बालिकाओं के वेदघोष एवं शङ्खध्वनि के साथ ही महामहिम काशी नरेश एवं स्वामी चिदानन्द जी महाराज द्वारा दीदी के दो चित्रों का अनावरण हुआ । तत्पश्चात् कार्यक्रम का प्रारंभ माल्यार्पण से हुआ । सर्वप्रथम महात्माओं एवं विशिष्ट अतिथियों ने दीदी के चित्र पर माल्यार्पण किया । प्रधानाचार्या ब्र. जया भट्टाचार्या ने स्वागत-भाषण दिया । पूज्य महात्माओं एवं विशिष्ट अतिथियों को माल्यार्पण किया गया ।

कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों ने 'शुभ्र समुज्जवल' इस नजरूलगीति को उद्बोधन संगीत के रूप में प्रस्तुत किया । कन्यापीठ की अध्यापिका द्वारा रचित संस्कृत कविता को छोटी बालिकाओं ने

गाया। इसके बाद विविध भाषाओं में बालिकाओं ने दीदी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित की। देशी भाषा यथा – संस्कृत, हिन्दी, बंगला, गुजराती, मराठी, उड़िया, पंजाबी, कन्नड़, तमिल एवं विदेशी भाषा नेपाली, अंग्रेजी, जर्मन, इटैलियन; इन भाषाओं के द्वारा श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गई।

गुरुप्रिया दीदी की शताब्दी के उपलक्ष में विशेष रूप से प्रकाशित 'ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया' नामक सचित्र जीवनी-ग्रन्थ का विमोचन स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज के कर-कमलों द्वारा संपन्न हुआ। इस ग्रन्थ की सबने भूरि-भूरि प्रशंसा की।

इसके पश्चात् गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय ने रवीन्द्रसंगीत तथा कन्यापीठ की अध्यापिका द्वारा विरचित हिन्दी स्तुति गाकर दीदी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित की।

इस अवसर पर माननीय विशिष्ट अतिथियों को श्री गुरुप्रिया देवी स्मृति-चिह्न प्रदान किया गया।

दीदी की जन्मशती एवं कन्यापीठ की हीरक जयन्ती के अवसर पर कन्यापीठ के संबन्ध में कन्यापीठ की अध्यापिका गुणीता जी ने विवरण प्रस्तुत किया।

स्वामी भजनानन्द जी (पुष्प दी) ने दीदी के प्रिय गीत 'आमार माथा नतो करे दाओ हे तोमार' रवीन्द्र संगीत गायन के द्वारा दीदी के प्रति श्रद्धा-सुमन अर्पित किये।

माननीय अतिथियों में काशी हिन्दू विश्व विद्यालय के भूतपूर्व अध्यापक एवं डीन डॉ. रेवा प्रसाद द्विवेदी एवं कन्यापीठ के अध्यापक पंडित श्री द्वारकाप्रसाद जी ने संक्षिप्त भाषण दिया।

मुख्य अतिथि सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. मण्डन मिश्र के भाषण के पश्चात् विशिष्ट महात्माओं ने दीदी के प्रति भावभीनी शब्द-प्रसूनाञ्जलि समर्पित की। स्वामी भास्करानन्द जी के दो शब्द व्यक्त करने के पश्चात् आनन्दमयी संघ के अध्यक्ष श्री गोविन्द नारायण जी के पत्र को डॉ. देवप्रसाद मुखोपाध्याय ने पढ़ा। सभापति महामहिम काशी नरेश के सार-गर्भित भाषण के उपरान्त मातृ-स्तव गान के द्वारा सभा सम्पन्न हुई।

२० फरवरी प्रातः काल मातृ-पूजा के अनन्तर १०० कुमारियों का पूजन हुआ। कन्यापीठ के हॉल तथा बरामदे में छोटी-छोटी कुमारियों को वस्त्र, माला, चंदन से सजाकर आरती की गई एवं भोजन कराया गया। कुमारी पूजा के समय स्वामी चिदानन्द जी, स्वामी देवानन्द जी, स्वामी भास्करानन्द जी आदि विशिष्ट महात्मागण भी उपस्थित थे।

इसी दिन अपराह्न ३:३० से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। इस दिन १०८ स्वामी देवानन्द जी सभापति थे तथा स्वामी चिदानन्दजी मुख्य अतिथि थे।

बालिकाओं की वेदध्वनि द्वारा सभा की शुरुआत हुई। स्वागत एवं माल्यार्पण के पश्चात् श्री शैलेश ब्रह्मचारी द्वारा रचित 'दीदी' कविता की आवृत्ति कन्यापीठ की छात्रा ज्योत्स्ना राय ने की।

कन्यापीठ की ज्येष्ठ ब्रह्मचारिणियों द्वारा दीदी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करना ही आज का विशेष कार्यक्रम था। सर्वप्रथम दीदी के प्रति अपना आभार व्यक्त किये गये ब्र. निर्वाणानन्दजी के पत्र को ब्र. विशुद्धा जी ने पढ़कर सुनाया। श्रद्धाञ्जलि देने वालों के नाम इस प्रकार हैं – कन्यापीठ की प्राक्तन प्रधानाचार्या ब्र. चन्दन जी, कन्यापीठ की वर्तमान प्रधानाचार्या ब्र. जया जी, ब्र. विशुद्धा जी, गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय, स्वामी भजनानन्द जी (पुष्प जी) तथा श्री नरेन चौधरी की कनिष्ठ कन्या एवं दीदी की मन्त्र शिष्या मणि चौधरी इत्यादि।

श्री श्री माँ की सेविका एवं दीदी की प्रिय ब्र. अनसूया जी ने टेलीफोन द्वारा एक कविता दीदी के प्रति श्रद्धा के रूप में अर्पित की, जिसे कन्यापीठ की अध्यापिका ब्र. लक्ष्मी ने पढ़कर सुनाया। कन्यापीठ की अध्यापिका ब्र. गीता जी के दीदी के प्रति भाव पुष्पाञ्जलि अर्पित करने के उपरान्त बालिकाओं ने दीदी का प्रिय भजन 'ये गर्वभरा मस्तक मेरा' प्रस्तुत किया ।

कन्यापीठ की वरिष्ठ ब्रह्मचारिणियों ब्र. चंदन जी को एवं ब्र. विशुद्धा जी को कन्यापीठ के प्रथम आचार्य तथा एम. ए. के लिंए स्वर्णपदक प्रदान कर सम्मानित किया गया। कन्यापीठ के समस्त अध्यापक एवं अध्यापिकाओं को उत्कृष्ट अध्यापन एवं सेवाप्रदान के लिए 'श्री गुरुप्रिया देवी' स्मृति चिह्न पुरस्कार रूप में दिया गया।

श्रद्धेय स्वामी देवानन्द सरस्वती जी के द्वारा बंगला भाषा में लिखित 'श्रद्धार्घ्य' पुस्तक का विमोचन हुआ।

इस दिन हिन्दी 'आनन्दवार्ता' के प्राक्तन संपादक एवं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापक डॉ. राममोहन पाण्डेय सभा में उपस्थित थे। मुख्य अतिथि स्वामी चिदानन्द जी तथा सभापति स्वामी देवानन्द जी के भाषण के पश्चात् दीदी का प्रिय संगीत श्री द्विजेन्द्र लाल राय द्वारा विरचित 'पतितोद्धारिणी गङ्गे माँ' इस गङ्गा महिमा के गान द्वारा सभा की समाप्ति हुई।

२१ फरवरी प्रातः काल पूजा, प्रवचन आदि के पश्चात् गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय का सुमधुर पदावली कीर्त्तन हुआ।

इसी दिन माँ आनन्दमयी अस्पताल में श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज तथा महामण्डलेश्वर देवानन्द जी महाराज के कर-कमलों द्वारा प्रसाद के रूप में फल एवं मिठाई वितरित की गई। डॉक्टर एवं अन्य कर्मचारियों को भी प्रसाद दिया गया। अस्पताल के प्रांगण में १००दरिद्र नारायण की सेवा की व्यवस्था की गई थी।

अपराह्न ३:३० से सभा प्रारम्भ हुई। इस दिन कन्यापीठ का वार्षिकोत्सव दिवस था। श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज सभापति थे। सर्वप्रथम बालिकाओं की वेद-ध्वनि तथा सरस्वती-वन्दना द्वारा सभा प्रारम्भ हुई। स्वागत-भाषण एवं माल्यार्पण के पश्चात् कुलगीत हुआ। कन्यापीठ की छात्राओं द्वारा भारत-वन्दना, अंग्रेजी कविता, बंगला रवीन्द्र संगीत का गान किया गया। श्रीमद् भागवत् के अन्तर्गत गोपी-गीत को संस्कृत एवं नेपाली भाषा में बालिकाओं ने गाकर सुनाया। दीदी से संबंधित निबन्ध प्रतियोगिता में वरिष्ठ वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाली ब्र. प्रतिभा भारद्वाज तथा कनिष्ठ वर्ग में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाली ब्र. सिद्धिदात्री भारद्वाज ने अपने निबन्ध के कुछ अंश पढ़कर सुनाये। विशिष्ट स्थान प्राप्त करने वाली ब्र. शिप्रा मिश्र ने अपने निबन्ध का कुछ अंश पढ़कर सुनाया।

जॉन मिल्टन की प्रसिद्ध कविता 'On his blindness' की आवृत्ति के पश्चात् भक्ति एवं ज्ञान के विषय में वाद-विवाद हुआ। देश गान के पश्चात् शास्त्रीय संगीत राग-देश पर वन्दिश आलाप, तान एवं तराना इत्यादि के पश्चात् 'मोर वीणा उठे कोन शुरे बाजि' रवीन्द्र संगीत की प्रस्तुति हुई। तदुपरान्त राग पर आधारित कन्यापीठ की अध्यापिका द्वारा रचित 'नमो-नमो गुरुप्रिया मातृप्रिया' गीत को प्रस्तुत किया गया।

तत्पश्चात् कन्यापीठ की वार्षिक पत्रिका 'आदरिणी' का विमोचन श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज के द्वारा हुआ । कन्यापीठ के संक्षिप्त विवरण पाठ के बाद बालिकाओं को पुरस्कार वितरित हुआ ।

डॉ. देवप्रसाद मुखोपाध्याय ने दीदी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित की. । श्री श्री माँ के अति पुरातन भक्त श्रद्धेय उपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय की कन्या श्रीमती गीता चटर्जी ने संगीत के माध्यम से दीदी के चरणों में श्रद्धाञ्जलि अर्पित की ।

इस दिन के मुख्य अतिथि सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय एवं काशी विद्यापीठ के प्राक्तन कुलपति पद्मभूषण डॉ. विद्यानिवास मिश्र जी थे । उनके भाषण के पश्चात् प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती बेटिना ने हिन्दी में अपनी श्रद्धा अर्पित की ।

सभापति के पद से स्वामी चिदानन्दजी के भाषण के पश्चात् धन्यवाद ज्ञापनानन्तर मातृ नाम संकीर्तन के द्वारा यह नौ दिन व्यापी अनुष्ठान समाप्त हुआ ।

दीदी माँ की अमरगाथा की रचयित्री हैं । अतः उनकी अमर कीर्ति देश विदेश चारों ओर फैली हुई है । दीदी सबकी प्रिय हैं । अतः विदेश से भी भक्तलोग इसमें भाग लेने के लिए सम्मिलित हुए तथा आकर हमारा उत्साहवर्धन किया ।

प्रत्यक्षदर्शी श्री श्री माँ के पुरातन भंक्त श्री जगदीश्वर पाल ने इस उत्सव में योगदान करके अपना विचार इस प्रकार व्यक्त किया है :–

"२० वीं शती महामानवों के शुभ-आविर्भाव के उपलक्ष में, जन्म शताब्दी के कारण भी इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी जायेगी । सन् १९३५ में श्री रामकृष्ण परमहंस देव की जन्म शताब्दी मनायी गई थी । ५० के दशक में श्री माँ शारदादेवी की जन्मशताब्दी, ६० के दशक में श्री रवीन्द्रनाथ एवं स्वामी विवेकानन्द जी की जन्मशताब्दी, ७० के दशक में श्री अरविन्द की, ८० के दशक में महामहोपाध्याय श्री गोपीनाथ कविराज की, एवं ९० के दशक में ही हम मना रहे हैं, श्री श्री माँ आनन्दमयी तथा उनकी लीला सहचरी ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया दीदी की जन्म-शताब्दी" । रामकृष्ण मिशन के प्रतिष्ठाता स्वामी विवेकानन्द हैं और श्री श्री माँ आनन्दमयी संघ तथा विभिन्न आश्रमों को बनाने वाली तथा रूप देने वाली श्री गुरुप्रिया दीदी हैं ।

श्री गुरुप्रिया दीदी को हम स्नेहमयी दीदी के रूप में ही जानते थे पर उनकी जन्म शताब्दी तथा कन्यापीठ की हीरकं-जयन्ती मे यदि उपस्थित न होते तो उनके विशाल कर्मों की यज्ञहोत्री तथा एक सफल रूपकार का पता हमें न लगता ।

पूज्य स्वामी चिदानन्दजी महाराज ने यह उत्सव कैसे अनुष्ठित होगा, इसका एक रूप देकर तथा अनेक परामर्श देकर हमें प्रबुद्ध किया, उन्हें हम सादर श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर रहे हैं ।

उत्सव के आदि से अन्त तक श्री श्री माँ के अमोघ ख्याल तथा अपार करुणा की अनुभूति हुई । श्री श्री माँ के दिव्य ख्याल से ही उत्सव पूर्ण रूप से सफल हो सका एवं उत्सव सर्वाङ्गसुंदर हुआ । अतः श्री श्री माँ के चरण-कमलों में कोटि-कोटि प्रणाम करते हुए दीदी को प्रणाम ।

उत्सव के समापन पर कन्याओं के द्वारा गाया हुआ यह गीत सर्वत्र गुंजित होने लगा–

"नमो नमो गुरुप्रिया, ओगो तुमि मातृप्रिया"

उत्सवों पर आलोकपात

श्री श्री माँ की असीम अनुकम्पा से यह उभय विलक्षण मंगलमय क्षण उपस्थित हुआ है । एक ओर यह श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ का हीरक जयन्ती-वर्ष है दूसरी ओर संस्था की आधारशिला ब्रह्मचारिणी दीदी गुरुप्रिया का जन्म-शताब्दी वर्ष है । दीदी गुरुप्रिया एवं कन्यापीठ का अन्योन्याश्रय संबंध है । अतः आज दैवयोग से हीरक जयन्ती-वर्ष परमादरणीया गुरुप्रिया दीदी की जन्मशती से सुशोभित है तथा दीदी की जन्मशती हीरक-जयन्ती से ।

"माँ आनन्दमयी कन्यापीठ" दीदी गुरुप्रिया के महनीय जीवनादर्श का अनुपम दृष्टान्त है । परमादरणीया गुरुप्रिया दीदी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य था श्री श्री माँ के श्री चरणों का एकान्त आश्रय ग्रहण करना एवं उसी के द्वारा जीवन को सफल बनाना । आदरणीया दीदी ने इस परम आनन्दमय अमूल्य निधि को केवल अपने में ही सीमित न रखा अपितु इसकी प्राप्ति के उपाय स्वरूप आपने "माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों की जीवनचर्या में इसी लक्ष्य को प्रधान रखने का केवल निर्देश ही नहीं दिया, अपितु उन्हें इस मार्ग पर हाथ पकड़कर अग्रसर किया ।

सन् 1938 में हरिद्वार में गंगा तट पर "पीत कुटी" में जब "दो कन्याओं" को लेकर इस संस्था की स्थापना हुई थी, उस समय किसी के यह कहने पर कि ये बालिकायें अपने माता-पिता एवं परिवार-प्रियजन छोड़ यहां आयी हैं इन्हें कितना दुःख लग रहा होगा, श्री श्री मा ने कहा था "दुःख की क्या बात है यह तो अपने असली माता-पिता के पास आयी हैं ।"

दीदी गुरुप्रिया के एकनिष्ठ आत्म-समर्पण, त्याग एवं तितिक्षा का परिणाम है कि बाह्य दृष्टि से आडम्बर रहित होने पर भी आज के इस विभीषिकामय विषय-प्रमुख जगत् में भी यह संस्था चल रही है । इस संस्था में अध्ययनरत ब्रह्मचारिणियों ने सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से आचार्य परीक्षा में स्वर्ण-पदक प्राप्त किये तथा विद्यावारिधि की उपाधियाँ भी प्राप्त कीं । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से भी एम.ए,, पी-एच.डी. आदि की उपाधि प्राप्त की । श्री श्री माँ ने दीदी से कहा, "दीदी यह सब तुम्हारे लिए हुआ ।" दीदी ने अति सरलता से श्री श्री माँ के चरणों की ओर निर्देश करते हुए कहा, "यह सब इन्हीं चरणों की महिमा है ।"

यह केवल वचन मात्र ही नहीं । यही यथार्थ सत्य है और आज भी हम इसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं कि एकमात्र श्री श्री माँ का अनुपम ख्याल ही संस्था को संचालित कर रहा है ।

इस पुण्यमय क्षण में श्री श्री माँ के चरणों में हमारी यह प्रार्थना है कि आने वाले दिनों में भौतिकवाद के प्रचण्ड आवर्त में पड़कर भी कन्यापीठ अपने लक्ष्य से च्युत न हो अपितु श्री श्री माँ के चरणों का एकान्त आश्रय लेकर गुरुप्रिया दीदी की कीर्ति-पताका फहराता रहे ।

गुरुप्रिया दीदी के महनीय आदर्श को यथार्थ में परिणत करने वाली माँ के कतिपय भक्तों की ऐसी कन्यायें थीं जिनका उल्लेख आज अनिवार्य है, जिनमें इलाहाबाद के श्री नीरजनाथ मुखर्जी की

कन्या रेणु मुखर्जी, डा0 गिरीन मित्र की कन्या सावित्री मित्र "क्षमा दीदी" तथा बरेली के मातृ-भक्त श्रीमती महारतन जसपाल की कन्या स्वर्ण कुमारी "बिल्लो दी" प्रमुख हैं । इनमें रेनु दीदी एवं क्षमा दीदी आज भी हैं । इनके त्याग एवं स्नेह से कन्यापीठ ने घुटनों के बल पर चलकर अपने पैरों पर खड़ा होना सीखा । हम इनकी महती सेवा का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं । इनके साथ ही हमारी भूतपूर्व अध्यक्षा सुश्री ललिता पाठक तथा डॉ० पदमा मिश्रा के प्रति हमारा मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है ।

इस मंगलमय अवसर पर कन्यापीठ की उन ब्रह्मचारिणियों का हम अभिनन्दन करते हैं, जिन्होंने दीदी गुरुप्रिया के महान् आदर्श को सार्थक किया ।*

●

* ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया जन्म-शताब्दी-समारोह तथा श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के हीरक-जयन्ती-उत्सव के अवसर पर प्रदत्त भाषण का सारांश ।

आश्रम-संवाद

१) आगरपाड़ा–

शान्त, सुरम्य गंगा तट पर अवस्थित श्री श्री माँ के आगरपाड़ा के आश्रम में इस बार भी शारदीय दुर्गापूजा यथारीति अनुष्ठित हुई । श्री दुर्गापूजा, श्री कालीपूजा एवं अन्नकूट, इन तीनों उत्सवों में प्रायः पाँच हजार भक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया । उन दिनों सायं प्रातः दोनों समय सत्संग की व्यवस्था भी की गई थी ।

विगत २६ एवं २७ जनवरी को वार्षिक नामयज्ञ का भी आयोजन हुआ । गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय के द्वारा नामयज्ञ का अधिवास प्रारंभ हुआ । इसके पश्चात् नित्य सत्संग में भाग लेने वाली तथा अन्य भक्त महिलाओं ने रात भर कीर्तन किया ।

दूसरे दिन सूर्यास्त पर्यन्त सब भक्तों ने मिलकर धूम-धाम से कीर्तन किया । मध्याह्न में महाप्रभु का भोग एवं भक्तों को प्रसाद वितरण किया गया ।

यहाँ नित्य शताधिक भक्त-महिलाओं द्वारा शाम को सामूहिक सत्संग होता है । इसके अतिरिक्त प्रत्येक महीने के द्वितीय रविवार को अखंडनाम संकीर्त्तन एवं सायं ध्यानपीठ विशेष सत्संग का आयोजन किया जाता है । श्री श्री माँ के निर्देशानुसार प्रत्येक रविवार को अखंड जप भक्तों के द्वारा सुसंपन्न होता है ।

आगरपाड़ा आश्रम के सभापति श्री अनिलकुमार देवानजी के द्वारा भारत सेवाश्रम के सभापति को २०,०००/- रुपये का चेक, दस साड़ियाँ, एक कुन्तल चावल बाढ़ पीड़ित लोगों के सहायतार्थ दिया गया ।

विगत १३ फरवरी माघी संक्रान्ति के पुण्य पर्व पर परमादरणीय श्री गुरुप्रिया दीदी के जन्मशताब्दी-उत्सव कें उपलक्ष में यहाँ श्री श्री माँ की पूजा, भोग, कुमारी पूजा एवं कुमारी भोजन, साधु भंडारा, दरिद्रनारायण सेवा, सत्संग आदि का आयोजन हुआ था ।

१४ फरवरी को महाशिवरात्रि व्रत का पालन हुआ ।

२) देहरादून–

देहरादून के किशनपुर स्थित आश्रम में २२ जनवरी वसन्तपंचमी के दिन श्री सरस्वती पूजा हुई । कल्याण वन के पुजारी पंडित श्री रवीन चटर्जी ने श्री श्री माँ की पूजा की एवं आश्रम के पुजारी श्री रमाकान्त पांडे ने होम किया ।

३) तारापीठ–

वीरभूम ज़िले के अन्तर्गत पुण्य भूमि तारापीठ में श्री श्री माँ के आश्रम में ३१ जनवरी को माघी पूर्णिमा का उत्सव भलीभाँति सुसंपन्न हुआ ।

स्वामी निर्मलानन्दजी एवं गीतश्री छवि वन्द्योपाध्याय की उपस्थिति से सबने आनन्द का अनुभव किया। स्वामी निर्मलानन्दजी ने दो दिन अपने प्रवचन से भक्तों को आनन्दित किया। छविदी एवं अन्य संप्रदाय की कीर्त्तनपार्टियों के द्विदिवसीय नामसंकीर्त्तन से दिशायें पवित्र हुईं। कलाकारों का सुललित गायन भी आनन्ददायक था। इसके साथ-साथ महारुद्र होम की स्वाहा-स्वाहा ध्वनि भी निरन्तर गूँज रही थी।

पहली फरवरी सोमवार को साधुभंडारा के पश्चात् उत्सव की समाप्ति हुई।

४) पूना–

पूना के श्री श्री माँ के आश्रम में १२ फरवरी से १४ फरवरी तक महाशिवरात्रि के उपलक्ष में महारुद्र पूजा एवं होम हुआ।

इस उत्सव के उपलक्ष में १२ फरवरी को प्रातःकाल ६ लघुरुद्र पूजा, ॐ नमः शिवाय मंत्र का जप, पूजा आरती एवं अन्त में प्रसाद वितरण किया गया।

रविवार १४ फरवरी को श्री गणपति पूजन, नवग्रह देवताओं का पूजन, रुद्रहोम, पूर्णाहुति, आरती एवं प्रसाद वितरण सुसम्पन्न हुआ।

२ मार्च को होली के उपलक्ष में उदयास्त नाम संकीर्त्तन हुआ। प्रातःकाल श्रीमन्महाप्रभु की पूजा हुई। मध्याह्न में भक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया।

५) दिल्ली–

२१ फरवरी रविवार को दिल्ली के कालकाजी स्थित श्री श्री माँ आश्रम में श्री गुरुप्रियादीदी की शुभ जन्मशताब्दी के समारोह का आयोजन किया गया।

प्रातःकाल माँ की पूजा एवं भजन कीर्तन हुआ। वृन्दावन आश्रम के ब्र. स्वरूपजी ने श्रीमद्भगवद्गीता की। व्याख्या की श्री गुरुप्रिया दीदी के संबन्ध में भक्तों ने अपना-अपना अनुभव व्यक्त किया। श्रीमती नन्दिनी भट्टाचार्य ने तुलसी कृत रामचरित मानस का सुन्दर गायन प्रस्तुत किया। भोग के पश्चात् प्रसाद वितरण हुआ। उदयास्त नाम संकीर्तन भी संपन्न हुआ।

मार्च की पहली एवं दूसरी तारीख को होली के दिन श्री चैतन्यमहाप्रभु के शुभाविर्भाव के उपलक्ष में अखंड नामयज्ञ हुआ।

आश्रम में प्रत्येक मास के द्वितीय एवं अंतिम शनिवार को सांय ४ बजे से ६ बजे तक समवेत हनुमान चालीसा का पाठ होता है।

६) वृन्दावन–

वृन्दावन आश्रम में १३ फरवरी को श्री गुरुप्रिया दीदी का जन्म-शताब्दी-महोत्सव अनुष्ठित हुआ। इसके उपलक्ष में श्री श्री माँ की षोडशोपचार, पूजा, कुमारी पूजा, भजन कीर्तन गीताचण्डीपाठ, भागवत पाठ, भोग एवं गुरुप्रिया दीदी के सम्बन्ध में भाषण हुआ।

१४ फरवरी महाशिवरात्रि व्रत के उपलक्ष में चार प्रहर तक श्री सिद्धेश्वर महादेव का पूजन हुआ एवं समवेत भक्तों के द्वारा शिवपूजा की भी व्यवस्था की गई थी ।

२ मार्च होली के दिन उदयास्त अखंड हरिनाम संकीर्त्तन एवं महाप्रभु की जन्मतिथि पूजा तथा साधु सेवा संपन्न हुई ।

श्री श्री माँ की कृपा से रासरासेश्वर की भूमि श्री वृन्दावन धाम में माँ के आश्रम में २४ मार्च से पहली अप्रैल तक श्रीमद्भागवंद् सप्ताह पारायण का अनुष्ठान किया गया । 'वृन्दावन' के आचार्य स्वामी १०८ श्री राधाब्रजेशशरणदेवजी महाराज ने भागवत की सुललित व्याख्या की ।

७) कनखल–

कलखल के श्रीश्री माँ के आश्रम में विगत २२ जनवरी को समारोह के साथ श्री सरस्वती पूजा का अनुष्ठान हुआ ।

१३ फरवरी को श्री श्री गुरुप्रिया देवी का जन्म-शताब्दी-समारोह सुसंपन्न हुआ ।

२ मार्च को होली महोत्सव मनाया गया ।

८) वाराणसी–

श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ में २२ जनवरी को श्री सरस्वती पूजा अनुष्ठित हुई एवं ३१ जनवरी माघी पूर्णिमा के दिन आश्रम में श्री सत्य नारायण की पूजा हुई ।

१३ फरवरी से २१ फरवरी तक श्री गुरुप्रिया दीदी का जन्मशताब्दी-समारोह एवं कन्यापीठ का हीरक जयन्ती-उत्सव विशेष रूप में अनुष्ठित हुआ । इस उत्सव का विशद विवरण इस पत्रिका में अन्यत्र प्रकाशित हुआ है ।

२ मार्च को होली में श्री गोपाल जी का स्नान, अभिषेक, श्रृंगार, पूजन, भजन, कीर्त्तन भोग, आरती आदि हुई ।

२३ मार्च से २६ मार्च पर्यन्त श्री वासन्ती पूजा हुई । इसमें अनेक भक्तों का समागम हुआ था ।

आगामी ३ व ४ मई श्री श्री माँ का जन्मोत्सव अनुष्ठित होगा ।

●

शोक-संवाद

१) श्रीमती लक्ष्मी माधवः-

श्री श्री माँ की एकनिष्ठ भक्त श्रीमती लक्ष्मी माधव ने विगत सन् १९९८ के १२ जून को मातृलोक में प्रयाण किया ।

श्रीमती लक्ष्मीमाधव एवं उनके पति श्री पी. पी. माधवन को सन् १९७० में पूना आश्रम में दीदीमाँ से दीक्षा प्राप्त हुई थी । आप दोनों प्रतिवर्ष कनखल में श्री श्री माँ के जन्मोत्सव में उपस्थित होते थे । जन्मोत्सव के पश्चात् गुरु पूर्णिमा, दुर्गापूजा एवं संयम सप्ताह में भाग लेकर ही घर लौटते थे । प्रायः ५-६ मास आप दोनों कनखल आश्रम में निवास करते थे ।

पिछले वर्ष भी आप दोनों ने जन्मोत्सव के पश्चात् गुरुपूर्णिमा तक आश्रम वास करने का संकल्प लिया था । १२ जून को प्रातः काल श्रीमती लक्ष्मी माधव ने माँ के समाधि-मंदिर में माँ का आरती-दर्शन किया एवं माँ को फूल चढ़ाया । शाम को उन्हें हृदय में पीड़ा का अनुभव हुआ, उन्हें रामकृष्णमिशन ले गए । वहाँ दो घंटे के अंदर ही वे मातृचरणों में लीन हो गईं । प्रयाण के पूर्व उन्होंने तीनबार माँ-माँ-माँ नाम का उच्चारण किया ।

हम श्री श्री माँ के चरणों में उन विदेह पवित्र आत्मा के लिए एवं शोक संतप्त उनके परिवार वालों के लिए शान्ति की कामना करते हैं ।

२) श्री हरिहर चक्रवर्ती :-

वाराणसी आश्रमस्थ आनन्दज्योति मंदिर' में श्री माँ के तथा श्री श्री गोपाल जी के पुजारी हरिहर दा २३ फरवरी को श्री श्री माँ आनन्दमयी अस्पताल के मुक्तिक्षेत्र में इस दुःखमय संसार से सदा-सदा के लिए मुक्त हो गए ।

आप प्रायः १४ वर्षों से निरन्तर एक भाव से आश्रम में सेवारत थे । गायत्री यज्ञशाला में प्रतिदिन होम एवं अग्निरक्षा का महान दायित्व भार भी आपने श्रद्धा के साथ निभाया ।

आपका ध्यान जप, पूजा अर्चना सब कुछ यथा समय श्री श्री माँ की एवं गोपाल जी की पूजा भोग आरती इत्यादि सेवा ही थी । समयानुवर्तिता आपके जीवन का एक आदर्शपूर्ण विशिष्ट गुण था । अस्पताल जाने के कुछ दिन पूर्व भी आपकी मंगल आरती का शंख एवं यज्ञशाला खोलने की आवाज ठीक समय पर आती थी ।

कई दिनों से आप गले में पीड़ा का अनुभव कर रहे थे । बाद में डाक्टरों ने जाँच करके कैंसर का रोग बताया । बोली भी बंद हो गई थी । एक घूंट पानी भी अंदर नहीं जा रहा था तो अस्पताल में भर्ती हुए ।

उत्सव के उपलक्ष में आये हुए श्रद्धेय स्वामी चिदानन्दजी एवं स्वामी देवानन्द जी ने अस्पताल में रोगियों का दर्शन करते हुए हरिहरदा को भी देखा एवं उनको स्पर्श किया। यद्यपि उनकी बोली प्राय: बंद हो चुकी थी फिर भी स्वामी चिदानन्दजी ने उनके मुख से अनेक मन्त्रों का उच्चारण कराया।

श्री श्री माँ की कृपा से उन्हें इस भयंकर कष्ट को अधिक दिनों तक न सहना पड़ा। पूज्य स्वामीजी के जाने के एक दिन बाद ही श्री श्री माँ ने अपने प्रिय सेवक को अपनी अभय क्रोड़ में स्थान दे दिया।

●

STATEMENT ABOUT OWNERSHIP & OTHER PARTICULARS ABOUT NEWSPAPER ENTITLED "MA ANANDAMAYEE-AMRIT VARTA" AS REQUIRED TO BE PUBLISHED U/S 190 OF THE PRESS AND REGISTRATION ACT.

Title of Newspaper	:	MA ANANDAMAYEE-AMRIT VARTA
Place of Publication	:	SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA, BHADAINI, VARANASI-1
Periodicity of Publication	:	QUARTERLY
Printer's Name	:	PANU BRAHMACHARI
Whether citizen of India	:	YES
Address	:	SHREE SHREE MA ANANDAMAYEE ASHRAM, BHADAINI, VARANASI-1
Publisher's Name	:	PANU BRAHMACHARI
Whether citizen of India	:	YES
Address	:	SHREE SHREE MA ANANDAMAYEE ASHRAM, BHADAINI, VARANASI-1
Editor's Name	:	PANU BRAHMACHARI
Whether citizen of India	:	YES
Address	:	SHREE SHREE MA ANANDAMAYEE ASHRAM, BHADAINI, VARANASI-1

I, Panu Brahmachari hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

March 1, 1999

PANU BRAHMACHARI
Publisher.
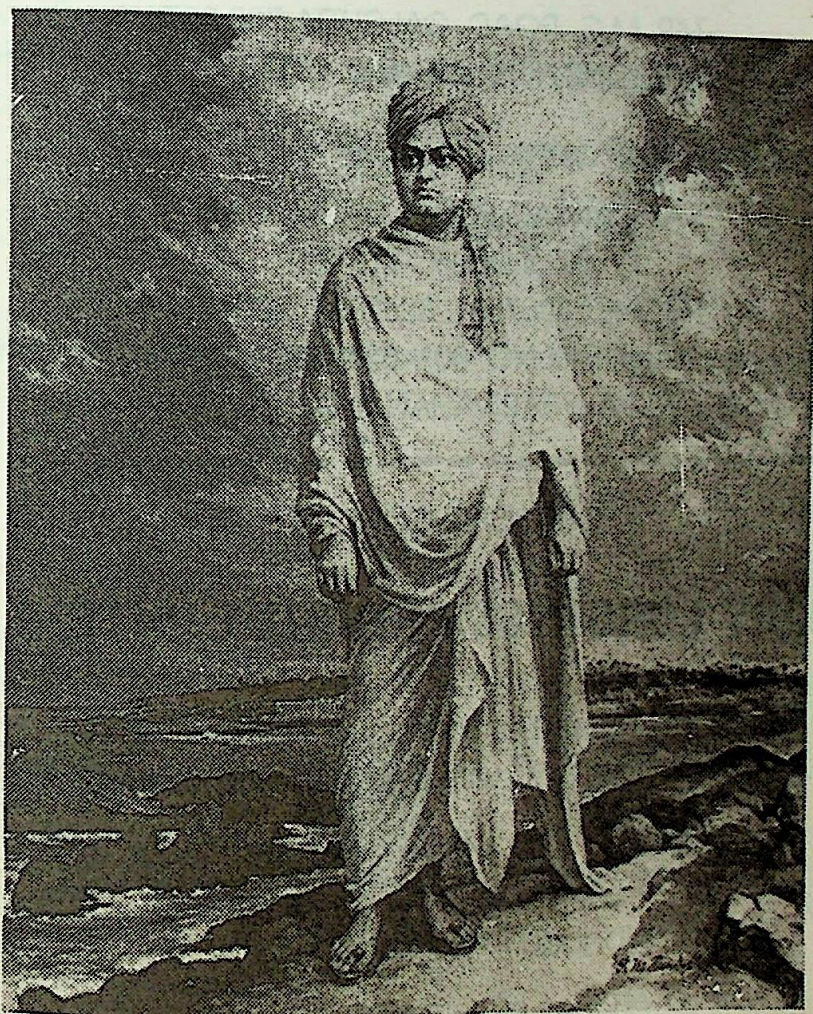
With

Best

Compliments

from

MEENA BAZAR

E-19, South Extension II

NEW DELHI-110049

Phone : 6442251

मातृ श्री चरण-कमलों में

कोटि कोटि साष्टांग प्रणाम

—M.P. Murarka
BOMBAY

❋ Branch Ashrams ❋

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6840365)

16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 327835)

17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.

18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)

19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)

20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.

21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.

22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)

23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442–64343)

24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)

2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

VOL. NO. 3

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009 U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, 47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok, P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir, P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन

तथा

दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष—३ जुलाई, १९९९ सं.—३

सम्पादक मण्डली

- डा. श्रीनारायण मिश्र
- डा. राममोहन पाण्डे
- डा. बीथिका मुखर्जी
- डा. गायत्री शर्मा
- ब्रह्मचारिणी गुणीता

✤

कार्यकारी सम्पादक

श्री पानु ब्रह्मचारी

✤

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में – ६० रुपये

विदेशों में – १२ डॉलर/या ४०० रुपये

एक प्रति – २०/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है । वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है ।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है । इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है ।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों ।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये । लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें । मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है । सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें ।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें ।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें ।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित । सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी ।

विषय-सूची

ग्राहक बनें एवं बनाइये

अमृतवार्ता के प्रिय पाठकों से निवेदन है कि वे अधिक से अधिक संख्या में पत्रिका के ग्राहक बने एवं बनायें।

नयी शताब्दी नयी उमंगों से भरी हुई आने वाली है नयी पीढ़ी में नया उत्साह है, नयी पीढ़ी का यह नवीन उत्साह एवं नयी आशा चिरस्थायी हो इसलिए उसे अपने जीवन की सीढ़ियों को मजबूत करने का प्रयास करना है।

आज का युग विविध शंकाओं से समस्याओं से घिरा हुआ है। सभी प्रकार की समस्याओं का अनायास समयोपयोगी समाधान हमें प्राप्त होता है, श्री श्री माँ आनन्दमयी की अमूल्य वाणी तथा जीवन दर्शन में। अतः आज के युग को श्री श्री माँ की वाणी रूपी अमूल्य निधि की अत्यन्त आवश्यकता है।

सभी सहृदय भक्त वृन्द सोत्साह इस त्रैमासिक पत्रिका के नियमित ग्राहक बनेंगे तथा नयी पीढ़ी एवं आस-पड़ोस को उत्साहित करेंगे ऐसी हम आशा करते हैं।

साथ ही पाठकों से आग्रह किया जाता है कि पत्रिका के सम्बन्ध में अपने विचार भेजें, तथा पत्रिका के अनुकूल लेख आदि भी भेज सकते हैं।

मातृ-वाणी

परम पद के यात्री होने की कोशिश करना–जहाँ आपत्ति-विपत्ति, विपद-विपथ नहीं है ।

* * *

भगवान् ही क्रियारूप में हैं, दुनिया की तरफ मत देखो । वह ही एक तरीका है । कर्म में अकर्म में भगवान स्वयं । भगवान् और कोई नहीं ।

* * *

गुरु तो एक ही है । गुरुतत्व प्रकाश करने का रास्ता वतलाने वाला वही असली गुरु । गुरुशक्ति जहाँ मिल गया जहाँ भर गया वहाँ गुरु ।

* * *

भगवान् में अनुराग होने से विषयों में वैराग हो जाता है । मन तो आसक्ति बिना नहीं रहता है । इसलिये भगवान् से अनुराग, सतसंग जप ध्यान ।

* * *

जन्म तो एक ही है । जो जन्म अमृत के लिये है, उसका ही जन्म सफल है ।

* * *

मनुष्य जिसके लिये जन्म लेता है वही भोगना पड़ता है । चाहे सुख हो चाहे दुख हो, भगवान के पास केवल प्रार्थना करनी चाहिये कि हे भगवान् सहन शक्ति दो, शान्ति दो, चलते फिरते खाते पीते सोते सब समय भगवान् का नाम स्मरण करने की कोशिश करो ।

* * *

अपने को भगवत् सेविका समझकर वाल गोपाल, कुमारी रुप भगवान की ही सेवा नित्य नियमित । जप ध्यान पूंजा पाठ करे–इससे वच्चों की शिक्षा अच्छी होगी । अपने शरीर की तरफ दृष्टि रखनी चाहिये । नियम से खाना, नियम से निद्रा लेना, ठीक-ठीक चल रहा है, माँ को खबर देना ।

* * *

खाली बैठने से देखकर अच्छा नहीं लगता । काम करो, ना तो जप करो, ना ध्यान करो । ना अन्दर अन्दर जप करो । जपो हरे कृष्ण हरे राम खाली डिव्वे का क्या काम ।

* * *

भगवत् भाव के लिये सबको रोना है । दुनिया के लिये रोना फँसने का रास्ता है । दुःख बढ़ाना है, गाँठ बाँधने के लिये । गाँठ खोलने के लिए या भगवत् भाव के लिये जो दुःख लगता है वह अपने को पाने के लिये रास्ता खुलता है ।

* * *

भगवान भक्त के अधीन है, उनके चरण में आश्रय लिया है । भगवान् के चरण में आश्रय लेने से पाया जाता है । दुनिया की क्रिया से भगवान् के प्रकाश के लिये वासना । वहाँ दुनिया की वासना नहीं, दुनिया की तड़पन नहीं । जैसे नमाज़-पूजा तुम्हारा जो नीति तुम करो, मुसलमान की नीति वह करे अपना-अपना नियम बाँध कर ।

* * *

नाता माने सम्बन्ध । जब तक सम्बन्ध रहता है समझाने पर भी समझा नहीं जाता । समझ ना समझ के ऊपर जाना । एक बोझ उतार लिया और दूसरा बोझा । बोझ अबोझ के पार चलो तब देखोगे जो चीज तुम चाहते हो उसी में तुम्हारा बन्धन है ।

* * *

मैं जो अमर हूँ । यह ज्ञान क्यों नहीं प्रकाश होता है । अपनी क्रिया से सब कुछ कर सकते हैं । क्यों इसमें मूर्ख की भाँति लिपट कर रहना ! जन्म-मृत्यु, जन्म-मरण की क्रिया में लिपट के रहने से वही फल मिलेगा । तुम्हारा आत्म प्रकाश यहीं होना है । जो जो वासना कामना होती है, ऋण मुक्त होने के लिए, जिस वस्तु की इच्छा उसे भोग करके ही खतम होगा । इसलिये अपने में अपना ।

* * *

यह जो कर्म है दुःख है किसने सृष्टि की । आखिर देखोगे कर्म बनानेवाला कोई नहीं है । भगवान् के सिवाय कोई है नहीं । सच झूठ की बात ही नहीं । ढूँढ़ते ढूँढ़ते कर्म करनेवाला भी नहीं । अपने में अपना, कोई नहीं है । जहाँ जन्म मृत्यु वहीं तुम्हारा कर्म । सुख-दुःख, वही अँधेरा । अपनी आत्मा में ही आत्माराम हैं । यह जो समझता है उसका दुःख निवारण हो जाता है ।

* * *

प्रश्न–भगवान् के लिये हम क्या करें ?
माँ–जो व्याकुल होते हैं, जो गोद (भगवान् की) खाली पड़ी है वह मिलेगी ।

●

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

–स्व. अमूल्य कुमार दत्त गुप्त

बिना कारण भयातुर होने से बुद्धि विपर्यय –

स्टेशन से किशनपुर आश्रम लौटते समय भुवन बाबू ने आज एक हास्यकर प्रसंग उपस्थित किया था । दीदी ने उक्त घटना का विवरण सबको सुनाया । दीदी ने कहा, "आज हरिद्वार से लौटकर सुना कि कमल हमलोगों के लिये काफी देर इन्तजार करके स्टेशन चला गया है । यह सुनते ही उसी मोटर को लेकर मैं स्टेशन गयी । भुवनदादा भी मेरे साथ चले । स्टेशन पर कमल के साथ मुलाकात कर जब आश्रम लौट रही थी तब भुवमदादा ने कहा, "बेलू दीदी ने मुझे अपना चश्मा ठीक कराने को दिया है । देहरादून में कहाँ इसकी मरम्मत होती है पता नहीं । शहर पहुँच कर मोटर रोककर थोड़ा पता करूँगा ।" उनकी बात के अनुसार शहर पहुँचकर मोटर रोक दी । भुवन दादा उतर कर चश्मे की दुकान पता लगाने गये जहाँ चश्मा बनता है । मैं मोटर में ही बैठी रही । इधर पुलिस ने आकर ड्राईवर से मोटर दूसरी जगह खड़ी करने को कहा । मोटर को थोड़ी दूर ले जाकर खड़ा किया गया । ड्राईवर ने कहा, "मोटर यहाँ लायी गयी है, पर बाबू तो हमलोगों को ढूँढ़ने पहले की जगह ही आयेंगे । मोटर यहीं पर रहे, मैं जाकर बाबू के लिये पहले की जगह पर खड़ा रहता हूँ ।" उसकी बात पर मैं राजी हो गयी । ड्राईवर चला गया । ड्राईवर ने देखा भुवनदादा इधर उधर देखते हुए हमें खोज रहे हैं । उसने भुवनदादा को संकेत करते हुए कहा, "बाबू जरा सा सुनिए ।" भुवनदादा ड्राईवर को ठीक से पहचानते नहीं थे, अतः यही ड्राईवर है यह उन्होंने सोचा नहीं । उन्होंने सोचा कलकत्ता आदि स्थानों पर दुष्ट प्रकृति के गुण्डे आदि असावधान पथिक को निर्जन स्थान पर ले जाकर उसे लूटकर उसकी हत्या कर देते हैं यह भी उसी प्रकार कोई व्यक्ति होगा । अतः भयातुर होकर वे शीघ्रता से दूसरी ओर चलने लगे । ड्राईवर ने जब देखा बाबू दूसरी और जा रहे हैं तब वह भी उनके पीछे-पीछे चलते हुए कहने लगा, "बाबू, सुनिए, सुनिये ।" भुवनदादा ने जब देखा कि यह व्यक्ति उनका पीछा नहीं छोड़ रहा है, एवं बार-बार उन्हें बुला रहा है तब वे और भी आतंकित होकर दूसरी ओर दौड़ते हुए ड्राईवर के उद्देश्य से चिल्लाकर कहने लगे, "तुमने मेरा पीछा किया है, मैं तुमको पुलिस के हवाले करूँगा ।" (सभी की हँसी) ड्राईवर तो बाबू के कारनामे से हतवाक् था । इधर बाबू को छोड़कर भी वह नहीं जा सकता था । बाबू को इस प्रकार दौड़ते देखकर उसने चिल्लाते हुए कहा, "बाबू आप मोटर में नहीं जायेंगे ।" यह सुनकर भुवनदादा हाथ जोड़कर कहने लगे, "भाई, मेरे से बड़ी गल्ती हुई है । तुम कुछ सोचना नहीं ।" तब दोनों मोटर की ओर लौट आये । भुवनदादा ने मोटर में मुझे यह घटना सुनायी । मैंने तभी सोचा था आज सबको यह प्रसंग सुनाऊँगी ।"

इस प्रसंग को सुनकर हमलोग खूब हँसने लगे । भुवनदादा भी उपस्थित थे । उन्होंने ऐसा क्यों किया यह हमें समझाने की कोशिश की, परन्तु हमारे हँसी के प्रवाह में उनकी सभी बातें वह गयीं ।

इस प्रसंग को सुनकर माताजी भी खूब हँसी । बाद में हँसते हँसते कहने लगीं, "मुझे भी एक प्रसंग का ख्याल हो रहा है, एक दरिद्र गृहस्थ थे । पति-पत्नी । बड़े ही धर्मभीरु थे वे । एक दिन उनके घर एक अतिथि आये । घर पर ऐसी कोई चीज नहीं थी जिसके द्वारा वे अतिथि की सेवा कर सके । पति ने पत्नी से कहा, "तुम अतिथि को बैठने के लिये आसन दो, देखो मैं कुछ व्यवस्था करके लाता हूँ ।" इतना कहकर वह बाहर चला गया । इनके रहने का केवल मात्र एक ही कमरा था । अतिथि को कमरे के एक कोने में बैठाकर पत्नी पति की प्रतीक्षा में रही । बहुत देर हो गयी: पति के लौट आने का कोई लक्षण ही नहीं है । घर पर भोजन की कोई व्यवस्था नहीं हो रही है यह देख अतिथि बिना खाये चले न जायें इसी आशंका से पत्नी कमरे के दूसरे कोने पर सिलवट्टे पर मसाला पीसने का भान करने लगी, बीच-बीच में रास्ते की ओर झाँकती । दोपहर हो गयी पर भोजन बनने की कोई संभावना न देख अतिथिदेव ज़रा व्यग्र हो गये । महिला की अनुपस्थिति में सिलबट्टे की ओर झाँककर देखा तो वहाँ कुछ नहीं था । इतनी देर सिल पर बट्टे का घर्षण मात्र हो रहा था । यह देख अतिथि के मन में शंका हुई उन्होंने अन्यत्र जाना ही उचित समझा ।

अतिथि को जाते देख गृहिणी अत्यन्त व्यस्त हो उठीं, कारण अतिथि साक्षात् नारायण हैं, वे यदि बिना खाये किसी गृहस्थ के घर से चले जायें तो गृहस्थ का अमंगल अनिवार्य है । अतः वह शीघ्रता से अतिथि के पीछे-पीछे दौड़ी । गल्ती से उसके हाथ में बट्टा रह गया था । कुछ दूर जाकर उसने अतिथि के उद्देश्य से कहा, "आप नहीं जाइए, नहीं जाइए थोड़ी देर बैठिए ।" उसकी बात सुनकर अतिथि ने जब मुड़कर देखा तो पाया कि उक्त महिला बट्टा हाथ में लिये उसकी ओर ही आ रही हैं । महिला को इस प्रकार आते देख अतिथि ने सोचा दाल में कुछ काला है । महिला शायद बट्टे के द्वारा अतिथि का काम तमाम करना चाहती है शायद इसीलिए इतनी देर तक सिल पर बट्टा घिसा जा रहा था । इन सब चिन्ताओं से घिरकर घबड़ाहट में भयभीत होकर वह दौड़ने लगा । महिला भी अतिथि देव को लौटाने के लिए उसी तरह उनके पीछे-पीछे दौड़ने लगी ।

इधर कुछ दाल चावल लेकर घर लौटते हुए गृहस्थ ने देखा कि अतिथि दौड़ रहे हैं एवं उनकी पत्नी अतिथि के पीछे-पीछे दौड़ रही है । यह देख वह आश्चर्यचकित हो गया । इसी समय अतिथि ठोकर खा कर गिर गये । तब पति-पत्नी दोनों ने जाकर उसे उठा लिया । अतिथि के कातर स्वर से प्राणभिक्षा माँगने पर उन्होंने समझा कि अतिथि के दौड़ने का कारण क्या था । वे उसे समझा बुझाकर घर लौटा कर ले आये ।

माताजी आगे कहने लगीं, "ज्योतिष (भाईजी) के साथ जब आनन्दचौक में थी तब भी इसी प्रकार की एक घटना हुई थी । वह तुमलोगों को सुना रही हूँ । हमलोग आनन्दचौक में एक शिवमन्दिर में थे । अभी पहले की तरह नहीं है । काफी कुछ बदल गया है । परन्तु तब वहाँ काफी खुला था कोई भी भीतर जा सकता था ।

"ज्योतिष का तो गुप्तभाव से ध्यान जप आदि करने का तो अभ्यास है ही। अतः वह प्रतिदिन रात्रि के ३ बजे उठकर शिव मन्दिर में बैठकर ध्यान जप करते थे। शीत, ग्रीष्म, वर्षा, बादल, इस नियम के व्यतिक्रम न होते थे। एक दिन वह जप कर रहे थे, मन्दिर का पुजारी भोर हो गया है ऐसा सोचकर मन्दिर में घन्टा बजाने आया। उसे घन्टा बजाते देख ज्योतिष ने सोचा यदि पुजारी उसे देख ले तो डर जायेगा, चोर डाकू समझकर बेहोश भी हो सकता है, या तो डरकर शिवलिंग पर गिरकर आहत होकर मर भी सकता है। इस मृत्यु के लिये उसे ब्रह्महत्या के पाप का भागी होना पड़ सकता है। यह सब विचार आते ही आगा पीछा न सोचकर पुजारी को पीछे से जाकर उसने पकड़ लिया। पुजारी तब घन्टा बजाते हुए ठाकुरजी को जगा रहे थे। (सभी की हँसी) अचानक इस प्रकार आलिंगन से पुजारी चिल्ला उठा, ज्योतिष उसे शान्त कराने के लिए बार बार कहने लगा, "डरो नहीं, डरो नहीं, मैं हूँ, मैं हूँ।" किसलिए उन्होंने ऐसा किया यह उसे समझाकर कहने पर ठहाका मारकर हँसने लगे।

निद्रित अवस्था में किस प्रकार दूसरे के प्रश्न का समाधान किया जा सकता है –

आनन्दचौक में रहते हुए चोर आकर हारमोनियम इत्यादि चोरी कर ले गया था। यह प्रसंग भी माताजी ने सुनाया, यह प्रसंग पहले एकबार उल्लिखित हो चुका है अतः पुनरुल्लेख नहीं किया। उस समय गाढ़ी नींद में सोते हुए ज्योतिष बाबू ने कहा था, चोर आया है। इसी प्रसंग का उल्लेख करते हुए माताजी ने कहा, "वास्तविक अनेक समय ऐसा ही होता है। निद्रित अवस्था में अनेकबार लोगों को प्रश्नों के उत्तर में ऐसी सब बातें कहते देखा व सुना जाता है जिससे प्रश्नों का समाधान भलीभाँति हो जाता है, पर कहनेवाले को इसका पता ही नहीं रहता कि उसने क्या कहा। एक बार नर्मदा में नरेश चक्रवर्ति हमारे साथ थे। एकदिन देर रात तक वे मेरे साथ बैठकर आध्यात्मिक प्रश्नादि कर रहे थे। खुकुनी (दीदी गुरुप्रिया) मेरे पास लेटे हुए खर्राटे ले रही थी। इसी समय नरेश जी ने एक प्रश्न किया। तुमलोग तो इस शरीर का भाव जानते ही हो, इस शरीर से कभी प्रश्न का उत्तर आता है कभी नहीं। नरेश का प्रश्न सुनकर इस शरीर ने कोई जवाब नहीं दिया; परन्तु गहरी नींद में खुकुनी ने प्रश्न का यथार्थ जवाब दिया था। नरेश सुनकर अवाक् रह गया। बाद में खुकुनी के जागने पर उसे पूरी बात बतायी गयी। उसने कहा, इन सब बातों का कुछ भी वह नहीं जानती।

मैं–ऐसा किस प्रकार होता है ?

माताजी–यह सब एक स्थिति की बात है। एक तो है कि सत्तारूप में सब ही रह जाते हैं। जो कुछ कहा सुना जाता है, वह सत्तारूप में रहता है। कितनी ही बार शब्दरूप में भी यह सब रह जाते हैं। यदि किसी की ऐसी स्थिति हो जब वह इन शब्दों के सहित युक्त होता है तब उसके भीतर से ही सब प्रकाश हो जाता है। वह खुद नहीं जानता है कि क्या हो जा रहा है, अर्थात् शब्द रूप में उसी का ही प्रकाश यह वह जान नहीं पाता।

देवताओं का प्रकाश भी इसी प्रकार का है । मानो कोई विष्णु या शिव की साधना कर रहा है, साधना करते-करते एकदिन उनके सामने विष्णु प्रकाशित हुए । "विष्णु प्रकाशित हुए" इसका अर्थ क्या है ? विष्णु सर्वत्र ही प्रकाशमान हैं, साधक स्वयं ही विष्णु है यह ज्ञान होने का नाम ही विष्णु का प्रकाश होना । शिव, काली, सभी देवताओं के बारे में ऐसा जानना । एक उपास्य लेकर रहने पर धीरे-धीरे उसी के भीतर सब प्रकाश होता है । एक मार्ग से चलने पर देखा जाता है कि उसी में ही अन्यान्य पथ भी आकर मिल गये हैं ।

और भी देखो, तुम्हारा शरीर यदि आग में जल जाय । उसका अनुभव तुम जिस प्रकार करते हो, दूसरे के जलने पर वैसा अनुभव तुम नहीं कर सकते हो । ऐसी स्थिति भी है जब दूसरे का शरीर जलने पर वह अपना शरीर जलने के जैसा ही लगता है । यह शरीर जब बाजितपुर में था, उस समय की बात है गड़ेरिये मैदान में, या खेत जोतते समय गायों को जब डन्डे से मारते थे, तब गड़ेरिया या गाय किसी को बिना देखे ही इस शरीर पर डन्डे की चोट उभर आती थी । अपनी सत्ता ही विश्वव्यापक है यह साधन करते करते ही समझा जाता है । यह हुई एक ओर की बात है । इसकी विपरीत दिशा भी है अर्थात् तब इस शरीर पर चोट पड़ने पर भी इस शरीर का कोई ख्याल नहीं रहता था । एक बार मैं बैठी हुई थी, भोलानाथ जी मेरे पास बैठकर चिलम पी रहे थे । चिलम का अंगारा मेरे पैर पर पड़ा था, परन्तु इस बात का मुझे कुछ पता ही नहीं था । अंगारा पैर पर जल कर अपने से बुझ गया । पैर के उस जगह एक बड़ा सा फफोला पड़ गया । फफोला पड़ा है इसका भी मुझे पता नहीं चला । कुछ देर बाद हाथ अपने से ही फफोले पर पड़ा तथा पैर पर ऊँची एक कोई चीज है ऐसा सोचकर उसे उठाकर फेंकने के लिए खींचातानी की । इससे फफोले से पानी निकल आया । तब मैंने देखा एक फफोला वहाँ पड़ा था मेरी खींचातानी से वह फट गया । यहाँ भी देख रहे हो वैसा ज्ञान ।

इसके बाद माताजी हँसी एवं रोने के सम्बन्ध में कहने लगीं । माताजी ने कहा, कितनी बार तुमलोग देखते हो कि किसी सामान्य विषय को लेकर यह शरीर हँसकर लोटपोट होता है । रोते समय भी ऐसा ही होता है; पर यह हँसी तथा रोना जिसको उपलक्ष्य करके होता वह इसका वास्तविक कारण नहीं है ।

मैं–आपने पहले एक बार कहा था कि अतीत या भविष्य की कोई कोई घटना आपके दृष्टिपथ पर आ जाती है । अतः ऐसा होता है ।

माताजी – पहले यह सब अधिक होता था । कोई यदि दुःख में, शोक में, व्याकुल भाव से इस शरीर की चिन्ता करते थे तो उनके शोक की तीव्रता के अनुसार इस शरीर की अस्थिरता भी तदनुरूप प्रकाश होती थी । अर्थात् तुम लोग वह देख सकते थे ।

रात के साढ़े ग्यारह बज रहे है देख दीदी माताजी को विश्राम के लिये प्रार्थना करने लगीं । हम लोग भी माताजी को प्रणाम करके हॉल से बाहर आ गये ।

●

संत परिचय

—म. म. पं. गोपीनाथ कविराज

संत किसे कहते हैं, संत-जीवन का वास्तविक आदर्श क्या है और बाह्य तथा आभ्यन्तरिक किन-किन लक्षणों द्वारा संतभाव का यथार्थ परिचय प्राप्त हो सकता है? इस तरह प्रश्न बहुतों के मन में उत्पन्न हुआ करते हैं। संसार-तापसे तप्त मनुष्य नित्य आनन्द एवं पराशक्ति की स्निग्ध छाया में विश्राम करने लिये सदा से ही लालायित है, परन्तु प्रवृत्ति की ताड़ना और बाह्य वासना प्रशान्त हुए बिना चित्त-अन्तर्मुख नहीं होता और इसीलिये शान्ति की आकांक्षा होने पर भी बाह्य मोह से वह आकांक्षा ठीक-ठीक प्रकाशित नहीं हो सकती। जब सांसारिक भोगों में वैराग्य होता है और चित्त निवृत्तिमुखी होकर अन्तर्जगत् के तत्त्व की खोज में व्यग्र हो उठता है तब इसे जगत् के रहस्य को खोजने लिये पथ-प्रदर्शक संत अथवा साधु के अन्वेषण के लिए व्याकुलता होती है। इस अवस्था में संत का परिचय और संत के लक्षणों को जानने के लिए हृदय में स्वाभाविक ही तीव्र इच्छा उत्पन्न होती है। यह किसी देशविशेष अथवा कालविशेष की बात नहीं। प्रकृति के नियमानुसार सर्वदा और सभी देशों में ऐसा हुआ करता है। हम लोग बाहरी बातों को देख कर अथवा बाहरी व्यवहारों पर विचार कर एक साधारण मनुष्य को भी भली-भाँति नहीं समझ सकते; क्योंकि जिन जटिल शक्तियों की प्रेरणा से मनुष्य किसी कार्य विशेष को करता है अथवा करने को बाध्य होता है, उनका स्वरूप और प्रभाव ठीक-ठीक समझे बिना कार्य अथवा आचरण के नैतिक दायित्व के विषय में निर्णय करना सम्भव नहीं होता। साधारण मनुष्य स्थूल अभिनिवेश में बँधा होने के कारण उसके कार्य का विस्तार-क्षेत्र बहुत ही संकीर्ण होता है किन्तु जो महापुरुष हैं उन पर अलक्ष्य शक्तिपुञ्ज का प्रभाव और भी अधिक व्यापक रूप से पड़ा करता है। अतएव उनको ठीक-ठीक समझ सकना और भी अधिक दुःसाध्य है। इसीलिए हमारे शास्त्रकारों ने लोकोत्तर महापुरुषों के आचरण का जनसाधारण के लिए अनुकरण करना सिद्धान्त नहीं बतलाया। जिस निगूढ़ उद्देश्य की सिद्धि के लिए एक महापुरुष किसी विशेष कार्य को करते हैं, उस कार्य का अनुकरण करने की चेष्टा करना एक क्षुद्रशक्ति अल्पज्ञ प्राकृत मनुष्य के लिए उपसाहास्पद और हानिकारक ही होता है, अतेव संत या महापुरुषपरिचय कोई सहज बात नहीं है। जिनकी अन्तर्दृष्टि खुल गई है, जो स्वयं संतभाव पर आरूढ़ होने लगे हैं वे अवश्य ही अपनी स्वाभाविक विवेकशक्ति के द्वारा असत् से सत् को अलग करके ग्रहण कर सकते हैं। उनके लिए लक्षणनिर्देश अथवा स्वरूप वर्णन की आवश्यकता प्रतीत होती है। जिनका आश्रय लेकर हम अन्धकार से ज्योतिर्मय राज्य में प्रवेश करना और सिद्धि प्राप्त करना चाहते हैं, वे यदि स्वंय वैसे आधार से सम्पन्न न हो तो उनके आश्रय से हमारी हानि के सिवा कोई इष्टसिद्धि नहीं हो सकती।

अन्धेस्येवान्धलग्नस्य विनिपातः पदे-पदे ।

अन्धे को पकड़ कर चलने वाले अन्धे का पद-पद पर पतन ही होता है ।

संत किन्हे कहते हैं । जो सत्यस्वरूप, नित्यसिद्ध वस्तु का साक्षात्कार कर चुके हैं अथवा अपरोक्षरूप से उपलब्ध कर चुके हैं और इस उपलब्धि के फलस्वरूप अखण्ड सत्यस्वरूप में प्रतिष्ठित हो गये हैं वे ही संत हैं । सत्य ही चैतन्यरूप है और चैतन्य ही आनन्दस्वरूप है, अतएव यह कहना नहीं होगा कि जो सत्य में प्रतिष्ठित हैं वे एक तरह से सच्चिदानन्द परब्रह्म में ही प्रतिष्ठित हैं, इसलिए जो ब्रह्मज्ञ हैं, ब्रह्मदर्शी हैं और ब्रह्मसंस्थ हैं वे ही संत हैं । आत्मा ब्रह्म से अभिन्न है अथवा भिन्न, इस विषय पर विचार करने की यहाँ आवश्यकता नहीं है, परन्तु विकल्पभूमि में भेद तथा अभेद सभी को अवस्था और अधिकार के अनुसार सत्य समझा जा सकता है । इसी के अनुसार जिन्होंने ब्रह्म अथवा आत्मा की समस्त परिस्थितियाँ साक्षात् रूप से जानकर तदनुरूप स्थिति-लाभ किया है, वे ही संत हैं ।

संतके इस प्रकार के संक्षिप्त परिचय से यह बात समझ में आती है कि आत्मा या ब्रह्म के परमभाव में स्थिति प्राप्त किये बिना यथार्थ में संत-पदवाच्य नहीं हुआ जा सकता । अनन्त शक्ति-शालिनी, अनन्तरूपा प्रकृति के माहात्म्य से बहिर्दृष्टि में संत असंत के रूप में दिखायी दिया करते हैं । किन्तु इस बाह्य रूपों के द्वारा संत की सच्ची पहचान नहीं हो सकती । महापुरुषों में कोई जड़वत्, कोई उन्मत्तवत् और कोई कदाचारी पिशाच की तरह जगत् में विचरण किया करते हैं । ऐसी अवस्था में बाह्यदृष्टि से संतों के स्वरूप को पहचानना असम्भव कहा जाय तो भी अत्युक्ति नहीं होगी । लौकिक व्यवहार के लिये शास्त्रों में साधुओं के लौकिक लक्षण भी बतलाये गये हैं, परन्तु उनके द्वारा कार्यक्षेत्र में कहाँ तक तत्त्वनिर्णय हो सकता है इस बात को वही बतला सकते हैं जिन्होंने कभी परीक्षा की है । बौद्धग्रन्थादि में महापुरुषों के बत्तीस मुख्य लक्षण और चौरासी गौण लक्षण अथवा अनुव्यंजन बतलाये गये हैं, उनके सम्बन्ध में भी यह एक ही सिद्धान्त याद रखना चाहिए । जिसकी अन्तर्दृष्टि नहीं खुली है उसके लिये इन लक्षणों का प्रयोग करना असम्भव है ।

संत जीव-कोटि में हैं या ईश्वर-कोटि में, इस बात को लेकर आलोचना करने से कोई लाभ नहीं । कोई कोई तो संत को वस्तुतः इन दोनों ही कोटियों से मुक्त बतलाते हैं और ऐसा कहना किसी प्रकार भी असंगत नहीं है, क्योंकि जो निर्गुण परमपद में प्रतिष्ठित हैं उनको न वस्तुतः जीव ही कह सकते हैं और न ईश्वर ही । हमारे देश के कबीर आदि निर्गुण सम्प्रदायों में संतों का स्थान बहुत ही ऊँचा बतलाया गया है । कोई-कोई ऐसा मानते हैं कि केवल सत्य, ज्ञान और आनन्द में स्वयं प्रतिष्ठित होना ही संतभाव का पूर्ण आदर्श नहीं है, क्योंकि दूसरे के अन्दर भी सत्य, ज्ञान और आनन्द का स्फुरण होना इसी आनन्द के अन्तर्गत है । अर्थात् जो स्वयं सत्य में प्रतिष्ठित होकर भी दूसरों को सत्य में प्रतिष्ठित करना नहीं चाहता, नहीं कर सकता, अथवा नहीं करता. वह संत का पूर्ण आदर्श नहीं है । ज्ञान और आनन्द के सम्बन्ध में भी ऐसा ही समझना चाहिये । प्रकारान्तर से ऐसा कहा जा सकता है कि सत्य, ज्ञान और आनन्द को प्राप्त करना ही मनुष्यजीवन

का चरम उद्देश्य नहीं है, किन्तु उसे प्राप्त करके समस्त जगत् को उस सत्य, ज्ञान और आनन्द में प्रतिष्ठित कर देना यही मनुष्य-जीवन का एकमात्र लक्ष्य है। परिच्छिन्न भाव से क्रमशः अपरिच्छिन्न की ओर अग्रसर होना ही महापुरुषों के जीवन का यथार्थ लक्षण है। लोकोत्तर पुरुष स्वभाव के नियमानुसार अनादि काल से इस आदर्श का अनुसरण करते रहे हैं और शायद अनियत काल तक करते रहेंगे। साधारण मनुष्य परिच्छिन्न फल की इच्छा करके कर्मक्षेत्र में अग्रसर होता है। परन्तु महापुरुष स्वाभाविक रूप से ही क्रमशः आत्मविकास के अनुकूल आचरण किया करते हैं।

स्थूल, सूक्ष्म और कारण जगत् परस्पर संश्लिष्ट होने पर भी कारण जगत् से ही स्थूल जगत् का नियन्त्रण होता है। साधारणतः अवतार आदि कारण जगत् से ही प्रयोजन के अनुसार स्थूल-जगत् में अवतीर्ण हुआ करते हैं। कहना नहीं होगा कि वास्तविक संत पुरुष एक तरह से कारण जगत् के निवासी सरीखे प्रतीत होने पर भी वस्तुतः कारण से भी अतीत हैं। यहीं से ऐश्वरिक शक्ति की धारा जीव के प्रयोजन की सिद्धि के लिए अवस्था के अनुसार प्रवाहित होती है। संतों को ऐश्वरिक भूमि के अन्तर्गत समझने से उनको कारण जगत् के निवासी मानना पड़ता है और अनेकों कारणों से बहुत से लोग इसी को ठीक बतलाते हैं। परन्तु प्रयोजन के भी ऊर्ध्व में एकमात्र स्वभाव की प्रेरणा से ही संतो का जीवन नियमित होता है–इस दृष्टि से देखने पर संतों को वस्तुतः कारण जगत् के अन्तर्गत समझना ठीक नहीं मालूम होता। स्थूल, सूक्ष्म और कारण सभी मायाचक्र के अन्तर्गत है, अतएव स्वभाव में स्थित मायातीत संत या महापुरुष को कारण जगत् के साथ सम्बन्धित न मानना ही युक्ति-युक्त है। प्रकारान्तर से संतों के जीवन में जब आत्मविकास होता है–तब मायातीत होने पर भी वे महामाया के अन्तर्गत हैं ऐसा कहा जा सकता है और यदि एक ही पूर्ण सत्ता के स्वाभाविक स्फुरण के अन्दर महापुरुष के जीवन को मान लिया जाय तो फिर स्थूल, सूक्ष्म और कारण आदि कें विचार की कोई आवश्यकता ही नहीं रह जाती है, क्योकि पूर्ण के अन्दर सभी कुछ है और कुछ भी नहीं है।

जिन्होंने सत्य को उपलब्ध किया है, वे समर्थ होने पर और आवश्यक समझने पर दूसरे को भी उपदेश देते हैं। यह उपदेश श्रेष्ठ अधिकारी को प्रातिभ ज्ञान के रूप में दिया जाता है। यह प्रातिभ ज्ञान अपने आप ही हृदय में उत्पन्न हुआ करता है। यह अनौपदेशिक ज्ञान होने पर भी एक प्रकार से उपदेशरूप है। बाह्यशब्द का आश्रय लेकर इसको अन्यत्र सञ्चारित नहीं करना पड़ता। इस प्रकार के विशुद्ध ज्ञान के द्वारा ही हृदय का संशय सम्यक् प्रकार से मिट जाता है। "गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यः संछिन्नसंशयः" इस कथन का यही तात्पर्य है। मध्यम अधिकारी को वे विशुद्ध चेतनके साथ उपदेश दिया करते हैं। इस चेतन शब्द में इतनी सामर्थ्य है कि यह कानों में प्रवेश करते ही मर्मस्थान में प्रविष्ट हो जाता है और हृदय को असाधारण रूप से आन्दोलित कर देता है। इस शब्द को सुनने के बाद बाह्य जगत् की ओर आकर्षण नहीं रह सकता। मन, प्राण और इन्द्रियाँ समस्त एकीभूत होकर प्रबल वेग से और उद्दाम स्रोत से अन्तरात्मा के साथ मिलने के लिए दौड़ पड़ते हैं। श्याम की वंशीध्वनि सुन कर राधा अथवा गोपियों का कैसा भाव होता था, इस बात को वैष्णव महापुरुषों ने अपनी पदावलियों में कविता के द्वारा संक्षेप में बतलाया है। तन्त्रशास्त्र

के मन्त्रचैतन्य की व्यवस्था भी इसीलिए है, क्योंकि शब्द को चेतन किये बिना उस शब्द की सहायता से परब्रह्म का साक्षात्कार नितान्त असम्भव है, क्योंकि अचेतन शब्द शब्दब्रह्म नहीं कहा जा सकता। पृथ्वी के सभी धर्म-सम्प्रदायों में इस शब्द-चैतन्य की बात गम्भीरता के साथ कही गयी है। शब्द चेतन होते ही कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत् हो गई, यह कहा जा सकता है। अचेतन शब्द का बार-बार जप करने की एक विशेष प्रक्रिया के द्वारा बहुत परिश्रम से उसे चेतन किया जा सकता है। यह मध्यम अधिकारी की बात है। अधम अधिकारी को संत लोग अचेतन शब्द के द्वारा ही उपदेश दिया करते हैं, पर उसके साथ ही ऐसी कोई क्रिया बतला देते हैं जिसके करने से वह अचेतन शब्द क्रमशः चेतन शब्द के रूप में परिणत हो जाता है। अवस्थाविशेष में क्रियाकौशल के बिना भी दीर्घकाल के विचारादि के प्रभाव से अथवा अन्य किसी कारण से तीव्र संघर्षवश अचेतन शब्द चेतन शब्द के रूप में प्रस्फुटित हो सकता है।

नाना प्रकार के उपायों से कुण्डलिनी का जागरण हो सकता है। व्यवहारभूमि में पूर्वजन्मार्जित संस्कारों के तारतम्य के अनुसार किसी के लिये साधन भक्ति, किसी के लिए श्रवण, मननादि ज्ञानमार्ग का अनुष्ठान और किसी-किसी के लिये हठयोग, मन्त्रयोग अथवा राजयोग का दीर्घकालव्यापी अभ्यास इस जागरण के अनुकूल साधन हुआ करता है। चित्त की शुद्धि करनेवाले सभी कर्मो को इसी के अन्तर्गत समझना चाहिये। भिन्न-भिन्न धर्म-सम्प्रदायों में भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुष्ठान और ध्यानादि का निर्देश किया गया है तात्पर्य यह है कि किसी भी उपाय से हो जीव को मायिक स्वप्न और सुषुप्ति से प्रबुद्ध होकर सत्य के मार्ग पर पदार्पण करना होगा। असार और असत्य प्रपञ्च से चित्त को अलग करके उस सत्य में प्रतिष्ठित करना पड़ेगा। विक्षिप्त भूमि से अपनी वृत्तियों को लौटाकर एकाग्र भूमि में स्थापित करना पड़ेगा—कुण्डलिनी को अथवा शब्द को चैतन्य करने का यही एकमात्र पथ है। जागतिक भिन्न-भिन्न उपायों के वैचित्र्य में यह एक ही मार्ग दृष्टिगोचर होता है।

जब तक कुण्डलिनीरूपी महाशक्ति सत्यमार्ग को ढक कर घोर सुषुप्ति में निमग्र हो रही है, जब तक जीव जड़भाव को प्राप्त है, शिव शवरूप में निष्क्रिय होकर अवसन्न हो रहा है तब तक मिथ्या का प्रकोप, माया का प्रलोभन और विचित्र प्रपञ्च की मोहिनी शक्ति प्रकट होती ही रहेगी! कुण्डलिनी के जागते ही जीव की घोर निद्रा टूट जाती है और वह अपने स्वरूप-दर्शन में समर्थ होता है। पूर्ण जागरण होने पर जीव जड़त्व का परिहार कर शिवत्व को प्राप्त करता है अर्थात् अन्तर्निहित महाशक्ति जाग्रत होकर नित्य परशिव के साथ मिलने के लिये दौड़ पड़ती है। अवश्य ही शिवशक्ति के इस मिलन की पूर्णता के लिये दीर्घकाल की आवश्यकता है। एक दृष्टि से आत्मदर्शन हुये बिना इस मिलन का सूत्रपात ही नहीं होता। और दूसरी दृष्टि से यह पूर्ण मिलन हुये बिना सम्यक् प्रकार के आत्मदर्शन नहीं हो सकता। साधननिष्ठ पाठक कुछ विचार करेंगे तो वे इस कथन की सत्यता का अनुभव कर सकेंगे शिवशक्ति के मिलकर एक अद्वय ब्रह्मरूप से प्रकाशित होने पर ब्रह्मपथ का प्रारम्भ होता है ऐसा कहा जा सकता है। इसके बाद ही असंख्य

विचित्र अवस्थाओं में होते हुये आगे चलकर भगवान् की अप्राकृत नित्यलीला में अधिकार प्राप्त होता है । इस लीला से अतीत, निरञ्जन और निष्कल तत्त्व का अथवा तत्त्वातीत का सन्धान आभासरूप से प्राप्त होता है । इस अवस्था का वर्णन असम्भव है ।

एक अखण्ड ब्रह्म को क्रमविकास के नियमानुसार देखने पर उसकी पहले सत्यरूप में फिर चिद्घनरूप में और अन्त में आनन्दमय सत्ता के रूप में उपलब्धि होती है । कुण्डलिनी-जागरण के फलस्वरूप जिस नित्य सत्ता की प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और जिससे किसी भी कारण से वस्तुतः च्युत होने की सम्भावना नहीं रहती, उसी को सत्य में स्थिति समझना चाहिये । साधक इस अवस्था में शान्तपद पर प्रतिष्ठित होकर देख पाता है कि वह घोर कल्लोलमय अनन्तप्रसारित मायातरङ्ग के उच्च स्थान पर स्थित हो रहा है । इस अवस्था की प्राप्ति के साथ ही साथ आत्मदर्शन की सूचना होने के कारण चैतन्यभाव का उन्मेष होता रहता है, तदन्तर शिव शक्ति के मिलन की अवस्था से ही आनन्द का सूत्रपात होता है । शिव और शक्ति का मिलन पूर्ण होने पर जो ब्रह्मभाव में प्रतिष्ठा होती है, लौकिक भाषा में उसी को ब्रह्मानन्द कहा जा सकता है । इसके बाद नित्यलीला और निरञ्जन-पद है, जो प्राकृतिक बुद्धि से सर्वथा अगोचर होने के कारण वर्णन करने योग्य नहीं हैं ।

जो साधनबल से, पूर्व पुण्य के प्रभाव से और सद्गुरु के कृपाकटाक्ष से इन सारे स्तरों का भेद कर परम भाव का प्राप्त हो गये हैं और अहेतुकी करुणा के द्वारा निरन्तर जगत् का कल्याण करने में लगे हुये हैं वे ही संत या साधु हैं । इस पद की तुलना में बड़े-बड़े देवताओं का पद भी अतितुच्छ समझा जाता है । अतएव बाहरी या भीतरी किसी भी लक्षण के द्वारा वास्तविक सत्पुरुष का यथार्थ परिचय नहीं मिल सकता ।

हाँ एक बात है, शिशु जैसे शास्त्र बिना पढ़े भी और दूसरे के द्वारा वर्णन सुने बिना भी सहजज्ञान से अपनी गर्भधारिणी जननी को पहचान सकता है वैसे ही जब हृदय में सत्य के लिये प्रबल पिपासा जाग उठती है तब सहज ही सत्य का परिचय प्राप्त हो जाता है । उसके लिये शास्त्रीय लक्षणों से मिलान करने की आवश्यकता नहीं होती । जो जिज्ञासु नहीं है वह जैसे ज्ञान का अधिकारी नहीं, वैसे ही जिसके हृदय में सत्य के लिये बड़े भारी प्यास नहीं लगी वह भी सत्य को पहचान नहीं सकता । जो यथार्थतः व्याकुल होकर सत्य की खोज करता है, सत्यस्वरूप भगवान् उसके सामने कभी छिप कर नहीं रहते । वे उसके अधिकारानुसार उसके सामने अपने स्वरूप को खोल देते हैं और स्वाभाविक ज्ञान के प्रभाव से उनको पहचान लेता है और सदा के लिये धन्य हो जाता है ।

●

[नोटः– विहार राष्ट्र भाषा परिषद से प्रकाशित, "भारतीय संस्कृति व साधना" द्वितीय खण्ड से साभार]

माँ के निर्देश से गायत्री पुरश्चरण

—स्वामी नारायणानन्द तीर्थ

देवात्मा हिमालय के पाद देश में देहरादून शहर अवस्थित है। वहाँ से लगभग अठारह मील पश्चिम मे डोंगाग्राम है। उस ग्राम के जमींदार राय बहादुर श्री शेर सिंह चौधरी है। वे श्री श्री माँ के एक पुराने भक्त हैं एवं माँ को वे साक्षात भगवती के रूप में श्रद्धा करते हैं। उन्होंने वहां पहाड़ पर चीड़ वृक्षों के जंगल में माँ के लिए एक छोटा सा आश्रम बना रखा है जो कि एक तस्वीर के समान लगता है। वह स्थान अतिशय निर्जन है एवं चारों ओर चीड़ वृक्षों से घिरा हुआ है। पहाड़ के ऊपर आश्रम के आसपास दूसरा कोई लोकालय नहीं है। सुना जाता है कि बीच बीच में वहाँ बाघ भी आते हैं कारण कि जल प्रपात है, जहाँ वे जलपान करते हैं। सन् 1945 में श्री काली पूजा कीं समाप्ति के बाद ही कार्तिक महीने के अन्त में श्री श्री माँ रायपुर आश्रम से कुछ संन्यासियों को लेकर डोंगा गयी थी। इस दल में सन्यासियों को छोड़ केवल मैं एवं श्री अभय ब्रम्हचारी ही सफेद वस्त्र में थे। चौधरी श्री शेर सिंह एवं उनकी पत्नी श्रीमती शान्ति चौधरानी जी के विशेष आग्रह से ही माँ का यहाँ शुभागमन हुआ है। उनकी उत्कट अभिलाषा है कि श्री श्री माँ साधु, सन्यासी एवं ब्रम्हचारियों को लेकर कुछ दिन वहाँ निवास करें। कहना न होगा कि सब तरह की सुख सुविधा की व्यवस्था उन्होने की है। परम करूणामयी श्री माँ के साथ हम लोग परमानन्द में दिन बिता रहे हैं।

अगहन महीने के पहले थोड़ी थोड़ी ठंड पड़ी है, एक दिन दोपहर में भोग के बाद माँ आश्रम के सामने बरामदे में थोड़ी धूप में बैठी हैं। हम लोग भी सब उनको घेर कर बैठे हैं। हम लोगों के साथ बात करते-करते अचानक माँ भावाविष्ट हो गयीं। उनके ललिमायुक्त सुन्दर दोनों नेत्र भाव में विभोर हैं। विकसित श्वेत पद्म के समान माँ के वदनमण्डल पर लावण्य मण्डित मधुर हास की शोभा अवर्णनीय है। उसी भावावस्था में उन्होंने एक गेरुआ वस्त्र माँगा। श्री श्री माँ के दोनों ओर वृद्ध संन्यासी स्वामी शंकरानन्द, स्वामी निंगुणा नन्द (मुक्ति बाबा) एवं स्वामी परमानन्द बैठे थे। माँ के नूतन वस्त्र माँगने के साथ साथ स्वामी परमानन्द शीघ्र उठकर अपना एक गेरुए रंग का चोला ले आये। माँ उस चोले को हाथ में लेकर थोड़ा थोड़ा हिला डुला रही हैं और इसको किसी के शरीर पर वे डालेंगी ऐसा भाव दिखा रही थीं। उस भाव मग्न अवस्था में ही श्री श्री माँ के मुख कमल से स्वतः ही बीच बीच में अस्पष्ट स्वर से दो एक मन्त्र निकल रहे थे। माँ के श्री मुख से निः सृत कुछ मन्त्रों में एक मन्त्र उस समय मैंने स्पष्ट सुना। उपस्थित हम लोगों में से और किसी ने इस मन्त्र को सुना था या नहीं वह मैं नहीं कह सकता। हमने बहुत बार देखा है कि माँ जिसको उद्‌देश्य करके कहती हैं वही उसको सुन सकता है या समझ सकता है, दूसरे बहुत से लोग सामने रहने पर भी उसको सुन या समझ नहीं पाते। इसके प्रायः आठ वर्ष बाद सन् 1950 में वैशाख

महीने की अक्षय तृतीया के दिन काशी के गंगा तट पर श्री श्री माँ के सामने संन्यास ग्रहण के समय संन्यासी श्री गुरु के मुख कमल से पुनः वही मन्त्र प्राप्त किया । ब्रह्मविद्यास्वरूपिणि मां ने दया करके संन्यास के बहुत पहले ही वह मुझको सुना दिया था । डोंगा में उस दिन जितने लोग वहां उपस्थित थे सभी को अनुमान था कि माँ शायद वह गेरुआ वस्त्र मेरे ऊपर ही डालेंगी । पर उन्होंने ऐसा नहीं किया । अचानक आसन से उठकर खुले आकाश के नीचे जाकर मुझे बुलाया, मैं जैसे ही उनके पास पहुँचा एकान्त में उन्होंने मुझसे कहा काशी जाकर आगामी उत्तरायण संक्रान्ति से गायत्री पुरश्चरण प्रारम्भ करो । श्री श्री माँ का ख्याल अमोघ है । वह कार्यकरी होता ही है । इस काषाय वस्त्र के दान का विवरण यथा स्थान विवृत करने की इच्छा है ।

इस घटना के बाद विन्ध्याचल और वृन्दावन घूमते हुए काशी आकर वहाँ के सुप्रसिद्ध व स्मृति शास्त्र के पण्डित श्री शशिभूषण स्मृतितीर्थ महाशय से पूछ कर पता लगाया गायत्री पुरश्चरण की विधि बड़ी कठिन है । यथा सम्भव संक्षेप में गायत्री के पुरश्चरण की शास्त्रीय विधि नीचे दी जा रही है । गायत्री के सिवाय दूसरे मन्त्र के पुरश्चरण में भी इन्हीं नियमों का पालन करना कर्तव्य है, केवल जप संख्या पृथक् पृथक् है ।

गायत्री पुरश्चरण की जप संख्या उत्तम कल्प में 24 लाख, मध्यम कल्प में 4 लाख एवं अधम कल्प में । लाख । किन्तु कलियुग में चर्तुगुण जप करने से ही कार्य-सिद्धि होती है । **"कलौ चतुर्गुण प्रोक्तं पुरश्चरण सिद्धये । प्रजपेदुक्तसंख्यायाश्चतुर्गुणं प्रोक्तं ।"** पुरश्चरण का मुख्य वा प्रधान उद्देश्य हुआ सिद्धि या मन्त्र चैतन्य करना । इस कारण जप-साधक के लिए विधि पूर्वक निष्ठा के साथ पुरश्चररण करना आवश्यक है । पुरश्चरण के सम्बन्ध में कहा जाता है, जिस प्रकार जीवहीन देही सर्व कर्म में अक्षम है, उसी प्रकार पुरश्चरणहीन मन्त्र, सिद्धि प्रदान में अक्षम है । अतएव साधक को अवश्य पुरश्चरण करना चाहिए ।

जीवहीनो यथा देही सर्वकमर्सु न क्षमः ।
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मन्त्रः प्रकीर्तितः ॥

उत्तरायण के शुक्ल पक्ष के शुभ दिन में पुरश्चरण आरम्भ करना चाहिए । पहले दिन उपवासी रहकर दस हजार (१०,०००) गायत्री जप के बाद प्रायश्चित करते हुए मस्तक मुण्डन करना चाहिये । एक दिन में दस हजार गायत्री जप न कर सकने पर दो या तीन दिन भी उपवास रहकर जप किया जा सकता है । इसके बाद दूसरे दिन से अनुष्ठान समाप्त न होने तक प्रत्यह ब्राह्ममुहूर्त के (सूर्योदय के अव्यवहित पूर्ववर्ती मुहूर्त समय अर्थात् तीन घंटा बारह मिनट अथवा दो दण्डकाल अर्थात अड़तालीस मिनट) पहले शय्या त्याग कर शौचादि के बाद प्रातः स्नान अवश्य कर्तव्य है । दन्त धावन या दन्तमार्जन निषेध है । मात्र 12 बारह बार जल से मुख धोने से ही मुख शुद्ध हो जायेगा । दातून करते समय यदि कहीं खरोंच लग कर खून निकल जाय तो एक दिन क्षताशौच होता है एवं अशौच में कोई शुभकार्य नहीं करना चाहिए । इसीलिए दातून करना निषेध है । प्रातः स्नान के बाद शुद्ध वस्त्र एवं उत्तरीय पहन कर प्रातः सन्ध्या करनी चाहिए । इसके बाद घटस्थापना

पूर्वक श्री गायत्री देवी की षोडशोपचार पूजा करनी चाहिए । पूजा के बाद द्विप्रहर तक एकाग्र होकर आसन पर स्थिर बैठकर मानसिक जप विहित है । पहले दिन जप की जितनी संख्या की जायेगी, अनुष्ठान समाप्त होने तक उतना ही जप नित्य करना पड़ेगा । जप की संख्या कम या ज्यादा नहीं की जा सकती । आसन के बारे में नियम - पहले कुशासन, उसके ऊपर मृग चर्म (कृष्णाजिन श्रेष्ठ है) मृग चर्म न हो तो कम्बल । काला कम्बल या रेशमी वस्त्र निषिद्ध है । अनुष्ठान समाप्त न होने तक आसन से हिलना नहीं चाहिए । आवश्यकता होने पर किसी दूसरे शुद्ध वस्त्र से आसन को झाड़ लिया जा सकता है । जप से पहले गायत्री शापोद्धार तथा गायत्री हृदय पाठ एवं जप के बाद गायत्री कवच तथा ब्रह्म यज्ञ (गायत्री पाठ) करके चतुर्वेद के प्रथम मन्त्रों का पाठ करना चाहिए । सर्ववेदी ब्राह्मण को प्रथम ऋगवेद का, द्वितीय युजुर्वेद का, तृतीय सामवेद एवं सबसे अन्त में अर्थववेद का मन्त्र पाठ करना चाहिए । सामवेद के मन्त्र को तीन कर पढ़ना चाहिए "जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत्" इसके बाद मध्यान्ह स्नान, मध्यान्ह संन्ध्या एवं तर्पण (पितर पक्ष में) स्नान के समय तेल वर्जित है । गात्रमार्जनी या अंगोछे का व्यवहार नहीं करना चाहिए । अनुष्ठान प्रारम्भ होने के पहले यह स्थिर कर लेना चाहिए कि "इतनी दूरी से अधिक किसी दूसरे स्थान पर नहीं जाऊँगा ।" जैसे स्नान के लिए गंगा पर्यन्त जाना या भोजन के पश्चात् किसी वस्तु के संग्रह के लिए कहीं जाना ।" स्वपाक शुद्ध अन्न गायत्री देवी को निवेदन करके मध्यान्ह में मात्र एक बार भोजन । उत्तम कल्प में भोजन केवल गोदुग्ध, गव्य घृत आतपतण्डूल का अन्न तथा सैन्धव लवण । इन चीजों को छोड़कर दूसरी कोई चीज खाना मना है । फलादि भी नहीं । आवश्यकता पड़ने पर रात्रि को गोदुग्ध लिया जा सकता है । प्रयोजन के अनुसार माता एवं पत्नी के हाथ की रसोई खायी जा सकती है । आचमन के अन्तर १२ बार कुल्ला करना चाहिए । खरिका का व्यवहार निषिद्ध है । विष्णु नाम उच्चारण के साथ मुखशुद्धि करनी चाहिए । कोई कोई तुलसी पत्र, हरीतकी या आमलकी के द्वारा भी मुखशुद्धि करते हैं ।

भोजन के बाद पुराण पाठ की विधि है । दिवा निद्रा सब तरह से वर्जनीय है । मौन रहना कर्तव्य है । सम्भव होने से इशारा इंगित न करना ही अच्छा है । स्त्रियों से बात चीत या उनका दर्शन निषेध है । सूर्यास्त के पहले स्नान, उसके बाद सांय संध्या व गायत्री देवी की आरती व बैकाली दान । रात्रि के एक प्रहर तक गायत्री का जप, उसके बाद शयन । अधिक रात्रि-जागरण का निषेध है । शय्या के लिए कुशासन या कम्बल का व्यवहार करना चाहिए, तकिया का प्रयोग मना है । तेल लगाना एवं साबुन से वस्त्र साफ करना मना है । ब्रह्मचर्य के यावतीय नियमों का पालन करना कर्तव्य है । अपने पैर के वृद्धांगुष्ठ की ओर दृष्टि निबन्ध करने पर वह ब्रह्मचर्य की रक्षा में सहायता करता है । किसी प्रकार का व्यसन निषिद्ध है ।

इस उपुर्यक्त नियम से किसी पवित्र तीर्थ स्थान में गंगाके तट पर, नदी के किनारे, गोशाला में हिमालय आदि पर्वत पर देव स्थान में, गुरु गृह में अथवा किसी ऐसे स्थान पर रहते हुए जहाँ चित विक्षेप न हो, अनुष्ठान करने की विधि है ।

निर्दिष्ट संख्या का जप समाप्त होने पर जप का दसवाँ भाग होम या दुगुन जप, तर्पण का दसवाँ भाग मार्जन या दुगुन जप एवं मार्जन का दसवाँ भाग ब्राह्मण भोजन एवं साध्यानुरूप दक्षिणादान, नित्य दशोपचार अथवा पंचोपचार से पूजा, कर्म के पूर्णाङ्ग के लिए अन्त में कुमारी पूजा, भोजन एवं यथाशक्ति दक्षिणादान । होम तर्पण और मार्जन जप के बाद ही रोज किया जा सकता है अथवा संकल्पित सम्पूर्ण जप समाप्त होने पर भी किया जा सकता है । ब्राह्मण भोजन और कुमारी पूजा अनुष्ठान की परिसमाप्ति पर ही करनी चाहिए ।

पुरश्चरण के बीच ही परम स्नेहमयी श्री श्री माँ कृपा कर एक रात के लिए काशी आयीं एवं पतित पावनी भागीरथी के किनारे अपने इस अधम सन्तान को दर्शन देकर कृतार्थ किया । इस अनुष्ठान के समाप्त होने पर प्रतिदिन एक हजार जप करने के लिए उन्होंने उसी समय मुझे आदेश दिया था । माँ के काशी आश्रम में अखण्ड श्री सावित्री महायज्ञ के आरम्भ तक यह जप उन्होंने अपने इस अयोग्य सन्तान के द्वारा कराया था । यह गायत्री पुरश्चरण एवं गायत्री जप ही इस सावित्री महायज्ञ की प्रस्तुति का कारण हुआ था । यह धारणा मेरी अब बनी है । इस बारे में माँ ने मुझसे कभी कुछ नहीं कहा, यह मेरा व्यक्तिगत विश्वास या धारणा है । माँ के काशी आश्रम के अखण्ड सावित्री महायज्ञ का विवरण यथास्थान उल्लेख करने की इच्छा है ।

●

वाङ्माधुरी

माताजी ने सत्संग में यह प्रसंग बताया । महामहोपाध्याय पंडित गोपीनाथ कविराज जी उपस्थित थे, तथा प्रभादेवी भी थीं ।

माताजी ने कहा, "जब सावित्री ने बनारस से आकर माँ से कहा कि झूलन जन्माष्टमी का उत्सव भली भाँति हो गया है पर गोपाल जी को चोट लगी है ।" माताजी ने पहले ही गुरुप्रिया दीदी से कहा था कि उनकी छाती में दर्द हो रही है । माताजी ने यह देखा भी कि गोपाल जी बच्चे की भाँति माँ की ओर टुकुर-टुकुर देख रहे हैं । माताजी ने दीदी से कहा था कि अवश्य ही उनको चोट लगी है । माताजी ने आगे कहा, गोपालजी को सिंहासन से केवल दो बार उतारने का नियम है। एकबार जन्माष्टमी तथा दूसरी बार होली पर । "माताजी को बाद में पता चला कि गोपालजी को सिंहासन से उतार कर फिर झूले पर रखा गया था । उनको नीचे उतारते समय धप् से रख दिया गया था । इस प्रकार उनको चोट लग गयी । माताजी ने पुनः कहा, वह टुकुर-टुकुर मेरी ओर देखते गये एवं हाथ घुमाते रहे उसी समय माताजी की छाती में दर्द हो रही थी ।

× × ×

नई दिल्ली, कालकाजी आश्रम में श्री श्री माताजी विराजमान है । एक पाश्चात्य नवीन दम्पती पहली बार माताजी के दर्शनों को आये हैं । उनकी जिज्ञासा है कि गुरुका प्रयोजन क्या है ?

माताजी ने कहा, सबसे पहले व्याकुलता की आवश्यकता है । जैसे स्कूल में सभी विषयों के लिये अध्यापक की आवश्यकता होती है । माताजी ने कहा पहले निष्काम कर्म प्रारम्भ करो तब क्या प्रयोजन है देखोगे ।

माताजी ने उनको चार बातें कहीं ।

1. सत्य – सब समय सच बोलने का प्रयास करना, पहले एक दिन समर्पित करो । उस दिन केवल सच ही बोलोगे और कुछ नहीं । धीरे-धीरे-समय को बढ़ाते रहना, तुम एक महीना पर्यन्त ऐसा कर सकते हो ।

2. किसी को कष्ट, व्यथा, नहीं पहुँचाना ।

3. अच्छी किताबों को पढ़ना जो कि ज्ञानी महापुरुषों द्वारा लिखी गयी हों तथा महापुरुषों के जीवन, अर्थात् सद्‌ग्रन्थ पढ़ना

4. ४-५ मिनट के लिये चुपचाप व शान्त बैठना ।

शर्त यह रहेगी कि जब तक तुम्हारा मन तुम्हारे अधीन में नहीं आता । तब सोचना प्रारम्भ करना । आरामदायक स्थिति में बैठना । तुम्हारे ध्यान के विषय में सोचना । या तो इस प्रकार–

(i) सोचने का प्रयास करना – मैं कौन हूँ ?
(ii) मेरा स्वभाव क्या है - मैं कहाँ से आया हूँ ?
(iii) कौन मेरे भाग्य को निर्देशित कर रहा है ।
(iv) जो मैं कर रहा हूँ कौन मेरे से करा रहा है ।

बहुत लोग विभिन्न प्रकार से ध्यान करते हैं ।

प्रश्न - एक व्यक्ति ने "ज्योति" पर ध्यान केन्द्रित करने के सम्बन्ध में कहा है ।

माताजी - हम अपने चारों ओर प्रकाश देखते हैं जो सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है । तुम कोशिश कर सकते हो और उस ज्योति पर ध्यान केन्द्रित कर सकते हो । यह सब व्यापक प्रकाश (ज्योति) भी मेरे ही भीतर है । मैं स्वयं अपने में, यही विश्वव्यापक ज्योति है । यह तो बाहर की बातें हैं । इस प्रकार ध्यान करने पर तुम स्वयं उसमें निमग्न हो जाओगे । विश्वव्यापक उस ज्योति पर ध्यान केन्द्रित करने का प्रयास करो । तुमको बिलकुल स्थिर होना पड़ेगा । मन को एकाग्र तथा शान्त करने के लिये तुम्हें अनुकूल स्थान लेना पड़ेगा । अपने भ्रूमध्य में यह ध्यान को केन्द्रित करना पड़ेगा, अन्तर्चक्षु खोलना पड़ेगा, तब देखोगेज्योति । सारा प्रकाश (ज्योति) वहाँ केन्द्रित है । पाँच मिनट का समय इस अवस्था में रहने की कोशिश करो, धीरे-धीरे समय को बढ़ाना । साधारणतः तुम्हें आँखें बन्द रखनी चाहिये । यदि तुम्हें आनन्द का अनुभव हो तो तुम आँखें खोल भी सकते हो । यदि तुम आँखें खोल भी लो तो भी ज्योति पर ध्यान केन्द्रित रहना चाहिये । सबसे अच्छा है समय निर्दिष्ट रखना । ध्यान के लिये कुछ उपयोगी समय है । मध्यरात्रि में पौने बारह से सवा बारह । प्रातः ब्राह्ममुर्हूत में चार से साढ़े चार के बीच तथा सायं सन्ध्या गोधूलि वेला । इनमें से कोई भी समय चुन लो उस समय बैठ जाओ । जो समय तुम्हें अनुकूल हो उसे निर्दिष्ट कर लो ।

देखो, तुमसे मिथ्या काम न हो । जान बूझ कर तुमको झूठ नहीं बोलना चाहिये । कभी-कभी सच बहुत अड़चन वाला भी होता है । उदाहरण के लिये - तुम जैसे कह सकते हो कि तुम केवल रात को ही सच बोलोगे । माँ तुम्हारे लिये छोटी बच्ची है । तुम्हारी अपनी हैं । पूरा विश्व तुम्हारा अपना है । तुम जो भी करोगे किसी को बोलना नहीं, किसी से चर्चा भी नहीं करना ।

× × ×

माँ - जहाँ रहे पाठ करना

प्रश्न - सतसंग करते कहीं टाईम पर ना पहुँचे ?

माँ - बात की सत्यता रखनी चाहिए । हरि का बहाना मत देना । यहाँ भी हरि-कथा । तुम्हारी जो चिन्ता करेगा उसको भी फल मिलता है ।

यहाँ बैठे चिन्ता भी अफल । यहाँ बैठ कर अगर दुनिया की चिन्ता करोगे तो उसका फल निकल जायगा । मन दुनिया में - तुम दुनिया का चिन्तन करोगे पर मन को सफलता नहीं मिलेगी । स्थान की सफलता मिलेगी पर मन की नहीं । स्थान प्रभाव - गंगा में रहकर गंगा का चिन्तन करो ।

माध्यम से नहीं साक्षात् चिन्तन करना । तुम यदि धन की रक्षा करना चाहते हो तो उसे बैंक में डालते हो ।

यदि तुम एक बीज बोओ, उसे बार-बार निकाल कर देखो और लोगों को दिखाओ तो इससे तुम केवल वृक्ष को ही नहीं नष्ट करते तुम्हारी अपनी क्रिया भी सफल नहीं होती । एक पेड़ जब तैयार हो जाता है, उसमें फल लगते हैं लोग पूछते हैं तुम्हें यह कैसे प्राप्त हुआ । तुम यदि नहीं देखते हो । क्योंकि उनके लिये इसका कुछ और ही अर्थ होता है ।

प्रश्न - भगवान् बुद्ध के बारे में–पद्मनाभन-शंकर के प्रधान भक्त थे पर वास्तव में वे बौद्धधर्म के एक महान् प्रशंसक थे ।

माँ - भगवान् ही इसी इसी रूप में हैं । भगवान् के अनन्त रूप, अहिंसा एक रूप, बोध स्वरूप है विश्वबोध-ना-ही- है - ना भी है । है - भी - है । बोध । जहाँ हरि नहीं, हरि कथा नहीं, वहीं पाप है ।

●

परमपूज्य स्वामी शरणानन्द जी महाराज की विचारधारा

—दमयन्ती तिवारी

स्वामी शरणानन्द जी महाराज अत्यन्त उच्चकोटि के सन्त थे ज्ञान भक्ति और कर्म की त्रिवेणी थे ही - वे कोरे वेदान्ती न थे- भक्ति रस से ओत प्रोत तथा कर्म विज्ञान के महान तत्व वेत्ता एवं मानवता के संरक्षक भी थे। जन जन में व्याप्त सोई हुई मानवता को जगाने की उनमें इतनी लगन थी कि बीमार होने पर जब डाक्टर और प्रेमी लोग स्वामी जी से कहते कि "महाराज अब अधिक मत बोलो" तब एक दम व्यथित होकर कहते कि "जिसको दर्द होता है वह तो चीखता है। जब मुझे अपने चारों ओर पराधीन चिन्तित और दुखी लोग दिखाई देते हैं तो मैं कैसे चुप रहूँ ? संसार का दुलारा और प्रभु का प्यारा मानव जो सृष्टि का सिरमौर है। उसकी यह दशा मुझ से देखी नहीं जाती

स्वामी जी महाराज ने मानव जीवन का सुन्दर चित्र बताया है।

शरीर विश्व रूपी वाटिका की खाद बनजाए।
अंह अभिमान शून्य हो जाए और
हृदय प्रभु प्रेम से परिपूर्ण हो जाए ॥

अपनी एक निष्ठ सजीव साधना के स्वरूप उन्हें अल्प काल में ही जीवन मुक्ति एवं भगवत भक्ति प्राप्त हो गई परम स्वाधीन रस-रूप आनन्द प्राप्त कर उनके भीतर सर्वहितकारी भावना प्रार्दुभूत हुई कि जो जीवन मुझे प्राप्त हुआ है वह प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त हो जाना चाहिए। क्योंकि सभी व्यक्तियों का आर्विभाव परम तत्व से ही हुआ है। आज हम असफ़ल हैं उस अमर जीवन की प्राप्ति में तो उसका एक मात्र कारण है - हमारी अपनी भूल, हमारा अपना प्रमाद। साधना के नाम पर असाधन में फंसे हुए साधकों की दयनीय दशा संत हृदय को व्यथित करती रही। और सुधार वादी आन्दोलनों की आड़ में अहं को पोषित करने वाली प्रवृत्तियों से मानव समाज के अधः पतन से उदित वेदना ने उन त्रिगुणातीत सन्त को समाज से तटस्थ नहीं रहने दिया। सर्वहितकारी भाव से प्रेरित ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित, प्रेम के रस से आप्लावित हृदय से जो क्रान्ति कारी विचार धारा उदभूत हुई उसी से 89 वर्ष पूर्व "मानव सेवा संघ" की स्थापना हुई।

उन परम तत्व दर्शी सन्त ने एवं भक्त सन्त ने कभी भी अपने व्यक्तित्व की छाप नहीं पड़ने दी। अपने जीवन का अनुभव "मानव सेवा संघ" के नाम से व्यक्त किया। जब कभी-भी कोई साधक श्री महाराज जी के व्यक्तित्व से तो प्रभावित होता और संस्था के माध्यम से जो सत्य उन्होंने मुखरित किया उससे कोई संबन्ध न रखता तो वे कहते (उन्हीं के शब्दों में) आस्था, श्रद्धा, विश्वास से युक्त शरणागत ही शरणा नंद से अभिन्न है" निश्चिन्तता निर्भयता एवं आत्मीयता शरणागत का सहज स्वभाव है। उसे शरीर विशेष से आबद्ध करके देखना भूल है। व्यक्तित्व में जीवन बुद्धि

अन्धकार है प्रकाश नहीं । जिस प्रकार अर्थ को सुरक्षित रखने के लिये भाषा अपेक्षित होती हैं । उसी प्रकार विचार धारा को सुरक्षित रखने के लिये किसी न किसी प्रतीक की आवश्यकता होती है । मानव सेवा संघ उसी विचार धारा का प्रतीक है जिसका शरणानन्द । इस विचार से इस दृष्टि से मानव सेवा संघ की सेवा ही शरणानन्द की सेवा है ।

स्वामी जी महाराज साधकों को समय-समय पर अपने दिव्य विचार प्रगट करते थे, सिद्धान्त रूप से कोई भी गैर नहीं है । किसी न किसी नाते सभी अपने हैं । और सभी में अपने प्रेमास्पद हैं । इस सत्य को स्वीकार करना प्रत्येक साधक के लिये अनिवार्य है । जहाँ कहीं भी जो कुछ बुराई दिखाई देती है उसका कारण केवल अपनी ही भूल है इस सत्य को अपने द्वारा न मानना ही अपनी भूल है ।

यदि जीवन में भूल न होती तो हृदय में सतत् प्रीति की गंगा लहलहाती और जीवन आनन्द विभोर हो जाता । वे सभी के अपने हैं उन्हीं में प्रीति होती है । वे ही प्रीति के अधिकारी हैं । व्यक्तियों के साथ तो सद्भाव ही रह सका है । व्यक्ति को प्रीति से भिन्न कुछ चाहिये - इस कारण बेचारा प्रीति का पान नहीं कर सका । पर यह रहस्य किन्हीं इने गिने अकिंचन, निरभिमानी-प्रभु विश्वासी-शरणागत साधकों को ही स्पष्ट होता है ।

बुराई रहित होना सत संग से साध्य है । भलाई सीखी नहीं जाती, बुराई रहित होने से भलाई स्वतः अभिव्यक्त होती है । बुराई रहित होने से भलाई व्यापक होती है ।

साधक सजगता के पूर्वक आत्म निरीक्षण करे और अपने को समर्पण कर शान्त हो जाए । शान्ति-सम्पादन से अंह शुद्ध होता है और फिर स्वतः साधक में उसकी बनावट के अनुसार साधना होने लगती है । इस दृष्टि से समर्पण पूर्वक रहना बहुत ही आवश्यक है ।

मानव सेवा संघ की विचार धारा हैं कि

(१) जो हम जानते हैं उसका प्रभाव हमारे जीवन पर है या नहीं ?

(२) हम जो मानते हैं उसका प्रभाव हमारे जीवन पर है या नहीं ?

(३) हमारी क्रिया शक्ति का उपयोग विवेक-विरोधी कार्य में न हो ।

(४) विचार शक्ति का उपयोग विवेक विरोधी सम्बन्ध में न हो

(५) हमारी भाव शक्ति का उपयोग विवेक विरोधी विश्वास में न हो

पू. स्वामी जी ने इसी को साधना निर्माण कहा है व्यक्ति के विचार-भाव और कर्म सब विकासोन्मुख हो जाते हैं ।

संकलन–मानव सेवा संघ के पत्र "जीवन दर्शन से"

●

आनन्दमयी स्मृति

– ब्र. चित्रा घोष

श्री श्री माँ की अगणित लीलागाथायें असंख्य भक्तजन मानस में अनमोल हीरक खंडों की भाँति जगमगाती हैं । कभी-कभी उन्हीं अमूल्यरत्नों की झलक सर्वजन सुलभ हो जाती है । इसी परम्परा में श्री श्री माँ के सर्वदा सान्निध्य में रहने वाली ब्रह्मचारिणी चित्रा बहन –ने अपनी संकलित डायरी के पन्ने सहृदय पाठकों के लिये खोल दिये हैं ।

सन् १९५८ फरवरी की १५ तारीख, शनिवार मैं (चित्रा) दून एक्सप्रेस से मोगलसराय उतरकर सत्यनील (सती एवं अनिल गांगूली) के साथ स्टेशन वेगन द्वारा वाराणसी पहुँची । आश्रम पहुंच कर देखा कि माँ सत्संग में बैठी हैं । माँ ने मुझे देखा मुस्कुरायी तथा मुझे माला दी ।

शिवरात्रि का उत्सव था । अन्नपूर्णा मन्दिर के दरवाजे के सामने एक बड़ी परात में वाणलिंग शिव विराजमान थे, उनके चारों ओर पूजा के आसन लगे थे । इस प्रकार कई गोलाकार पूजन व्यवस्था थी । मंदिर के सामने वाले गोलाकार में पन्नालालजी आदि भक्तगण थे, बायीं ओर की प्रथम पंक्ति में मैं तथा दूसरी पंक्ति में शान्ता पाठक तथा तीसरी में कमलाजी (मोहनलाल) इत्यादि थे । कन्यापीठ की लड़कियाँ चण्डीमण्डप में एवं बरामदे में बैठी थी । मैं कृष्ण पूजा करती हूँ अतः शिवपूजा की अधिकारिणी हूँ या नहीं मुझे संदेह था । माँ ने सुन्दर समाधान कर दिया । "गोपेश्वर शिव भी तो है ।"

पूजा की जगह माँ ने खुद सामने खड़े होकर करवायी । सन्ध्या समय गंगा स्नान कर आयी । निर्जला उपवास तो थी ही । चतुर्दशी के लगते माँ को अपनी माता एवं शान्तिमौसी की ओर से दो मदार की माला अर्पण की । ठीक सात बजे सब अपने-अपने आसन पर बैठ गये । माँ पहले आकर हम लोगों के पास बैठीं । पूजन सामग्री में सफेद फूल न देख माँ अपनी माला तोड़कर सबके पात्र में फूल देती हुई कहने लगी–"सेवा कर रही हूँ ।" माँ को किसी ने रुद्राक्ष की दो मालायें चढ़ायी थी माँ ने उसमें से एक-एस. डी. ओ को तथा दूसरा पाल साबह को दिया । थोड़ी देर ऊपर रहकर माँ नीचे गयीं । प्रथम प्रहर की पूजा के बाद जो खाली समय था उस समय माँ नीचे थीं । मौन के बाद द्वितीय प्रहर प्रारम्भ हुआ । साढ़े दस से बारह बजे तक खाली समय था हमलोगों को नीदं की झपकियाँ आ रही हैं देख कर माँ ने कीर्तन करने कहा । मैंने "शिव शिव" "जय शिव शंकर" कीर्तन किया । माँ ने कीर्तन प्रारम्भ किया । "जय जय जय शिव-शिव शिव, देव देव महादेव " "स्वयम्भू विश्वनाथ - हे नाथ विश्वनाथ" थोड़ी देर करने के उपरान्त कहा, ख्याल नहीं है तुमलोगों ने कहा कर दिया । डाक्टर बाबू (गोपालदास गुप्त) के पुत्र रजत ने कीर्तन गाया । बारह बजे दूसरे प्रहर की पूजा प्रारम्भ हुई । माँ विश्राम के लिये गयीं । 'माँ पुनः तीन बजे आयीं' । माँ ने मयूरभञ्ज के राजकुमार के ज्योति दर्शन की कथा सुनायी । धूमावती मूर्ति का

ज्योतिदर्शन देवी के वराहदन्त एक कुण्ड में पाये गये थे । स्वप्न में मन्दिर निर्माण का आदेश । यहाँ द्वितीय मन्वन्तर में देवी की पाँच अंगुलियाँ गिरी थीं । देवी के छः हाथ, दो हाथों में धनुषवाण, दो हाथों में डालिम (अनार फल) एवं कपाल । दो हाथों में पाश एवं अंकुश । षट्कोण के बिन्दु से ज्योति निकल रही थी । माँ ने कहा आश्चर्य की बात तो यह है, उस समय जिस नक्षत्र का समावेश था इस समय भी उसी नक्षत्र का समावेश चल रहा था । ज्योति देखकर मयूरभञ्ज के कुमार ने अपने राज्य के १0 मील के भीतर पाँच देव कुण्ड का निर्माण कराया । इस कथा को सुनकर माँ ने कहा था लिख कर रखना । तथा देवी शक्ति ने जो ज्योति रूप में दर्शन दिया उसका ध्यान करना ।

काशी के सिद्धसंत शंकर भारती जी के प्रसंग में माँ ने सुनाया "अचानक आज तीन बजे प्रातः मिलने आये थे । नेत्रों से झरझर अश्रुधारा बह रही थी । उपासना एवं विचार दोनों का एकत्र समावेश अपूर्व दशा है उनकी । हरि, हरि, हरि । बाधायें आती है एक-एक परिस्थिति में ।" माँ ने और भी कहा, "रोज ही तो खाते-पीते हो, सोते हो, एक रात उनको लेकर रहने का प्रयास करो - पाओ न पाओ उनको लेकर तो रहना ।

चौथे प्रहर की पूजा के पहले माँ ने आकर कहा, आओ, सब मिलकर थोड़ा नाम संकीर्तन करें । यह कहकर खूब ताली बजाकर जय शिवशंकर कीर्तन किया । पूजा चार बजे समाप्त हुई । उसके वाद व्रत कथा सुनी गयी । साढ़े चार बजे सब माँ को प्रणाम करके आसन से उठे ।

२० फरवरी । पू. विनोबा भावे के आश्रम से कुछ लोग माँ के पास आये थे । सत्संग में माँ ने कहा, "जागरण जा गोड़े जाय (अर्थात् जो तैयार हो जाता है) मा मारेन अर्थात् माँ मरण को मारती हैं । माँ है मरण वारण काल निवारण ज्ञान खड्ग से सन्तान का काल हरण करती हैं दूसरे हाथ से वराभय दे रही है ।"

× × ×

वासन्तीपूजा - षष्ठी - २६ मार्च । किसी विशेष व्यक्तित्व ने कहा था कि १९५७ में पाकिस्तान नहीं रहेगा । पर एंसा नहीं हुआ । गोपी बाबू के साथ इसी प्रसंग में चर्चा हो रही थी माँ ने कहा. "जिस स्थिति में इस प्रकार का कुछ दिखायी पड़ता है । उसके बाहर की गण्डी में दिखायी नहीं पड़ता । अतः बिल्कुल ठीक नहीं होता है, बिना समझे कहा जाता है । जो समग्र (सम्पूर्ण) को प्रत्यक्ष रूप में देखते हैं वे ही ठीक ठीक कह सकते हैं ।

२७ मार्च, वृहस्पतिवार । आज वासन्ती पूजा की सप्तमी है । माँ मंगल आरती के समय आयीं, माँ स्वयं सब व्यवम्था का निरीक्षण कर रही है । कुसुमदा (निर्वाणानन्दजी) पूजा कर रहे हैं । माँ ने कहा, दोपहर को भी जमीन में ही ठाकुरजी का बिस्तर लगाया था, मैं भी जमीन पर ही सोयी गर्मी में ठाकुर जी को भी जमीन पर ही सुलाते हैं ।

२८ मार्च, शुक्रवार, अष्टमी तिथि । रात के साढ़े दस बजे सन्धि पूजा है । कुसुमदा ने माँ की पूजा कर माँ को खिलाया । माँ ने कहा, दुर्गा माँ को खिलाने के पूर्व इस शरीर को भी थोड़ा खिला

दे रहे हैं । दोपहर को जब सब कोई प्रसाद पा रहे थे । माँ इतनी धूप में घूम-घूम कर सब देखते हुए कहने लगी–"प्रत्येक में भगवती का मुख ही प्रसाद पा रहा है । प्रत्यक्ष दीख रहा है । सब उनके ही विग्रह हैं ।

माँ रात को ऊपर के बरामदे से बोली - चित्रा बन्धु, मूँग की दाल खाकर देखो कैसे बनी हैं, मैंने दिखाकर बनवाया है ।" उस दिन दाल अत्यन्त स्वादिष्ट बनी थी ।

२९ मार्च, शनिवार नवमी । माँ ने आज मेरी दी हुई लाल किनारे की साड़ी पहनी थी । मैंने लाल जपा तथा अन्य पुष्पों की माला, माँ को दी । माँ की प्रसन्न मुद्रा है । माँ ने आज सायंकाल सबको बतासा दिया ।

३० मार्च, रविवार, दशमी । आज मंगल आरती के समय आकर माताजी मण्डप में बैठीं । मुझे एक सफेद गुलाब दिया । माँ ने खूब कीर्तन गाया । माँ को अनेक जनों ने लाल जपा पुष्प की माला पहनाई । माँ ने एक जपाकुसुम की माला पुजारी कुसुमदा को पहनाते हुए कहा, "ठाकुर बनकर ठाकुर की पूजा करनी चाहिए ।" माँ ने निम्नलिखित पद गाये ।

"जय दुर्गा, माँ दुर्गा ।
दुर्गति नाशिनी माँ दुर्गा ।
प्राणमयी माँ आमार आत्ममयी माँ ।
कृपामयी माँ आमार स्व-रूपिणी माँ ।
भक्तिमयी माँ आमार विश्वमयी माँ ।
प्रेममयी माँ जय जय माँ ।
आकाशे बाताशे माँ माँ माँ ।
घटे घटे माँ जय जय माँ ।
शिव शिव शिवानी, शिव शिव इशानी ।
ओमा- उमा, उमा, ओमा, जाओनि मा" इत्यादि

३१ मार्च, सोमवार । एक सज्जन आज माँ के प्रथम दर्शनों को आये हैं । उनके साथ एकविशेष घटना घटी है । उक्त सज्जन ने एक बार जयराम बाटी आकर शारदा माँ से प्रार्थना की थी मुझे माँ का दर्शन प्राप्त होय । स्वप्न में उनको शारदा माँ का तो दर्शन न हुआ पर एक नारी मूर्ति का दर्शन हुआ । साथ ही गंगा तट पर एक आश्रम देखा एवं मन्दिर देखा तथा वह नारी मूर्ति कह रही है प्रसाद खाओ, साथ ही खिला भी रही हैं ।

आज तीन वर्ष बाद माँ को देखकर उन्होंने पहचाना यही वह नारी मूर्ति है । ३० ता. दशमी को सायंकाल माँ मालपुआ एवं फल रख कर मानो किसी की प्रतीक्षा कर रही थी । उक्त सज्जन उसी दिन पहले पहल आये और माँ को देखते ही अश्रुधारा उनके नेत्रों से प्रवाहित होने लगी । सब सुनकर माँ ने उनसे कहा तुम्हारे लिये ही मैंने कहा था फल मिठाई जरा संभाल कर रखना किसी को देना है ।

आज पहली तारीख को वे पुनः आये है । शास्त्री जी नामक एक सज्जन ने प्रश्न किया "शारदा माँ ने ऐसा स्वप्न क्यों दिखाया ?" माँ के पास आज कुछ रामकृष्ण मिशन के साधुगण भी उपस्थित थे । आज भण्डारा था । माँ ने कहा, "माँ का खेल– शारदा माँ का खेल, वे तो सर्वरूप में है ही । मेरी माँ का तो बहुरूप (अनेकरूप) वे इसी रूप में प्रकाशित ।" आज माँ के श्रीमुख का भाव अपूर्व है, माँ मानो आज दूसरे ही लोक में विराज कर रही है । माँ कहती है जीव के भोग को ही कर्म भोग कहते हैं । अर्थात् प्रारब्ध, जैसे पंखे का बटन बंद करने पर भी थोड़ी देर तक घूम कर फिर बन्द हो जाता है, यही प्रारब्ध है । उसका क्षय होने पर कर्मबन्धन नहीं रहता ।

(बंगला से अनूदित)

●

गुरु वन्दना

मुझे सद्‌गुरु नाथ मिले कुछ और मिले न मिले
न हिं जानूँ विधि पूजन वन्दन, ज्ञान ध्यान निष्कर्मन की ।
श्री गुरु चरण मिले कुछ और मिले न मिले
नहिं चाह रही तीरथ व्रत की नहिं अन्य किसी भी दरसन की
सद्‌गुरु दरस मिले कुछ और मिले न मिलें ।
इच्छा न रहे स्वर्ग सुख मोक्ष हूँ की, नहीं देह गेह का ध्यान रहे ।
अशरण शरण चरण सुख दायी पल भर ना विसरें ।
आस पूरे मेरे मन की, ये ही वरदान मिले ।।

●

काशी-महिमा

काशी खण्ड-प्रथम भाग से संकलित

भूमिष्ठापि न यात्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधस्थापि या
या बद्धा भुविभुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तवः ।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनी तीरे सुरैः सेव्यते
सा काशी त्रिपुरारि राजनगरी पायादपायाज्जगत् ॥ २ ॥

(काशी खण्ड-प्रथमोध्याय)

अर्थात् - जो भूतल में विराजमान रहने पर भी स्वयं भूमि नहीं जो अधोभाग में स्थित होने पर भी स्वर्ग के ऊपर है, जो स्वयं भूमण्डल में बद्ध होने पर भी मुक्ति का दान करती है; फिर जिसमें मृत होने वाले प्राणिमात्र अमृतपद के अधिकारी हो जाते हैं, एवं जिसे त्रैलोक्य पावनी गंगा के तीर पर देवगण सदैव सेवते रहते हैं, वही त्रिपुरान्तक के राजधानी श्री काशी अज्ञानरूप विपत्ति से जगत् की रक्षा करे ।

काशी नगरी भगवान् शिवशंकर के त्रिशुल पर है, कहा गया है–

क्षेत्रमेतत्त्रिशूलाग्रे शूलिनस्तिष्ठति द्विज ।
अन्तरिक्षे न भूमिष्ठं नेक्षन्ते मूढ बुद्धयः ॥
भूर्लोके न च संलग्नमन्तरिक्षे ममालयम् ।
विमूढास्तं न पश्यन्ति मुक्ताः पश्यन्ति चेतसा" ॥

अर्थात् शूलपाणि भगवान् का यह क्षेत्र उनके त्रिशूल के अग्र भाग में रहता है । न तो अन्तरिक्ष, नहीं भूमि पर इसे मूढ़ बुद्धि देख सकते हैं । यह पृथ्वी पर भी संलग्न नहीं है, मेरा निवास विमूढ़ लोग नहीं देख सकते मुक्त पुरुष अपने निर्मल चित्त द्वारा देखते हैं ।

आगे वर्णन आता है–

"अविमुक्तमिदं क्षेत्रमपि ब्रह्माण्डमध्यगम् ।
ब्रह्ममाण्डमध्ये न भवेत् पञ्चक्रोशप्रमाणतः ॥

यह पञ्चक्रोश प्रमाण क्षेत्र ब्रह्माण्ड से भी परे है ।

भगवान् शंकर कहते हैं–

तामसीं प्रकृतिं प्राप्य कालो भूत्वा चराचरम् ।
ग्रसामि लीलया देवि काशीं रक्षामि यत्नतः ॥

तामसी प्रकृति को स्वीकार कर सम्पूर्ण चराचर का कालस्वरूप बनकर अनायास सबका ग्रास करता हूँ । यह काशी कलिकाल वर्जित है ।

काशी रहस्य में काशी की महिमा का वर्णन इस प्रकार कहा गया है –

"वस्तुः कोटिगुणं पुण्यं काश्यां वासयितुर्ध्रुवम् ।
आत्मानं तारयेद्वस्ता तौ द्वौ वासयितु यतः ॥"

अर्थ– काशी में स्वयं वास करने वाले से वास कराने वाले को करोड़गुणा पुण्य अधिक होता है; क्योंकि वास करने वाला तो केवल अपने को ही तारता है; पर वासयिता अपने को तथा जिसे वास कराता है उसे दोनों ही का उद्धार कर देता है ।

काशी रहस्य में काशी से बाहर मृत्तिका लेने का निषेध सुना जाता है

काशीतो मृत्तिकाऽन्यत्र नेतु मिच्छति यः पुमान् ।
कुलं वै पतितं तस्य रौरवे चाऽतिभैरवे ॥

काशी में गंगास्नान की महिमा अवर्णनीय और अपरम्पार है । गंगास्नान सर्वत्र ही असीम पुण्यजनक है, अवर्णनीय फलप्रद है । हरिद्वार, प्रयाग, और गंगा सागर-संगम में स्नान का बड़ा माहात्म्य है तथा यह अवसर सुदुर्लभ है । पर वाराणसी में उत्तरवाहिनी गंगा का स्थान प्राप्त करना सुदुर्लभतर है ।

"काश्यां सुदुर्लभतरा केनचित्पुण्यशालिना ।
प्राप्यते पूर्व संस्कारैस्तपोभिधर्म चारिणा ॥"

काशी में वास करने वालों के लिये काशीखण्ड में निर्देश दिया गया है ।

"न वन्ध्यं दिवसं कुर्याद्विना यात्रां क्वचित्कृती ।"

अर्थात् पुण्यवान् जन काशी में एक दिन भी बिना यात्रा का व्यर्थ न होने दे । कहा गया हैं-

"यस्य वन्ध्यं दिनं यातं काश्यां निवसतः सतः ।
निराशाः पितरस्तस्य तस्मिन्नेव दिनेऽभवन् ॥"

काशीवास करने वाले जिस सज्जन का दिन व्यर्थ बीत जाता है, उस दिन उसके पितरगण निराश हो जाते हैं ।

काशी में यात्रा का अत्यन्त महत्व है, यह यात्रा विविध प्रकार की होती है । आज इस प्रचण्डभौतिक बाद के युग में भी इस यात्रा के प्रति लोगों की श्रद्धा में कमी नहीं आई । इस वर्ष दो ज्येष्ठ मासों का समावेश था । यह अधिक मास या पुरुषोत्तम मास के नाम से जाना जाता है । दिनांक १६ मई से ९९ से १४ जून ९९ पर्यन्त जो समय था इसमें पञ्चक्रोशी यात्रा के प्रति लोगों का अत्यन्त रूझान देखा गया । रात्रि के प्रायः द्वितीय प्रहर से यात्रा की धूम मच जाती थी, नाव भर-भर कर यात्रीगण भगवान् का गुणगान करते हुए अस्सि घाट की ओर जाते थे वहाँ से आगे

पैदल यात्रा पर चलते थे । अनेक यात्री घाट से पद यात्रा पर ही चलते थे । इस यात्रा में महिलाओं की संख्या अधिक थी । पर वृद्ध एवं बालक भी दीखते थे । वृद्ध पिता एवं माता को पुत्र लाठी के सहारे ले जा रहा है यह दृश्य भी देखने में आया ।

यह काशी पञ्चक्रोश अर्थात् पाँच कोस की है । इसकी महिमा में भगवान् शंकर अर्धाङ्गिनी उमा से कहते हैं । "पञ्चक्रोशी परिमित यह पुण्यस्थली मेरा प्रिय क्षेत्र है । यहाँ मेरी ही आज्ञा चलती है, अन्य की नही" काशीवासी लोग प्रायः अगहन और फाल्गुनमास में यह यात्रा करते हैं, फाल्गुन में ठाकुरजी भी पञ्चक्रोशी यात्रा करते है, ऐसा सुना जाता है । इससे प्रत्येक निवास स्थानों पर साथ में कभी-कभी रामलीला, कृष्ण लीला और गाना वजाना भी होता है ।

"यथा कथञ्चिद्देवेशि'! पञ्चक्रोशप्रदक्षिणम् ।
कुर्यादेव न मासादि चिन्तयेद्धर्म्मकोविदः ॥
स एव शुभदो कालोयस्मिन् श्रद्धोदयो भवेत् ॥"

अर्थ जैसे बन पड़े, वैसे ही पञ्चक्रोश की प्रदक्षिणा करे, धार्मिक जन मास इत्यादि की कुछ भी चिन्ता न करें । वही काल शुभप्रद है, जब चित्त में श्रद्धा का उदय हो जावे ।

पञ्चक्रोशी यात्रा की विधि काशीखण्ड के प्रथम भाग में काशी यात्रा के अन्तर्गत दी गयी है । यह पञ्चक्रोश यात्रा मणिकर्णिका किंवा मुक्तिमण्डप से आरम्भ होती है और वहीं पर आकर समाप्त होती है ।

मणिकर्णिका से कर्दमेश्वर ३-कोस, भीमचण्डी ८ कोस, रामेश्वर ५ कोस, शिवपुर १९ कोस, कपिलधारा २२ कोस और मणिकर्णिका २३ कोस पर है, फिर १$\frac{१}{२}$ कोस देवदर्शन के लिए जो हटकर जाना पड़ता है और वहाँ लौटना पड़ता है । इस रीति से यह पञ्चक्रोशी यात्रा सब मिलाकर २५ कोसों की होती है । इसमें मणिकर्णिका से अस्सीसंगम और वरनासंगम से मणिकर्णिका तक गंगाजी के तीर-तीर जाना पड़ता है । बरसात में लोग गंगाजी से नाव पर जाते हैं ।

कहा गया है कि वर्ष में एक बार पञ्चक्रोशी यात्रा अवश्य करनी चाहिये ।

काशी की महिमा का वर्णन काशी खण्ड में इस प्रकार आया है ।

हं हो किमहो निचिताः प्रलब्धा बंहीयसायासभरेण काशीम् ।
प्रभूतपुण्यद्रविणैकपण्यां प्राप्याऽपि हित्वा क्व च गन्तुमुद्यताः ॥ १९ ॥

हे मनुष्यगण! तुमलोग निश्चय ही पाप-पुञ्ज से परिपूर्ण होकर वञ्चित हुए हो । बड़े पुण्यधन से लभ्य इस काशी को अतिप्रयत्न से पाकर फिर भी कहाँ जाने को उद्यत होते हो?

रे रे भवे शोकजलैकपूर्णे पापे स्म लोकाः पतिताब्धिमध्ये ।
विद्राणनिर्वाणविरोधिपापां काशीं परित्यज्य तरिं किमर्थम् ॥ २१ ॥

अर्थात् हे मानव जन! मोक्षपद के विरोधी पापों को दूर करने वाली काशीरूपी नौका को छोड़कर शोकरूपी जलसे भरे हुए इस पापमय संसार में क्यों गिरते हो ।

धर्मस्तु सम्पत्तिभरैः किलोह्यतेऽत्यर्था हि कामै बहुदानभोगकैः ।
अत्यत्र सर्वं स च मोक्ष एको काश्यां न चान्यत्र तथा यथाऽत्र ॥ २३ ॥

किसी स्थान में प्रचुर धन व्यय करके धर्मलाभ होता है और कहीं पर बहुतेरे दान-भोगों के द्वारा अर्थ और काम की प्राप्ति भी हो सकती है । चाहे किसी स्थान में यह सब पाये जाये, परन्तु यह एक मोक्ष, जैसा काशी में है, वैसा अन्यत्र कहीं भी प्राप्त नहीं होता ।

स्कन्द पुराण के अन्तर्गत काशीखण्ड के प्रथम भाग के सप्तम अध्याय के ६६ वें श्लोक में काशी का अनुपम वर्णन है ।

काशीति काचिद्बला र भुवनेषुरुढ़ा लोलार्ककेशवविलोलविलोचना च ।
तद्दोर्युगं च व रणासिरियं तदीया वेणीति याऽत्रगदिताऽक्षयशर्मभूमिः ॥

अर्थात्, काशी नाम की एक कोई स्त्री त्रैलोक्य में विदित है जिसके लोलार्क और केशव दोनों चंचल नयन हैं, वरुणा और अस्सी ये दोनों नदियाँ उसके बाहु-युगल हैं और यह त्रिवेणी जो कही गयी है, यही अक्षय प्रदायिनी उसकी वेणी है ।

काशीखण्ड में शिव शर्मा ब्राह्मण की कथा आती है वह ब्राह्मण वाराणसी को देखकर कहता है– "क्या तत्व विचार, क्या व्यवहार, चाहे किसी भी प्रकार से हो, पर स्वर्ग पुरी काशी की समता नहीं कर सकती । करेगी कैसे ? स्वर्गपुरी तो विधाता की सृष्टि है, काशी स्वयं ईश्वर की ही सृष्टि है । सामान्य मणिरत्नों से स्वर्ग की रचना हुई है और अत्यन्त बहुमूल्य रत्नावलियों से काशी का निर्माण हुआ है । स्वर्ग में नानाविध भव बन्धन है, पर काशी में वह सब कुछ भी नहीं है । फिर काशी की समता स्वर्गपुरी से कैसे की जाय ? असत् शास्त्र और ब्रह्मप्रतिपादक शास्त्र में जैसा भेद है, वैसा ही काशी और स्वर्ग में भी है । चित्रगुप्त की लिखी हुई ललाट की लिपि को भी काशी ही खण्डित करती है ; क्योंकि यहाँ पुनर्जन्म नहीं होने पाता ।

इस काशी के जल की शक्ति भी अचिन्तनीय है । स्वर्ग में देवगण जिस अमृत का पान करते हैं, वह तो व्यर्थ ही है; क्योंकि काशी का जल एक बार भी पी लेने से फिर माता के स्तन का दुग्ध नहीं पीना पड़ता है, पर अमृतपान से यह फल नहीं मिलता ।

अमृतमयी गंगा के तट पर निवास करने वालों की सराहना देवता भी पुनः पुनः करते हैं ।

●

[नोट :– काशी खण्ड प्रथम भाग काशी यात्रा पृ,. २१]
[काशी खण्ड प्रथम भाग के आधार पर]

श्री श्री माँ के श्री मुख से दीक्षा का विवरण

बाजितपुर आने के कुछ दिन बाद ही तालाब के उत्तर तट पर बैठकर इस शरीर को एक बात का ख्याल आया भगवान् को मनुष्य किस प्रकार चाहता है और कैसे पाया जाता है । साधना के इस खेल को खेलना पड़ेगा । एक दिन दीक्षा क्या है, कैसे होती है इत्यादि नाना विषय विशेष भाव से ख्याल रूप में प्रकाशित हुए ।

दीक्षा सम्बन्धी प्रश्न के उत्तर में माँ ने कहा– जितना हो जाय । कुछ दिन पहले आशु की माँ के पास उनके गुरुदेव ने एक पत्र लिखा था । वह पत्र रखा था । उस समय उम्र बहुत ही कम थी । उस पत्र से पता आदि लेकर भोलानाथ ने उनको आने के लिए पत्र दिया कोई जवाब नहीं मिला । आशु की माँ से भी पता माँगा गया कोई जवाब नहीं आया । इधर दीक्षा के सम्बन्ध में मेरे ख्याल में जो बातें आयी थी, वह खेल प्रारम्भ हुआ । ख्याल में और एक बात भी आयी दीक्षा के लिए व्याकुलता में भगवान् स्वयं दीक्षा रूप में प्रकाशित होते हैं । जैसे पेड़ में बीज रहता है और बीज में पेड़ रहता है उसी प्रकार पेड़ से भी बीज का प्रमाण मिलता है और बीज से भी पेड़ का प्रमाण मिलता है– स्वाभाविक प्रकाश ।

उस दिन झूलन (राखी) पूर्णिमा थी । सांय सन्ध्या के समय एक महिला ने आकर पूछा झूलन (झाँकी) देखने जाऊँगी या नहीं । मैंने ना कह दिया भोलानाथ जी के भोजन के पश्चात् जल्दी से थोड़ा कुछ खाकर उन्हीं की चौकी के थोड़ी दूर पर जमीन पर बैठकर मैंने कहा– मेरा शरीर आज विशेषरूप से कैसा लग रहा है– आज मैं अभी ही बैठूँगी । दूसरे दिन मैं इतना शीघ्र नहीं खाती । उस दिन थोड़ा ही खाया । आज का भाव विलक्षण था । इसके दो चार दिन पहले भोलानाथ जी ने मेरे नाना भावों को देखकर कहा था–"देखो ! तुम्हारी दीक्षा नहीं हुई है यह सब क्या होता है समझ में नहीं आता । हमलोग शैव तथा शाक्त हैं । पर आप हरि नाम करती हो, इस प्रकार की अलौकिक अवस्थायें भी एक के बाद एक होती हैं । हमलोगों के उक्त मतानुसार भी नाम करके तो देख सकती हो । कहा–अच्छा । इसके अनुसार मैंने खुद ही भीतर ही भीतर "जय शिव शंकर बम बम हर हर" यह नाम ठीक किया और भोलानाथ जी से कहा–तब क्या मैं यह नाम करूँगी ? उन्होंने कहा ठीक है करो ।

कमरे में बत्ती जल रही थी, देखा पहले हरिनाम करने पर शरीर पर जो क्रियादि विशेषरूप से होते थे, वे ही इस नाम के करने के साथ साथ और भी अधिक एवं क्रमशः परिवर्तित भाव में होते गये, उस भाव में परिवर्तन होते होते नये भाव बढ़ते ही गये । स्थिर भाव से थोड़ा पूर्व कोने की ओर मुँह करके एक विशेष आसन करके शरीर बैठ गया । जमीन पर घर लिपने की भाँति लिपकर एक यज्ञमण्डल स्वतः तैयार हो गया एवं आसनस्थित अवस्था में शरीर जमीन पर पड़ा रहा । तब रात के प्रायः दस-ग्यारह बज रहे थे । पहले कभी यज्ञमण्डल तैयार करते नहीं देखा

गया । उस दिन अपने आप ही यज्ञमण्डल तैयार हो गया । उस आसन की अवस्था में पूर्व की ओर मुँह करके बैठा गया । निःश्वास प्रश्वास की नूतन परिवर्तन की धारा में एक अपूर्व सुन्दर भाव में भावित थी । नाभिमूल से एव बीज जैसा मन्त्र निकल रहा था । आसन जिस प्रकार जब वहाँ था, उस समय पूजा अनुष्ठानादि स्वतः प्रकाशित हो रहे थे । हाथ घूमकर उस मण्डल के भीतर, यन्त्र के ऊपर अक्षर का अंकित होना, अग्निमूर्ति का प्रकाश, यज्ञ की आहुति उपचार आदि सब अपने से ही अपने में प्रकाशित हुए थे । स्थूल एवं मानसपूजा तथा यज्ञादि जिस प्रकार होते हैं उसी प्रकार प्रकाशित हुए थे । मन्त्रादि तथा द्रव्यादि के साथ स्थूल रूप में प्रकाशित होकर साथ ही साथ बाहर के शरीर के अंग आदि ने जहाँ जैसी आवश्यकता वहाँ वैसी ही सहायता की । मन्त्र के द्वारा पूजा, द्रव्य द्वारा पूजा, कैसा सुन्दर इनका प्रकाश । यह सब होते होते शरीर चुप हो गया । भीतर साँसों के साथ उस अक्षर की ध्वनि अस्पष्ट आनी प्रारम्भ हो गयी नाभि के नीचे की ओर तक मानो वह ध्वनि प्रकाशित हुई थी । क्रमशः अस्पष्टता स्पष्ट होते होते इस शरीर के नेत्र थोड़े समय के लिये बन्द हो गये थे । मुख तथा जिह्वा की नाना प्रकार की टेढ़ी मेढ़ी क्रियायें होकर नाभि से सम्पूर्ण शरीर के भीतर जोर लगाकर एक नवीन प्रकार से वह अक्षर वेग सहित आकर स्पष्ट रूप से कण्ठ एवं मुख से उच्चारित हो गया । बाद में मन्त्र स्थण्डिल पर अंकित होकर मन्त्र द्वारा आहुति इत्यादि समाप्त हो गयी ।

योगशास्त्र में जो षट्चक्र भेद की बात है यह उसी का ही विशेष एक ओर का प्रकाश है । बाहर एवं भीतर सर्वाङ्ग जड़ता के न टूटने से नाम का झंकार तथा बीजादि का उच्चारण, स्मरण या चिन्ता ठीक से नहीं चल सकती ।

इस आहुति के होने के उपरान्त शरीर की गति एक अभिनव उत्साह और स्फूर्ति से सिहर उठी । इस शरीर की गति एक महा आनन्दमय राज्य में प्रवेश कर चुप हो गयी । यह अक्षर क्या है ? इस प्रकार की जिज्ञासा आने के साथ-साथ इसके अर्थ एवं रूप, गुणादि के साथ, बाद में क्रमशः जो सब मूर्त तथा अमूर्त भावादि प्रकाशित होंगे इस शरीर के भीतर प्रकाशित हुए तथा अपने भीतर से कान में शब्द रूप में ध्वनित भी हुए । बैठी हूँ, देखा हाथों के कोरकों में वृद्धांगुष्ठ जा रहा है । काफी देर इस ओर उस ओर घूम फिरकर यथास्थान आया एवं उस मन्त्र का जप होने लगा । उसी रात को ही पहली बार शरीर के भीतर से इस प्रकार मन्त्र, जप, पूजा एवं यज्ञादि जो कुछ प्रकाशित हुये । दूसरे दिन प्रातःकाल शरीर में यहाँ तक कि पेट की नाड़ी तथा नस-नस में स्पन्दन था, एवं क्रिया की गति में कहाँ विलीन हो गया ।

भोलानाथ जी गत रात्रि में शरीर की दो एक क्रियाओं को देखते देखते सो गये थे । आज पूछा—कल आपको क्या-क्या करते देखा था । उनसे अचानक कहा गया—मेरे से इस विषय में प्रश्न मत करिये । आपसे आज तक कुछ गोपन (छुपाया) नहीं किया । पर क्या करूँ कहने का भाव नहीं आ रहा है । आप यदि कहें, देखा जाय, यदि कहना हो जाय । पर यदि कहा जाय तो बाद में इस शरीर का क्या होगा कहा नहीं जा रहा है । तब वे कह उठे—"मैं भी नहीं जान सकूँगा ? अच्छा ।

देखा आश्चर्यचकित होकर जरा चिन्तित हुए। शायद सोचा होगा कहने से कोई हानि हो सकती है यह सोचकर कहा—अच्छा। मत कहना।

उस दिन प्रातःकाल भी यह सब लेकर बैठा गया था। घर के सभी के भोजन के उपरान्त स्नान करके बिना खाये लोगों की दीक्षा होने के उपरान्त जैसे सन्ध्या करते हैं उसी प्रकार शरीर का बैठना हुआ। दिन में इस प्रकार का पहली बार बैठना था। कितनी देर चुप बैठी रही, जप प्रारम्भ करते ही देखा कि हाथ सिकुड़ कर आ जाता है। शून्य भाव लेकर शरीर बैठा हुआ है। सन्ध्या की क्रिया समाप्त करनी ही पड़ेगी ऐसा भाव। बहुत बाद देखा कि पहली रात को जैसे साधारण आसन पर बैठने से मेरुदण्ड के बराबर कमर के कुछ नीचे टक् टक् शब्द तथा साँस की क्रियादि हुई थी उसी प्रकार हुई और एस विशेष आसन में बैठा गया। बैठने के बाद अपने से ही उस प्रकार की क्रियादि होने लगी। जैसे आसन की बांयी ओर जल छिड़क कर पूजा का स्थान लिपना। उसी प्रकार बायीं ओर जल, मैंने बाये हाथ से दाहिने हाथ में जल लेकर पूजा की जगह की, बाद में एक पात्र में अच्छी तरह हाथ को धोया। फूल तोड़ना, चन्दन घिसना, नैवेद्य करना, धूप-दीप जलाना सभी आयोजन किये गये। यह सब स्थिर भाव से सिद्धासन में बैठी अवस्था में ही प्रकाशित हुए। सब कुछ का अपने भीतर से ही अपने पास प्रकाश। आखिर जहाँ बैठी हूँ वहाँ से दोनों हाथ मस्तक से प्रारम्भ हो शरीर के प्रत्येक अंग को स्पर्श कर जमीन पर पड़े एवं दोनों हाथों से जमीन पर एक आसन बनाया गया। उस पर बैठकर जमीन पर सिर रखा गया। पहले कभी भी किसी को ऐसा आसन करते नहीं देखा गया। उसके ऊपर स्थिर बैठकर अपने से ही मन्त्रादि के सहयोग से आचमन, जलशुद्धि, सूर्यप्रणाम इत्यादि सन्ध्या वन्दन की समग्र क्रियादि होने पर अपने में ही सब देव देवी, उसी भाव से शरीर पर ही हाथ घुमा घुमाकर किसी किसी स्थान पर मुद्रादि सहित पूजा होने लगी। धूप, दीप, नैवेद्यादि भी निवेदित हुए। दूसरे दूसरे दिन स्थिर भाव से मस्तक पड़ा रहता था। कभी काफी देर तक स्थायी होकर शरीर एक स्पन्दनरहित की भाँति अपने भाव में पड़ा रहता था। साथ ही साथ अनर्गल (बिना रुके) मन्त्रादि उच्चरित हुए। इस पूजा के समाप्त होने पर सीधे दोनों हाथों के द्वारा ब्रह्मतालु (मस्तक का मध्य भाग) से एक देवता को वक्षस्थल के मार्ग सं ले जाकर सामने जमीन पर किसी आसन पर विराजित करके पुनः उक्त प्रकार से पूजा की गयी। उसके बाद जिस प्रकार उतारा गया था उसी प्रकार ब्रह्मतालु में अपने में ही विलीन कर सर्वाङ्ग में हस्त स्पर्श किया गया। बहुत वर्षों के बाद लोगों के मुख से सन्ध्या पूजा का विधानादि जिस प्रकार सुना गया उस समय एक-एक कर यथायथ भाव से अपने से ही शरीर द्वारा हो गया था। शरीर ने मानो यन्त्र की भाँति चालित होकर एक विचित्र भाव से अनुष्ठान का समाधान किया था।

यह सब कार्यों के समाप्त होते होते दिन भी ढल गया था। आज दिन को भोजन नहीं हुआ। रात्रि भोजन की व्यवस्था करने गयी। रात को भोलानाथजी को खिलाकर शरीर पुनः स्थिर होकर बैठा। ख्याल हुआ दिन की क्रियायें अभी समाप्त नहीं हुई हैं। पहले की भाँति शारीरिक क्रियाओं के होने के बाद पूजा के आयोजनादि हो गये। नाना बीज तथा मन्त्रादि के साथ नाना प्रकार की देवताओं की पूजा हुई। बाद में सायं सन्ध्या समाप्त करने की क्रियादि हुई।

आहारादि करने पर देखा भोर होने में देर नहीं है । थोड़ी लेट गयी । उठ कर भोलानाथजी की सेवा की सब तैयारी कर प्रातः क्रिया के लिये जैसे बैठा जाता है वैसे ही बैठी । पहले की भाँति क्रियादि होकर सन्ध्या के बाद पूजादि हुए । एक का ही विविध रूप । अतः विविध भाव से विविध पूजा हुई ।

झूलन रात्रि से प्रारम्भ होकर बाद में कितनी मूर्ति लेकर कितने कितने रूपों का प्रकाश तथा देव-देवी के भी कितने भावों का प्रकाश हुआ उसकी कोई सीमा अन्त नहीं है । बाहर कभी देखा या सुना भी नहीं गया ऐसी भी अनेक मूर्तियाँ थीं ।

(क्रमशः)

●

- **सरल और शुद्ध भाव का अभ्यास आत्म-ज्ञान की प्रथम सीढ़ी है ।**
- **कर्त्तव्य में जड़ता असावधानता आने पर उसका प्रतिरोध करने का अभ्यास ही एकमात्र उपाय है ।**
- **'शरीर, मन और वाक्य के द्वारा त्रिविध सेवा होती है ।**
- **साधना मात्र ही विश्वास के अधीन होकर विश्वास की साधना ही प्रथम आवश्यक है ।**
- **जीवन्त आदर्श का मन पर जैसा असर पड़ता है वैसा शास्त्रोपदेशादि द्वारा नहीं पड़ता ।**

श्री श्री माँ को समय समय पर पूर्व जीवन के सम्बन्ध में प्रश्न करने पर अपने ख्याल से श्री श्री माँ के श्रीमुख से जो सुनने को मिला उसी का संकलन पू. भाई जी श्री ज्योतिषचन्द्र राय ने किया था । बाद में "मायेर कथा" अर्थात् "माँ की बातें" नाम से यह पुस्तक भाई जी के नाम से बंगला में प्रकाशित हुई है । उसी से श्री श्री माँ की दीक्षा के सम्बन्ध में माँ की ही वाणी को पाठकों के लिये हिन्दी रूपान्तर कर यहाँ प्रस्तुत किया गया है ।

सोलन में सत्संग के कुछ अंश

—आत्मानन्द की डायरी से

एक विश्वविद्यालय के युवा स्नातक ने श्री श्री माँ से प्रश्न किया–"साधु लोग एक विशेष पहरावा क्यों पहनते हैं, जटा बनाते हैं, लम्बी दाढ़ी रखते हैं, इन सबके साथ आध्यात्मिकता का क्या सम्बन्ध है ?

माँ – तुम क्यों अपने बालों में तेल लगाते हो ? शीशे के सामने जाते हो ? तुम बढ़िया कुर्ता-पजामा क्यों पहनते हो ? तुम किसको खुश करना चाहते हो । कौन तुम्हारा इतना अपना है जो तुम्हारी इस उपस्थिति से प्रभावित होगा । तुम सोचते हो लोग क्या कहेंगे ? तुम वास्तव में व्यक्ति के मतामत से भयभीत हो । तुम एक भद्रपुरुष के न्याय पेश आना चाहते हो । तुम स्वयं अच्छी वेशभूषा वालों से प्रभावित होते हो । अतः स्वयं के लिये भी तुम ऐसा ही चाहते हो । "मैं भी इसी ढंग की वेशभूषा करूँगा ।" इन सबसे कौन सा लाभ तुम्हें प्राप्त होता है ।

युवा स्नातक– साफ सुथरा दीखने में सार्थकता का अनुभव होता है ।

माँ– ठीक है, यह तुम्हें प्रसन्नता देती है । पर यह सार्थकता तुम्हें किस ओर ले जाती है ? क्या तुम बता सकते हो ?

युवा स्नातक – यह कहना तो मुश्किल है ।

माँ – तुम्हें इसका उत्तर नहीं मिलेगा । यह सब वेशभूषा अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये होती है । एक सच्चा साधक अपने को जानने के लिये व्यस्त रहता है । वह उस परमात्मा का दर्शन पाने को व्याकुल रहता है । उसे अपने वस्त्रों की ओर देखने का, नाखून काटने का, दाढ़ी बनाने का अवसर नहीं रहता । उसकी सारी शक्ति उसकी साधना में लगती है अतः जैसे तैसे दीखे वह चलता जाता है । वह सोचता है, मैं अच्छी वेश-भूषा बनाकर किसे प्रसन्न करूँगा । साधु अपने को जानने के लिए निकला है । अतः अपनी व्यक्तिगत उपस्थिति के लिये वह समय नहीं दे सकता ।

प्राचीन ऋषिगण बालों की जटायें एवं लम्बी दाढ़ी रखते थे । यद्यपि ग्रीष्म काल में ये अत्यन्त कष्टदायक होते थे । वे इस असुविधा की ओर ध्यान नहीं देते थे । यह ऋषियों का चिन्ह स्वरूप था । यह सर्वविदित था कि व्यक्ति का बाहरी स्वरूप उसके आत्मानुभव के प्रति प्रेरित करता है । क्या अभी भी तुम्हें प्रश्न के प्रति सन्देह है ?

युवा स्नातक – क्या संन्यासी का विशेष पहरावा उसकी साधना में सहायक होता है ।

माँ – तुम अपनी प्रसन्नता के लिये सुनदर वेशभूषा करते हो । इसलिये नहीं कि यह तुम्हें भगवान् के पास ले जायगी । सच्चा साधक भगवत् कृपा के लिये उन्मुख रहता है । यह सत्य है कि

सभी साधु यथार्थ नहीं होते । कुछ "बाबू साधु" भी होते हैं । यद्यपि वे पहिरावा ले लेते हैं पर उनकी जागतिक बुद्धि रहती है ।

एक बार हमलोग मसूरी से आ रहे थे बस द्वारा । बस में हमारे साथ एक साधु भी थे। जिसका चेहरा भीतरी तेज से जगमगा रहा था । लोग उस पर बहुत प्रभावित हो रहे थे । बाद में वह गालों पर रंग लगाने के लिये पकड़ा गया ।

मैंने एक और साधु के बारे में भी सुना है । कहा जाता है जिसका चरणामृत बहुत मीठा होता था । एक डाक्टर को भी यह पता चला वह भी यह मीठा जल लेना चाहता था । लोगों को चरणामृत देने से पूर्व साधु अवश्य ही स्नान करते थे । पर उक्त डाक्टर ने अपने हाथों से उनके चरण धोये, पोंछे, एवं नाखून काटे फिर चरणामृत लेने का अनुष्ठान प्रारम्भ हुआ । परिणाम स्वरूप चरणामृत मीठा न लगा । असली बात यह थी कि साधु जब स्नान के लिये जाते थे तो "सेकरीन" अपने अँगूठे के नाखून के नीचे रख लेते थे । अनेक लोग जो इस प्रकार ठगाये जाते हैं– इस तरह के विविध प्रसंग सुनाते हैं ।

ऐसा कहा जाता है कि संन्यासी काषाय वस्त्र धारण करते हैं "अग्नि" के प्रतीक स्वरूप और जो मुण्डन आदि करते हैं वह इसी का निदर्शन है कि इस अग्नि में सब कुछ जला डाला यहाँ तक कि मस्तक का एक केश भी नहीं छोड़ा । यह जो बाहरी वेश है यह उसे निरन्तर अपने वास्तविक लक्ष्य को स्मरण कराने के लिये है । तुम यह कह सकते हो, कि व्यक्ति जो अभी सम्पूर्ण वासना रहित नहीं हुआ है, वह संन्यास कैसे लेता है ? "संन्यास लेना" एक तरीका है, पर बिना किसी प्रयास के भीतर से जो वैराग्य का भाव आता है वह दूसरी ही चीज है । संन्यास की रीति रिवाज से संन्यास ग्रहण करना एक प्रयास है, ताकि जो असली संन्यास है जो पूर्ण वैराग्य स्वरूप है वह भाव भीतर जाग उठे ।

* * *

जिज्ञासा – कहा जाता है कि जो खाया जाता है उसका प्रभाव मन पर पड़ता है । क्या यह सच है? मन और भोजन का क्या सम्बन्ध है?

माँ – अवश्य ही मन और भोजन का आन्तरिक सम्बन्ध है । श्री कृष्णानन्द अवधूत जी ने गत दिनों में इस प्रसंग पर कहा है । और तुम लोगों के शास्त्र भी तो इस सम्बन्ध विस्तृत विचार देते हैं । सात्विक भोजन सात्विक भावना को जागृत करने वाला होता है । राजसिक भोजन राजसिक भावनाओं को, इसी प्रकार आगे भी होता है । इसीलिए लोग अपने आहार में कुछ विशेष नियम रखते हैं । पर कोई व्यक्ति यदि साधना में व्रती हो तो स्वभावतः ही उसे कुछ विशेष प्रकार के आहार को त्याग करने की आवश्यकता महसूस होती है । वह अपने अनुभव से ही कुछ भोज्य पदार्थों को नापसन्द करने लगता है जो उसकी साधना में बाधक होते हैं । जैसे ज्वर का रोगी केवल मात्र जल की माँग करता है । वैसे साधक भी किसी

निर्दिष्ट लक्ष्य में लग जाता है तो उसे भी अपनी रुचि के अनुकूल आहार की आवश्यकता रहती है अन्य वस्तु उसके लिए स्वाद रहित हो जाती है ।

संयोगवश अनेक जन सात्विक आहार को स्वीकार करते हैं तथा धीरे-धीरे इसी के प्रति उनकी रुचि हो जाती है ।

जिज्ञासा – हम देखते हैं कि व्यक्ति भोजन के बिना नहीं रह सकते । हमने सुना है कि आप कभी-कभी न्यूनतम आहार पर रहती थीं, उदाहरण के लिए जैसे अन्न के तीन दाने तथा एक श्वास में जितना हो सके इत्यादि ।

माँ – एक बार मैं गाड़ी से यात्रा कर रही थी । गाड़ी में बहुत भीड़ थी, मैं एक महिला की गोद में बैठ गयी । ख्याल आया, यह शरीर उसके लिए भारी होगा, अतः शरीर पत्ते से भी हल्का हो गया । जब यह शरीर गाड़ी से बाहर आकर मैदान में बैठा तो स्वाभाविक वजन का हो गया । यह योग की क्रिया होती है । यह एक प्रकार है ।

दूसरी बात यह है– अन्न और फल की शक्ति उनके खाने से प्राप्त होती है । परन्तु सीधे ही यदि किसी में शक्ति का संचार हो जाये तो आहार की कोई आवश्यकता नहीं होती है । जहाँ सृष्टि, स्थिति एवं नाश यह तीनों वर्तमान हैं, वहाँ आहार का क्या प्रयोजन, कुछ नहीं ।

●

गुजरात में माँ की यादें

—ब्र. गुणीता

सौराष्ट्र का एक कोना है "गोंडल" जो कि आज विश्वभर में प्रसिद्ध है । इसकी प्रसिद्धि का कारण है "अक्षर मंदिर" अक्षर पुरुषोत्तम संस्था के विराट आन्दोलन के आदि पुरुष भगवान् स्वामि नारायण का यह मुख्य स्थान है । सौराष्ट्र की नगरी राजकोट से मात्र ४५ मील की दूरी पर है । गोंडल के महाराज भोजराज जी अपने पराक्रम, प्रजावत्सल्य, औदार्य, साहित्यानुराग आदि राजोचित गुणों के लिये आज भी प्रजाजन मानस में पूजनीय है । गोंडल के मुख्य दरबार महल के द्वार पर प्रस्तर फलक पर महाराज भोजराज जी के ये शब्द अंकित है गुजराती में–"मेरे जीवन का एक-एक क्षण तथा खून की एक-एक बूँद इस गोंडल राज्य की सेवा के लिए अर्पित है ।" महाराज भोजराज जी के समय की एक किंवदन्ती प्रचलित है - महाराज के राज्य में रात को पहरा लगाने वाला एक सेवक था । वह अत्यन्त भगवद्भक्त था, रात्रि के एकान्त वातावरण में वह भगवत् भजन में लीन रहता था । उससे यह कार्य संभव नहीं होता था । पर वह लाचार था । उसने कुछ उधार ले कर रखा था । भक्तों के अधीन दीनबन्धु दयाल प्रभु है । प्रभु ने आकर उसकी दरबार की नौकरी सँभाली तथा सात सौ सोने की अशरफी देकर उसे ऋण मुक्त किया । सुना जाता है आज भी यह दिव्य धन गोंडल राजकोष में रखा हुआ है ।

गोंडल इस दृष्टि से एक तीर्थस्थान है । सन् १९७५, मार्च ६ चक्रधर रानी लक्ष्मी देवी व शिवराज सिंहजी के आह्वान पर श्री श्री माँ गोंडल के हवामहल में पधारी, हवामहल के विराट् परिसर में रानीसाहिबा लक्ष्मीदेवी ने श्री श्री माँ के लिये दो मंजिला भवन तैयार करवाया था । माँ की उपस्थिति में शिवरात्रि का उत्सव यहाँ १९७५ में अनुष्ठित हुआ था । तदुपरान्त सन् १९७६ में इसी हवामहल के विराट् परिसर में २६ वाँ संयम सप्ताह अनुष्ठित हुआ था । जिसकी याद आज भी व्रतीगण किया करते हैं ।

सन् १९७८ में गोंडल महाराज श्री ज्योतिन्द्र सिंहजी व महारानी कुमुद बेन के आह्वान पर गोंडल के दरबार महल में विशेष समारोह सहित श्री श्री शारदीया दुर्गापूजा एवं कालीपूजा अन्नकूट आदि उत्सव अनुष्ठित हुए । आज भी दरबार महल के प्रांगण में श्री श्री माँ की यादगार के स्वरूप वह वेदिका जिस पर दुर्गापूजा हुई थी, तथा पूजा के अवसर पर निर्मित भोगगृह अक्षुण्ण अवस्था में विद्यमान हैं ।

श्री श्री माँ के लिये यहाँ भी एवं भव्य बंगला बनवाया गया था । आज भी वह बँगला माँ की पवित्र स्मृति को सँजोए हुए हैं । श्री श्री माँ के कक्ष में माँ का सुन्दर चित्र रखा हुआ है । जहाँ नित्यप्रति धूप दीपादी से माँ की आरती उतारी जाती है ।

× × ×

श्री श्री माँ के चरणों में अनन्य श्रद्धा भक्ति रखने वाली रानी साहिबा श्रीमती लक्ष्मी देवी का आकस्मिक देहावसान गतवर्ष दिनांक २१ अप्रैल १९९८ को हुआ। वर्षोपरान्त आपके परिवार जनों ने गोंडल में विराट भागवत सप्ताह का आयोजन किया। श्री श्री माँ के आश्रमवासी साधुसन्त तथा ब्रह्मचारिणियों पर लक्ष्मीजी अत्यन्त श्रद्धा व स्नेह रखती थी। अतः उनके इस अंतिम कार्य में आश्रमिक जन पधारें ऐसी अभिलाषा आपके परिवार जनों ने व्यक्त की। विशेषतः छोटे कुमार श्रीमान् उपेन्द्र सिंहजी ने अत्यन्त आग्रह सहित अपने पूज्य पिता श्री शिवराज सिंहजी तथा परिवारजनों की ओर से एक हृदय स्पर्शी पत्र लिखा आश्रम के मुख्य ब्रह्मचारी श्री पानुदा को। यद्यपि समय स्वल्प था श्री श्री माँ का जन्मोत्सव सम्मुखीन था। पर यह आमन्त्रण टालना भी सम्भव नहीं था। अतः कन्यापीठ की दो तीन ब्रह्मचारिणियों को लेकर वाराणसी से भोपाल होते हुए गोंडल की ओर रवाना हुए।

हमलोग भोपाल से २० अप्रैल को राजकोट पहुँचे। मार्ग में गर्मी का प्रभाव थोड़ा बहुत था। स्टेशन पर राजकोट के चिमनभाई गोंडल से दो गाड़ी लेकर उपस्थित थे। करीब दो बजे हमलोग राजकोट से रवाना होकर प्रायः तीन बजे हवामहल पहुँचे। वहाँ पर श्रीमान उपेन्द्रसिंहजी आगवानी के लिए प्रस्तुत थे। पू. स्वामी भास्करानन्द जी पहले ही पधार चुके थे। ब्रह्मचारिणी मैत्रेयी बहन भी पहले ही आ चुकी थीं। श्री श्री माँ के भवन में हमलोगों की रहने की व्यवस्था पहले से ही की गयी थी। आज श्रीमद्भागवत् का चौथा दिवस था। श्री कृष्ण जन्म होने वाला था। उसकी तैयारी में सब व्यस्त थे। बम्बई के युवा क्रान्तिकारी वक्ता श्री भूपेन्द्र भाई पंड्या कथा वाचक थे। सायं चार बजे कथा प्रारम्भ होने का समय था। तीन बज चुके थे यथाशीघ्र तैयार होकर कथा मण्डप में पहुँचने के लिए हमलोग तत्पर हो गये।

करीब ५ बजे हम कथा में पहुँचे। विशाल मण्डप था। प्रवेश द्वार सुसज्जित था दोनों ओर हरे-भरे गमलों की सजावट थी। स्थानीय जनता से मण्डप भरा हुआ था। सौराष्ट्र वासी अपने पारम्परिक वेश भूषा में अपने द्वारका धीश की जन्म कथा की प्रतीक्षा में थे। एक किनारे से होते हुए हम कथा मंच के सामने पहुँचे। श्रोताओं की पहली पंक्ति में उच्चासन की व्यवस्था थी जिस पर नीचे बैठने में असमर्थ मुख्य श्रोतागण बैठे थे। तदुपरान्त गद्दों की व्यवस्था थी। एक ओर महिला एवं एक ओर पुरुष वर्ग की बैठने की व्यवस्था की गयी थी। महिलाओं की प्रथम पंक्ति में रानी साहिबा की दोनों पुत्रवधुएँ तथा अन्यान्य राज परिवार की विशिष्ट महिलायें बैठती थीं। पुरुषों की प्रथम पंक्ति में, रानी साहिबा के दोनों पुत्र सपुत्रक बैठते थे। विशेषता यह थी कि श्रीयुत शिवराजसिंह जी अपने पुत्र एवं पौत्रों के सहित कथा सुनते थे। दिवंगत रानीसाहिबा लक्ष्मी देवी के सौभाग्य की सराहना जितनी भी की जाय वह अल्प ही होगी। शायद इस प्रकार एक साथ तीन पीढ़ी को भागवत् कथा का श्रवण करते कदाचित् ही देखा जाता है। ग्रीष्म की प्रखरता होने के कारण शीतयन्त्र (कूलर) थोड़ी-थोड़ी दूर पर लगे थे। हम लोगों को प्रथम पंक्ति में बैठाया गया।

मंच पर ब्राह्मणोचित वेशभूषा में तेजस्वी ब्राह्मण भूपेन्द्र भाई पंड्या भागवत कथा रसिकों को रसमयी कथा सुना रहे थे। विशाल मंच था व्यासासन के पीछे विशाल सूर्यमण्डल लाल वस्त्र द्वारा

बना हुआ था । श्रीमद्भागवत पर चँदोवा टँगा हुआ था । बीचों बीच एक रजत छत्र था । व्यासासन के दोनों ओर पाँच पाँच सुसज्जित खम्भे बनाये गये थे । व्यासासन की बायीं ओर श्री श्री माँ का सुसज्जित चित्र था, तथा दाहिनी ओर रानी साहिबा का प्रसन्न मुख का अत्यन्त सजीव चित्र शोभायमान था । ऐसा लग रहा था कि अपने प्रियजनों द्वारा किये गये इस भव्य आयोजन को वे अपने अनुभवी नेत्रों से देख रही हैं ।

सायं सन्ध्या होने वाली थी मंच पर विशेष आयोजन किया गया था । भगवान् श्री कृष्ण के जन्म प्रसंग के साथ ही तोपध्वनि की गयी, नाना प्रकार के वाद्य ध्वनि के साथ सौराष्ट्र की पारम्परिक प्रथा में वसुदेवजी द्वारा टोकरे में भगवान् को नंदालय ले जाने की कथा का अनुकरण करते हुये महाराज कुमार उपेन्द्रसिंहजी पीतवस्त्र में मस्तक पर बालगोपाल को लेकर मंच पर आये । साथ आपके पुत्र द्वय व्रज के गोपबालकों के वेश में थे । साथ ही व्रज के गोपो का अनुकरण करते हुये दही की मटकी तोड़ी गयी । व्रजवासियों की भाँति झूम-झूम कर सब कीर्तन करने लगे । मंच पर सब राजपरिवार ने भगवान् की आरती उतारी । इस प्रकार आनन्दोत्सव में नंदोत्सव की कथा का समापन हुआ ।

२१ अप्रैल को, हमलोग वीरपुर दर्शन करने गये । वीरपुर में श्री जालाराम बापा का प्रख्यात् मंदिर है, जहाँ प्रतिदिन हजारों व्यक्ति भोजन पाते हैं ।

प्रायः दोसौ वर्ष पूर्व वीरपुर गाँव में एक साधारण गृहस्थ थे जो सर्वदा राम राम रटा करते थे कोई उन्हें पागल कहते थे कोई कुछ, पर उन्होंने राम नाम रटना नहीं छोड़ा । गाँव में एक सेठ थे उन्होंने मजाक में उनसे कहा था, तेरे को लेने तो ऊपर से रथ आयेगा तब मुझे भी बुला लेना । सुना जाता है कि वास्तव में उनको लेने रथ आया था तब उन्हें सेठ की याद आयी वे रथ को लेकर सेठ के पास जाकर बोले, "चलिये रथ आ गया है, मैं जा रहा हूँ।" सेठजी ने सोचा किसी भक्त ने दिया होगा, इत्यादि, वे बोले, "मैं अभी नहीं जा सकता हूँ । समय नहीं है ।" बाद में सेठ जी को जब रथ की सत्य घटना मालूम हुई तो उन्हें अत्यन्त पश्चाताप हुआ ।

सर्वदा राम नाम जपने के कारण उनको लोग जालाराम बापा के नाम से जानने लगे । एक बार एक वृद्ध बापा के पास आये । उन्होंने अपनी वृद्धावस्था की असहाय अवस्था का वर्णन करते हुए बापा से किसी को उनकी सेवा में देने को कहा । बापा ने का, आपको जिसे चाहिये उसे ले जाइये । इस पर वृद्ध ने बापा की धर्म पत्नी को साथ कर देने कहा । पति के आदेश से पत्नी वृद्ध के साथ हो ली । गाँव की सीमा पर आकर वृद्ध स्त्री के हाथ में एक दण्ड तथा झोली देकर, स्वयं अंतर्हित हो गये । बहुत प्रतीक्षा के बाद भी जब वृद्ध का पता न लगा साँझ हो आयीं, तब वे गाय चराने वाले गड़ेरियों की सहायता से लौट आयीं ।

झोली को खोल कर आज भी किसी ने नहीं देखा कि उसमें क्या है । पर उसदिन से आपके यहाँ अभाव कभी नहीं हुआ । लोग आते गये भोजन पाते गये । हमारे साथ पूज्य स्वामी श्री भास्करानन्द जी थे । उन्होंने हमें घूम घूम कर पुराना भोजनागार दिखाया । वहां पानी के ताँबे के तीन घड़े रखे है । कहावत है यहां गंगा यमुना सरस्वती तीनों देवियाँ जल रूप में प्रकट होती है ।

क्योंकि प्रातः काल घड़े एक बार जल पूर्ण कर दिये जाते हैं फिर कितने भी लोग पानी क्यों न पीयें पर घड़े खाली नहीं होते । हमने वह विशालचक्की भी देखी जहाँ किसी समय बैल द्वारा चक्की चलायी जाती थी । आज यद्यपि विद्युत की चक्की की सुविधा है जहां प्रति दिन क्वीन्टल के हिसाब से आटा पीसा जाता है । तथा खर्च भी हो जाता है । हमने देखा विशाल कढ़ाहे में बेसन का नमकीन बन रहा है । इतना बड़ा भण्डार चल रहा है पर चारों ओर सफाई एवं शान्ति है ।

एक मंदिर श्रीराम दरबार है । यहीं पर एक शीशे की अलमारी में सर्वजन दर्शन हेतु वह दैवी दण्ड तथा झोला रखा हुआ है । पास ही एक और गर्भगृह में जाला राम बापा का विशाल तैल चित्र एवं पादुका रखी हुई है । भक्तों का आना जाना लगा हुआ है । मंदिर के मार्ग में यथावत् विविध सामग्रियों से भरी दुकानें लगी हुई हैं । हमने कुछ स्थानीय सामग्री खरीदी । स्थान माहात्म्य से हम प्रभावित हुए एक आनन्द का अनुभव हुआ यह राम नाम की महिमा का चमत्कार था । माँ की वाणी स्मरण हो आयी- "जहां राम वहाँ आराम जहाँ नहीं राम वहाँ बे-आराम ।"

बीरपुर से आकर हम कथा में बैठे प्रातः दसबजे से कथा प्रारम्भ होती थी । कथावाचक भूपेन्द्र भाई की कथा में एक मौलिकता थी । माखनचोरी प्रसंग का वर्णन करते हुये आपने कहा, "भगवान् की यह चोरी नहीं थी यह तो एक आर्थिक क्रांति थी । भगवान् श्री कृष्ण के सखा-सुदामा आदि दुबले-पतले थे, कन्हैया ने उनसे पूछा तुम इतने दुबले पतले क्यों हो ? सखाओं ने कहा, हम तुम्हारे जैसे दही माखन थोड़े ही खाते हैं । कन्हैया की जिज्ञासा थी क्या तुम्हारी गैया नहीं हैं । सखा बोले - है तो, पर सारा दही, माखन तो मथुरा जाता है । नंदनंदन को सूझ सूझी यह बन्द करना पड़ेगा । घर को भूखा रख कर बाहर वालों को देना यह कैसी प्रथा । कन्हैया ने गोप सखाओं के साथ घर-घर घुस कर माखन चोरी प्रारम्भ की । सखाओं को खिलाते बन्दरों को लुटाते खुद खाते, बाद में मटकी फोड़ते । गोपियाँ परेशान थीं । उन्होंने कन्हैया से इस बरबादी का कारण पूछा, कान्हा ने कहा, घर को भूखा रख के बाहर का पेट क्यों भरना ? गोपियों ने अपनी आर्थिक दुर्बलता जाहिर की । श्री कृष्ण ने कहा, तुम गोओं की प्रेम से सेवा करो । घुमाओ फिराओ । गाय चराने कौन जाये । भगवान् ने गोपाल वेश स्वीकार किया, केवल खुद नहीं हम उम्र के सभी बालक गोपाल बने पूरी व्रज की गौएं हरी-भरी घास चरने लगी । गौओं का दूध बढ़ा घर में भी माखन आया बाहर भी जाने लगा । व्रज में आर्थिक क्रान्ति आयी । उन्होंने कहा यह एक्सपोर्ट की प्रथा आधुनिक नहीं प्राचीन है ।"

[क्रमशः]

आश्रम - संवाद

१) वाराणसी :-

वाराणसी आश्रम में २२ मार्च से २५ मार्च पर्यन्त श्री श्री वासन्ती पूजा यथारीति मनायी गई। २२ मार्च षष्ठी के दिन सायंकाल देवी का बोधन एवं वरण हुआ २३ मार्च को महासप्तमी पूजा हुई। एक तिथि कम होने के कारण अष्टमी तथा नवमी की पूजा एक दिन में ही हुई। २४ ता. को प्रातः ५ बजे अष्टमी की पूजा एवं ६ बजे सन्धिपूजा तथा महानवमी के पूजा के पश्चात १२ बजे रामनवमी की पूजा हुई। मध्यान्ह में भोग हुआ। इसी दिन अन्नपूर्णा पूजा के उपलक्ष में आश्रम की अधिष्ठात्री देवी अन्नपूर्णा की विशेष पूजा हुई। २५ ता. को दशमी की पूजा हुई।

इस सुअवसर पर बंगाल के विदग्ध पंडित डॉ. गोविन्दगोपाल मुखोपाध्याय का सप्तशती पर सारगर्भित व्याख्यान सबसे आनन्ददायक था। उन्होंने सप्तशती के अन्तर्गत देवी के चार स्तव की व्याख्या की उनके मुखनिसृत सुललित प्रवचन को श्रवण करके सबलोग धन्य हुए।

दशमी के दिन विजया मिलन के पश्चात उत्सव की समाप्ति हुई।

विगत १४ अप्रैल को दीदीमा का संन्यास उत्सव एवं २३ अप्रैल को बाबा भोलानाथ का उत्सव अनुष्ठित हुआ।

तीन एवं चार मई को श्री श्री माँ का १०३ तम शुभ जन्म जयन्ती महोत्सव हुआ। इस अवसर पर 'आनन्दज्योर्तिमंदिर' को मालाओं एवं वंदनवारों से सुसज्जित कर श्री श्री माँ की मूर्ति पर विशेष पूजा की गई। पूजा के पश्चात होम एवं कुमारी पूजा हुई। दूसरे दिन १०८ फलों, मिठाइयों, एवं व्यंजनों से श्री श्री माँ का भोग हुआ। आरती के पश्चात सब भक्तों ने प्रसाद पाया।

२) कनखल :-

श्री श्री माँ के कनखल आश्रम में गिरिजी के मंदिर में गिरिजी के संन्यास उत्सव के उपलक्ष में १४ अप्रैल को गिरिजी का विशेष पूजन हुआ। साधु भंडारा भी हुआ। २३ अप्रैल को बाबा भोलानाथ का उत्सव भी यथारीति मनाया गया।

२९ अप्रैल से ५ मई पर्यन्त श्री श्री माँ का १०३ तम शुभ जन्म महोत्सव समारोह के साथ अनुष्ठित हुआ।

इस बार स्वल्प दिवसीय कार्यक्रम होने पर भी प्रतिवर्ष की भाँति १०८ कुमारी पूजा, शतचण्डी पाठ, रुद्र यज्ञ, साधु भंडारा, आदि का यथावत् पालन हुआ। इस अवसर पर कई विशिष्ट सन्त महात्माओं के आगमन से तथा उनके प्रवचन से उत्सव साफल्यमंडित हो उठा। तिथि उपरान्त उत्सव की समाप्ति हुई।

३) आगरपाड़ा :–

१४ अप्रैल को आगरपाड़ा आश्रम में दीदीमा का संन्यास उत्सव, तथा २३ अप्रैल को बाबा भोलानाथ का उत्सव अनुष्ठित हुआ।

तीन तथा चार मई को श्री श्री माँ का जन्मोत्सव हुआ। इस उपलक्ष में ३ मई को उदयास्त हरिनाम संकीर्तन, भजन, मातृगीति आलेख्य, वी.डि.ओ. प्रदर्शन, समवेत मातृनाम गान आदि हुए जन्मतिथि के शुभ मुहूर्त में श्री श्री माँ की विशेष पूजा भोग आरती, पुष्पांजलि के पश्चात फल प्रसाद वितरण किया गया।

चार मई को मातृपूजा, सत्संग भजन चण्डीपाठ के उपरान्त भोग, आरती तथा प्रसाद वितरण किया गया। कुमारी पूजा वटुक पूजा, दरिद्र नारायण सेवा, अस्पताल में रोगियों को प्रसाद वितरण भी इसमें उल्लेखनीय है।

४) राँची :–

१४ अप्रैल, राँची आश्रम में दीदीमा का संन्यास उत्सव धूमधाम से मनाया गया।

३ मई को श्री श्री माँ का १०३ तम जन्मोत्सव अनुष्ठित हुआ। इस उपलक्ष में अखंड जप, भजन कीर्तन, श्री श्री माँ की विशेष पूजा, कुमारी पूजा होम एवं पुष्पांजलि हुई।

चार मई को गीता चण्डीपाठ, सत्संग, कीर्त्तन प्रवचन, भोग आरती के बाद प्रसाद वितरण किया गया।

५) डिब्रूगड़ :–

श्री श्री माँ का १०३ तम शुभ जन्मोत्सव गत ३ मई सोमवार तथा चार मई मंगलवार को श्री श्री माँ के डिब्रूगड़ आश्रम में अनुष्ठित हुआ। इस अवसर पर ३ मई सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त अखंड मौन, जप, जन्मतिथि पर श्री श्री माँ की विशेष पूजा एवं होम संपन्न हुए।

दूसरे दिन पूजा तथा भोग आरती के पश्चात प्रसाद वितरण कयिा गया। श्री श्री माँ के वी.डि.ओ. कैसेट के माध्यम से मातृलीला भी प्रदर्शित की गई।

६) पूना :–

पूना आश्रम में भी श्री श्री माँ का १०३ जन्मोत्सव भलीभाँति सुसंपन्न हुआ। इस उपलक्ष में भजन, कीर्तन, वि.डि.ओ कैसेट में मातृलीली प्रदर्शन, श्री श्री माँ की विशेष तिथिपूजा, होम एवं पुष्पांजलि हुई।

चार मई को भोग आरती के बाद प्रसाद वितरण किया गया।

७) भोपाल :–

भोपाल में श्री श्री माँ के आश्रम में ३ तथा चार मई को श्री श्री माँ का शुभ जन्मोत्सव अनुष्ठित हुआ। इस् उपलक्ष में १०८ कुमारी पूजा, दरिद्र नारायण सेवा श्री श्री माँ की विशेष तिथि पूजा सुसंपन्न हुई।

शोक-संवाद

१) स्वामी धीरानन्द सरस्वती –

५ जनवरी सन् १९९९ को गोरखपुर में स्वामी धीरानन्द जी का देहावसान हुआ। स्वामी धीरानन्द जी आश्रम के प्राचीन संन्यासियों में एक थे श्री श्री मां के आदेश से आपने वृन्दावन के भागवत सम्राट श्री श्री १०८ अखंडानन्द सरस्वती जी से संन्यास मंत्र की दीक्षा ली थी।

कई साल आप काशी एवं वृन्दावन आश्रम की परिचालना की सेवा में नियुक्त थे। आपके सहज सरल निष्कपट व्यवहार से सब संतुष्ट थे। आपके प्रयाण से एक स्थान रिक्त हो गया। सत्य-शिव-सुन्दर आत्मस्वरूप मे आपकी आत्मा निरन्तर लीन हो यही श्री श्री माँ के चरणों में प्रार्थना है।

२) स्वामी आशीषानन्द गिरि –

स्वामी मुक्तानन्द गिरिजी (दीदी मा) के अति प्राचीन शिष्य एवं श्री श्री माँ के एकनिष्ठ-भक्त, गुजरात निवासी, स्वामी आशीषानन्दजी का महाप्रयाण फरवरी महीने के द्वितीय सप्ताह में दिल्ली के कालकाजी स्थित आश्रम में हुआ।

आप बहुत दिनों तक श्री श्री माँ के कनखल आंश्रम में थे। जिस तरह से भी हो सके आश्रम की सेवा करना आपका मुख्य उद्देश्य था।

आपकी इच्छा यही रहती थी कि सबसे बढ़िया फल एवं सब्जियाँ श्री श्री माँ की पूजा एवं भोग में समर्पित कर सकें। अतः आप स्वतः जाकर हरिद्वार बजार से गाड़ी भर कर फल एवं सब्जियाँ लाकर उपस्थित करते थे, उनकी सेवा अतुलनीय थी। पिछले वर्ष भी पूर्ण कुंभ के समय आपने विशिष्ट संत-महात्माओं एवं साधुओं की सेवा के लिए जो सुव्यवस्था तथा सहायता की थी वह आज भी आश्रमवासियों के मन में जाग्रत है।

समुद्र तट पर स्थित पोरबंदर शहर में श्री श्री माँ को ले जाकर जो आपने विशाल अभ्यर्थना तथा उत्सव का आजोन किया था वह भी अवर्णनीय था।

प्रति संयम सप्ताह में हम उनको महात्माओं के संग मंच पर समासीन देखते थे कभी-कभी श्री श्री की बातें तथा अपने व्यक्तिगत अनुभव भक्तों को आप सुनाते थे।

आज उनके महाप्रयाण से उनके उद्देश्य में हम उन्हें श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं।

३) डॉ. सुरेश सेठ (बम्बई) –

डॉ. सुराभाई सेठ ६ अप्रैल बम्बई स्थित अपने आवास भवन में श्री श्री माँ के शान्तिमय गोद में चिरनिद्रा में लीन हुए। इस समय आपकी अवस्था प्रायः ८६ वर्ष की थी।

दक्षिण बम्बई के अन्यतम 'नानावती अस्पताल' के आप प्रधान चिकित्सक तथा विशिष्ट संचालक के रूप में विख्यात थे । कठिन से कठिन रोग के निर्णय में आप सिद्धहस्त थे । आपकी कीर्ति देश भर में फैली थी । श्री श्री माँ के भी आप विशेष कृपापात्र थे । निःस्वार्थ भाव से आपने जिस तरह आश्रमवासियों की सेवा की थी उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता । श्री गुरुप्रिया दीदी की चिकित्सा भी आपने दीर्घदिन तक बड़ी लगन से की थी । आश्रम की अनेक ब्रह्मचारी एवं ब्रह्मचारिणियों की चिकित्सा भी आपने आनन्द से की है । आपका नाम सदा ही आश्रमवासियों के हृदय स्वर्णाक्षरों से अंकित रहेगा ।

श्री श्री माँ के चरण-कमलों में जैसी आपकी अविचल भक्ति थी । आपकी दिवंगत आत्मा श्री श्री माँ के चरणों में समाहित हो यही प्रार्थना ।

४) श्रीमती शान्तिदेवी –

परमश्रद्धेया श्री गुरुप्रिया दीदी की सबसे छोटी बहन श्रीमती शान्ति देवी, २२ अप्रैल के प्रातःकाल विन्ध्याचल में श्री श्री माँ के चरणों में विलीन हुईं ।

आप आश्रम में 'बेलुदी' नाम से ही परिचित थीं । आप प्रायः साठ वर्षों से श्री श्री माँ के निर्देश से विन्ध्याचल के शान्त एकान्त वातावरण में साधन-भजन में रत थीं । सुदीर्घ दिनों तक आपने विन्ध्याचल आश्रम के 'तरुकुटीर' में एकान्त वास किया ।

बाद में आश्रम के नीचे एक सुन्दर कुटिया का निर्माण कर उसी में जीवन के अन्तिम दिन तक थीं । उस घर का नाम 'शान्ति आश्रम' है ।

आप बड़ी साहसी महिला थीं । आप रात को भी विन्ध्याचल के पर्वत पर अकेली निडर होकर जाती थीं । एक बार आपने विन्ध्याचल पहाड़ में श्री श्री माँ, को वनदेवी के रूप में दर्शन किया । बाद में काशी आश्रम में आकर आपने श्री श्री माँ को उसी रूप में सजाकर माँ की पूजा की थी ।

कुछ सालों तक आप हृदय-रोग से आक्रान्त थीं । आश्रम के पुरातन माली के परिवार वाले ही आपकी देखभाल करते थे ।

श्री श्री माँ के चरणों में आपकी आत्मा की चिरशान्ति के प्रार्थना लिए है ।

●

नवीन प्रकाशन

ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया—एक सचित्र जीवनी

आदरणीया गुरुप्रिया दीदी की जन्मशताब्दी के अवसर पर प्रकाशित यह एक उच्चकोटि का प्रकाशन है। अनेक दुर्लभ चित्रों से युक्त यह गुरुप्रिया दीदी की सचित्र जीवनी विशेष रूप से प्रकाशित हुई है। आर्ट पेपर में प्रकाशित विशिष्ट चित्रों की संख्या १२४ है। साथ ही प्रबुद्ध साहित्यिक हिन्दी भाषा में गुरुप्रिया दीदी की जीवनी भी लिखी गई है। इस पुस्तक के प्रकाशन से दीदी गुरुप्रिया की जीवनी, माँ के साथ उनका प्रथम साक्षात्कार, श्री श्री माँ के चरणों में पूर्ण समर्पण, उनके प्रति माँ की अपरम्पार करुणा का वर्षण तथा उनकी महिमामय जीवनशैली का सचित्र परिचय उपलब्ध होता है। यह पुस्तक पाठकों के लिगे प्रेरणास्रोत होगा। यह कृति माँ के भक्तों को परितोष दे सकेगी। यह मातृ भक्ति रूपी स्नेह से प्लावित गुरुप्रिया रूपी वर्त्तिका को आलोकित करता हुआ एक उज्ज्वल दीप स्वरूप है। मातृ भक्तों को केवलमात्र १00/- रु. मूल्य पर यह पुस्तक उपलब्ध करायी जा रही है।

"संसार के झंझटों तथा बाधाओं के बीच बराबर उन्हें स्मरण करो । उन्हें कभी मत भूलना ।"

–माँ आनन्दमयी

मातृ श्री चरण-कमलों में
कोटि कोटि साष्टांग प्रणाम

—M.P. Murarka
BOMBAY

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6840365)

16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 327835)

17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.

18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)

19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)

20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.

21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.

22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)

23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307, (Tel: 05442–64343)

24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)

2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.

माँ आनन्दमयी

अमृत वार्ता

VOL. 3 OCTOBER 1999 NO. 4

SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA

❄ Branch Ashrams ❄

1. AGARPARA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P. O. Kamarhaiti, Calcutta-700058 (Tel : 5531208)
2. AGARTALA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Palace Compound, P.O. Agartala-799001. West Tripura
3. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Patal Devi, P.O. Almora-263602, U.P. (Tel : 23313)
4. ALMORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Dhaul-China, Almora-263881, U.P.
5. BHIMPURA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Bhimpura, P.O. Chandod, Baroda-391105, (Tel : 33208)
6. BHOPAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Bairagarh, Bhopal-462030, M.P. (Tel : 521227)
7. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kishenpur, P.O. Rajpur, Dehradun-248009 U.P. (Phone: 684271)
8. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Kalyanvan, 176, Rajpur Road, P.O. Rajpur, Dehradun-248009, U.P.
9. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O. Raipur Ordnance Factory, Dehradun-248010
10. DEHRADUN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, 47/A Jakhan, P.O. Rajpur, Dehradun, U.P.
11. JAMSHEDPUR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Bhatia Park, Kadma, Jamshedpur-831005, Bihar
12. KANKHAL : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, P.O.Kankhal, Hardwar-249408, U.P. (Tel: 416575)
13. KEDARNATH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Near Himlok, P.O. Kedarnath, Chamoli-246445, U.P.
14. NAIMISHARANYA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Puran Mandir, P.O. Naimisharanya, Sitapur-261402, U.P.

माँ आनन्दमयी

अमृतवार्ता

श्रीश्री माँ आनन्दमयी के दिव्यजीवन
तथा
दिव्यवाणी की वाहिका त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष–३ अक्टूबर, १९९९ सं.–४

✤

वार्षिक चंदा (डाकव्यय सहित)

भारत में – ६0 रुपये
विदेशों में – १२ डॉलर/या ४५0 रुपये
एक प्रति – २0/- रुपये

साधारण नियम

यह त्रैमासिक पत्रिका चार पृथक भाषा–हिन्दी, बंगला, गुजराती तथा अंग्रेजी में जनवरी अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होती है। वर्ष का प्रारम्भ जनवरी से होता है।

पत्रिका में मुख्यतया श्री श्री माँ पर आधारित लेखों को ही प्रधानता दी जाती है। इनके अतिरिक्त आध्यात्म पर आधारित हृदयस्पर्शी लेख, किसी भी देश तथा किसी भी सम्प्रदाय या धर्म के महापुरुषों की उपदेशात्मक शिक्षावलियों का भी पत्रिका में स्वागत है।

जो भक्तगण माँ के सम्पर्क में आये हैं वे एकान्त व्यक्तिगत अनुभवों को छोड़कर ऐसे अनुभवों को आकलित कर सकते है जो कि श्री श्री माँ के लौकिक व्यवहार के प्रति आलोकपात करने वाले हों।

सभी लेख फुलस्केप कागज के एक पृष्ठ पर टंकित या स्पष्ट लिखित होने चाहिये। लेखों की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें। मनोनीत न होने पर लेखों को वापस भेजना कार्यालय के लिए असुविधाजनक है। सभी लेख सम्पादक के नाम भेजें।

अग्रिम वार्षिक चंदा मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम के "Shree Shree Anandamayee Sangha—Publication A/C".नाम पर भेजें।

पत्रिका सम्बन्धी सभी प्रकार के पत्रादि व्यवहार तथा वार्षिक चंदा भेजने का पता :

कार्यकारी सम्पादक, "माँ आनन्दमयी - अमृतवार्ता"
माता आनन्दमयी आश्रम
भदैनी, वाराणसी -२२१००१

पत्रिका में विज्ञापन देने का नियम :–

सम्पूर्ण पृष्ठ – २०००/- पूरे वर्ष के लिये
आधा पृष्ठ – १०००/- पूरे वर्ष के लिये

अग्रिम शुल्क के साथ विज्ञापन का विषय (Matter) उपर लिखित पते पर भेजें।

स्वामी श्री श्री आनन्दमयी संघ की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक श्री पानु ब्रह्मचारी द्वारा श्री श्री आनन्दमयी संघ, भदैनी, वाराणसी–२२१००१ (उ. प्र.) से प्रकाशित तथा रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स, बी. २१/४२ कमच्छा, वाराणसी-१० (उ. प्र.) से मुद्रित। सम्पादक–श्री पानु ब्रह्मचारी।

विषय-सूची

विशेष सूचना

सभी ग्राहकों को विशेष रूप से सूचित किया जा रहा है कि वर्तमान संख्या ही १९९९ ई. की अंतिम संख्या है । अतः जिन्होंने आगामी वर्ष के लिए अग्रिम चंदा नहीं भेजा है, उनसे अनुरोध किया जाता है कि वे २००० ई. का चंदा १५ दिसम्बर के भीतर मनी आर्डर या बैंक ड्राफ्ट के माध्यम निम्नलिखित नाम से अवश्य भेजें । चेक भेजने से बैंक में जमा होने में विशेष बिलम्ब होता है एवं २०/- की हानि भी होती है ।

वार्षिक चंदा इस नाम से भेजें –

—SHREE SHREE ANANDAMAYEE SANGHA— PUBLICATION A/C"

श्री पानु ब्रह्मचारी
कार्यकारी संपादक

१ अक्टूबर, १९९९
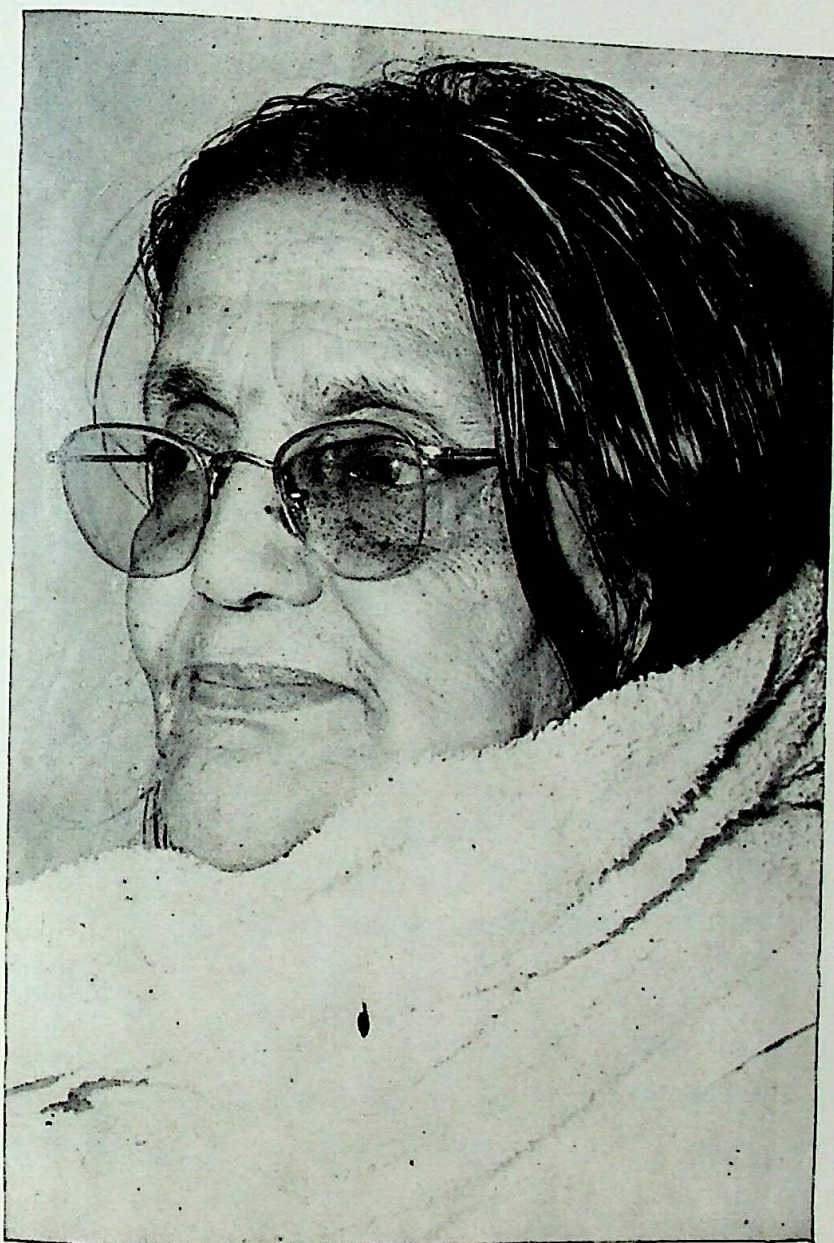
मातृवाणी

जगत् भावमय है सृष्टि की सभी वस्तुएँ भावों का प्रतिरूप हैं। भावों के द्वारा यदि स्वयम् को जाग्रत् और उन्नत कर सकते हो तो देखोगे कि ब्रह्माण्ड में सब जगह एक प्रकार की लीला हो रही है। भाव के अभाव ही में मनुष्य इधर उधर कुछ खोजता है, और यथार्थ तत्त्व नहीं जान पाता है।

* * *

प्रार्थना, साधना का विशेष अङ्ग है। प्रार्थना की शक्ति अमोघ है, एवम् प्रार्थना ही में जीव और जगत् की स्थिति है। जब जो मन में आये 'उन्हें' बताओ तथा सरल और व्याकुल हो उनके प्रति शरणागति प्रार्थना करो।

* * *

जन्मान्तर सत्य है। आँखों में मोतियाबिन्द होने पर जब उसे काट दिया जाये तो जिस प्रकार देखने की शक्ति फिर से लौट आती है उसी प्रकार ध्यान योग से विशुद्ध बुद्धि स्वरूप में अवस्थिति करने पर मंत्र और देवतत्त्व का विकास होता है, पूर्वजन्म के संस्कार चित्त में उतर आते है। जिस प्रकार ढाका में बैठे हुए कलकत्ते की धारणा कर सकते हो, उससे भी स्पष्ट रूप में पूर्व-जन्म का चित्र अन्तर्तल पर प्रतिबिम्बित हो सकता है।

* * *

चिर बन्धु है चिर दोस्त है, उनका संग करो, अच्छी पढ़ाई करना, जब तक पढ़ो अपना काम करो, भगवान् की चिन्ता जितनी होती है उससे duty कम हो जायेगी यह बात नहीं– स्थिति ऐसी आ जाये-अपने को पाने की कोशिश। दुनिया तो बेकार है ना, बेकार नहीं समझना, (अपने को) सेवक समझना।

* * *

सत संग--सत्यव्रत-नाम करने से शक्ति बढ़ जाती है। हर वक्त नाम कहते चलो। नाम क्रिया लो, जैसे चुप चाप जप करें यह स्मरण होना चाहिये।

* * *

नाम करने का अभ्यास होना चाहिये। अभ्यास-इच्छा अनिच्छा से भी करना है। दो टाईम ध्यान करना। आगे बढ़ने की कोशिश करें। जब तक जाग्रत रहो भगवान् के नाम के बिना न रहो। इच्छा-अनिच्छा से भगवान का नाम करना ही है यह लक्ष्य रहे। पहिले अपने को पाने की कोशिश हर वक्त करना।

* * *

नाता माने सम्बन्ध, जब तक सम्बन्ध रहता है, समझाने से समझते नहीं । समझ ना समझ के ऊपर जाना । एक बोझ उतार लिया और दूसरा बोझा । बोझ अबोझ के पार चले-तव जो चीज तुम चाहते हो उसी में तुम्हारा बन्धन है ।

* * *

खाना माने खोना । जो तुम भरोगे वही खो जाता है । जो खाता है वही खो जाता है । जैसा खाये अन्न वैसा बने मन ।

* * *

मस्ताना–जो अपना सुन्दर राम का घर । अपना घर जहाँ राम नाम का धन है वही धनी है ।

* * *

रुपया पैसा थोड़ा ही रहता है । चला जाता है । उपाधि की उपासना करोगे तो उपाधि मिलती है । जहाँ निरुपाधि की उपासना है कर लो । तो जो सत्य है स्वयं प्रकाश मिलता है । एकदम मुक्ति-मुक्ति । जब तक **मैं** रहता है तव तक नहीं होगा । अनुराग अच्छा है पिताजी, आत्ममय ध्यान ।

* * *

कर्म से कर्म क्षय होता है । प्रारब्ध भोगना पड़ेगा । भगवान् के राज्य में चमत्कार । भगवान् के चरण में साधन करते करते -मोह माया बन्धन से मुक्त होने पर जैसे (स्वीच) वटन वन्द करने पर भी पंखा घूमता है उसी प्रकार तुम्हारा कर्म चलता है, पर तुम उस कर्म के साथ युक्त नहीं हो । तुम अनन्त के साथ युक्त हो ।

* * *

इष्ट शरण करो । इष्ट माने जहाँ अनिष्ट का सवाल नहीं । इष्ट अनिष्ट में जो वन्धन होता है, जो इष्ट है उसी लक्ष्य में चलो । अनिष्ट का त्याग करो, तुम्हारा इष्ट कोई अलग है नहीं । जव तक इष्ट ना मिले गुरु की बात लेकर अपने को अर्पण करने के लिये कोशिश करो ।

श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंग

–स्व. श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त

१४ फाल्गुन, बुधवार, २७-२-५२

आज श्रीरामकृष्ण देव के जन्मोत्सव के उपलक्ष में यहाँ के मिशन से माताजी को निमन्त्रित किया गया था। प्रायः साढ़े दस बजे माताजी मिशन गयीं। हमलोग भी साथ गये। जाकर देखा कि दो मंजिल के एक कमरे में पृथक् पृथक् आसन के ऊपर श्री रामकृष्ण देव, शारदा देवी तथा स्वामी विवेकानन्दजी के चित्र फूल से सजा कर रखे गये थे। संन्यासी लोग यहाँ पूजा कर रहे थे। बरामदे में यज्ञ का आयोजन भी हो रहा था। श्री श्री माँ प्रायः एक घन्टे वहाँ थीं। वहाँ से आते समय मां चित्रों को स्पर्श कर आयीं। किसी ने माता जी को स्पर्श करने को कहा ऐसी बात नहीं है, पर देखा माँ अपने से ही हँसते हँसते जाकर उनको स्पर्श कर आयीं। साधुओं ने हम लोगों को प्रसादी फल दिये।

शाम को करणपुर के किसी भक्त के घर पर माता जी को ले जाया गया। माताजी ने हमलोगों को साथ चलने को कहा। वहाँ भी कीर्तनादि हुए माताजी को भोग लगाया गया। जब आश्रम लौटे तब सन्ध्या हो आयी थी।

सन्ध्या कीर्तन में एक ५-६ साल का नेपाली बालक उपस्थित था। वह अपनी माँ के साथ यहाँ आया था। कीर्तन के समय देखा गया, उसका शरीर स्थिर हो गया है, ध्यानस्थ भाव। माताजी ने उसके गले में एक माला पहना दी, प्रायः घन्टे भर वह एकासन में स्थिर भाव से बैठा रहा। बालक की माँ ने बताया पिछले १०-१५ दिनों से ऐसा उसे हो रहा है, १०-१५ दिन पूर्व उनके घर में एक पूजा हुई थी उस दिन बालक ने एक स्त्री मूर्ति का दर्शन किया था, उक्त मूर्त्ति के चार हाथ थे, केश लम्बे थे तथा लाल रंग की साड़ी पहिनी हुई थीं। देवी के एक हाथ में भाला, एक हाथ में शंख, एक हाथ में फूल थे, इसके बाद से ही कीर्तनादि में बालक की इस प्रकार ध्यानस्थ अवस्था होती है। माताजी ने उससे बात करके जाना कि उसे कीर्तनादि में आनन्द आता है पर कुछ दर्शनादि नहीं होते। देवी को उसने किस प्रकार देखा था यह दिखाने को कहने पर उसने खड़े होकर दिखाया और देवी की वर्णना की, माताजी ने उसकी आँखों को देखकर कहा कि आँखों में रक्तिम आभा है, जो ध्यान का लक्षण है, निद्रा का नहीं। और भी सुना गया बालक को खाने-पीने तथा खेलने आदि में अधिक रुचि नहीं है। माताजी ने कहा, "जो लोग इस पथ पर अर्थात् आध्यात्मिक पथ पर चलते हैं उनमें इस प्रकार के लक्षण ही प्रकाश पाते हैं। मैंने और एक लड़का देखा था जिसमें इस प्रकार के सुन्दर लक्षण प्रकाशित हुए थे पर उम्र के साथ-साथ सब लुप्त हो गये।

१५ फाल्गुन, बृहस्पतिवार, २८-२-५२

आज ही हम देहरादून से दिल्ली रवाना होंगे । आगामी कल दिल्ली से वृन्दावन जाना होगा । टिहरी की राजमाता ने माताजी को जो मोटर दी है उसमें माताजी दिल्ली जायेंगी । स्टेशन बैगन की तरह एक और गाड़ी राजमाता ने माताजी को दी उसमें लड़कियों में से कोई कोई जायेंगी ।

प्रातः काल माताजी टहलने को निकलीं । शचीघोष महाशय ने माताजी के आश्रम के लिये जो जमीन खरीदी थी वहाँ गयीं । यहाँ अभी ब्रह्मचारी सदानन्द रहते हैं । काफी दिन पहले ठेकेदार सामन्त बाबू ने माताजी के लिये इस भूखण्ड पर एक कमरा बना दिया है । उसी के पास पञ्चवटी बनायी गयी है । इस भू खण्ड पर एक और कमरा है जहाँ शची बाबू की बहन रहती थीं । अब वहाँ ब्रह्मचारी सदानन्द रहते हैं । यहाँ अनेक फल फूलों के पेड़ लगाये गये हैं । सोलन के राजा साहब ने इसलिये यहाँ माली रख दिया है ।

हम सब पञ्चवटी में जाकर बैठे । माताजी पक्की बनायी गयी जगह पर बैठीं । हम सब माताजी के चारों ओर बैठे । जहाँ पर माताजी उपस्थित रहती हैं वहाँ लोगों का अभाव नहीं होता । किशनपुर की तुलना में यह स्थान जनविरल है पर फिर भी यहाँ भक्तों का अभाव नहीं देखा गया । अनेक जन फल फूल लेकर माताजी से मिलने आये हैं । उनके लाये हुए फूलो से हमने माताजी के चरणों में अञ्जलि प्रदान की । माताजी ने इन फूलों से ही एक दो फूल लेकर हमलोगों को आशीर्वाद दिया । फल भी हमलोगों में ही बाँट दिया, विविध प्रसंगों पर चर्चा होने लगी ।

हरिबाबा की तितिक्षा–

माताजी ने हरिबाबा की बात उठायी । माताजी ने कहा, "यहाँ से कुछ दूर सहस्रधारा नाम से एक स्थान है । प्रभुदत्त ब्रह्मचारी ने एक बार यहाँ भागवत सप्ताह कराया था । उस समय वे मुझे यहाँ ले आये थे । मेरे साथ परमानन्द थे । इस सहस्रधारा में हरिबाबा तथा अवधूतजी के साथ मेरी प्रथम भेंट हुई । वे भी भागवत सप्ताह के उपलक्ष में यहाँ आये थे । परमानन्द के साथ अवधूतजी का परिचय पहले ही था । इस मुलाकात के बाद हरिबाबा के साथ बीच बीच में भेंट होती थी इसी समय से उन्होंने कहना शुरू किया माता जी जिस दिन से आपके साथ मेरी भेंट हुई उसी दिन से होली का एक महीना आपने मुझको दिया । अर्थात् होली के समय उनके पास एक महीना रहूँगी इस में सहमत हुई हूँ । इसीलिये होली के समय वे मुझे अपने पास ले जाते हैं । हरिबाबा तथा उड़िया बाबा ये दो मित्र हैं । वृन्दावन में महापुरुष के रूप में सुविख्यात हैं । हरिबाबा इस शरीर के लिये व्याकुल होने पर भी, उड़ियाबाबा इस शरीर की पहले उतनी परवाह नहीं करते थे । मैं जब "बाबा" "बाबा" कहते हुए उनके पास जाकर खड़ी होती थी तब वे गम्भीर भाव से एक जगह दिखा कर केवल मात्र कहते थे "बैठो" । हरिबाबा को मेरे प्रति अनुरक्त देखकर वृन्दावन के अनेक जन उनकी निन्दा करते थे, कारण उनके जैसे एक महात्मा एक स्त्री के प्रति इतना आदर सम्मान दिखाते हैं यह उन्हें अच्छा नहीं लगता है । परन्तु उनके विरुद्ध भाव जितने ही बढ़ते गये, हरिबाबा भी उतना ही अधिक इस शरीर के पास यातायात करने एवं रहने लगे । उड़िया बाबा की

इस शरीर पर विशेष श्रद्धा नहीं हैं देख, हरिबाबा जब वृन्दावन में रहते थे तब वे इस शरीर के सम्बन्ध में जो पुस्तकें लिखी गयी हैं वह पाठ करके हिन्दी में समझा देते थे। इन सब पुस्तकों में इस शरीर पर हुए विभिन्न भावों का वर्णन सुनकर उड़िया बाबा अवाक् हो जाते, धीरे धीरे इस शरीर के प्रति उनका भाव भी बदल गया, बाद में उनसे जब भेंट होती थी वे इस शरीर को पास बैठाते थे। मैं हरिबाबा को "बाबा" "बाबा" कहकर आदर यत्न करती हूँ देख तुम लोगों को अच्छा नहीं लगता है। पर क्यों ऐसा करती हूँ वह तो तुम लोग नहीं जानते। यह वृद्धावस्था, पर सत्संग कीर्तन इत्यादि उनके सभी काम घड़ी की सुई के अनुसार होते हैं। अवस्था होने के कारण अनेक समय में निद्रा के वश में आने पर भी निद्रा को जीतने का कितना प्रयास होता है उनका। साधारण भाव से पुस्तक पढ़ने से निद्रा आयेगी अतः वे पैर मोड़कर पुस्तक पढ़ना प्रारम्भ करते हैं पर ऐसा होने पर भी जब नींद आने लगती है तब वे खड़े होकर पढ़ना प्रारम्भ करते हैं। खड़े होकर पढ़ते पढ़ते भी जब निद्रा का आवेश रहता है तो वे पुस्तक हाथ में लेकर एक पैर पर खड़े होकर पुस्तक पढ़ना प्रारम्भ करते हैं। सहज भाव से पुस्तक पर दृष्टि रखने पर नींद आ जायेगी अतः वे पुस्तक को दायें या बायें हटाकर वक्रभाव से उस पर दृष्टि रख कर पाठ प्रारम्भ करते हैं।

पूज्य हरिबाबा किस प्रकार करते हैं, माताजी ने अनुकरण करके दिखाया। हमलोग देखकर हँसने लगे। माताजी ने हमलोगों को हँसते देखकर कहा, "तुमलोग हँस रहे हो, पर यहाँ भी तुमलोगों को शिक्षा लेने का है। वे किस प्रकार तितिक्षा का अभ्यास करते हैं वह ध्यान देने का विषय है। हरिबाबा बड़े घर के लड़के हैं। आई.ए.पास। डाक्टरी पढ़ते-पढ़ते वैराग्य के लिए सब छोड़ छाड़ कर संन्यासी बने हैं। किसी से विधिपूर्वक संन्यास लेकर उन्होंने काषाय वस्त्र धारण किया है ऐसा नही, स्वयं ही उन्होंने गैरिक वस्त्र ग्रहण किया है। पंजाबी शरीर, पर चैतन्य देव (महाप्रभु) के भक्त।

मैं– सुना है हरिबाबा ने चैतन्य महाप्रभु का साक्षात् पाया है?

माताजी– हाँ, केवल दर्शन ही नहीं, और भी कुछ उनसे पाया है। आज प्रातः का समय माताजी ने हरिबाबा की चर्चा करके ही व्यतीत किया। स्वयं ही कहने लगीं, "पिताजी के पास जा रही हूँ न, इसीलिये उनकी ही बात हो रही है।" दिन के साढ़े दस बजे हमलोग अपने आश्रम लौट आये। आज रवाना होना पड़ेगा इसलिये शीघ्रातिशीघ्र आहारादि समाप्त कर लिया।

बहुत लोग माताजी के साथ मिलने आये हैं। सोलन के राजा साहब, टिहरी की राजमाता, अवधूत जी आदि आये हैं। देहरादून शहर से भी अनेक भक्त आये हैं। दोपहर के दो बजे माताजी मोटर से रवाना हुईं। साथ खुकुनी दीदी एवं नारायण स्वामी गये। लड़कियाँ जिस गाड़ी से जायेंगी वह मरम्मत होने गयी है। अपरान्ह चार बजे वह आश्रम आकर पहुँची। महिलाओं में कोई कोई उसी समय गाड़ी से रवाना हो गईं। मेरी पत्नी तथा छोटी लड़की उसी गाड़ी से गईं। पुरुषों में प्रहलाद (सेवक) कमलाकान्त ब्रह्मचारी तथा कलकत्ते के ए.सी.मित्र भी उसी गाड़ी से गये। इस बार राजगीर में मित्र महाशय के साथ माता जी का प्रथम परिचय हुआ। सुना माताजी ने ही उनको चिट्ठी लिखवाकर हरिद्वार बुलवाया है। इनके चले जाने के बाद एक बस मँगवाकर उसमें सामान

आदि रखकर हमलोग स्टेशन रवाना हुए। हमलोगों की ट्रेन में उतनी भीड़ नहीं थी। पर हरिद्वार स्टेशन पर गाड़ी में असम्भव भीड़ हो गयी। जो भी हो अत्यन्त कष्ट से सारी रात बिता कर भोर पाँच बजे दिल्ली पहुँचे।

स्टेशन पर श्रीयुत अमल सेन महाशय, श्रीमान् रण आदि को देखा। थोड़ी देर बाद खुकुनी दीदी के साथ, मेरी पत्नी कन्या, सुश्री बुनी, खुकी, वेलू दीदी आदि को देखा। वे सब ही हमारे साथ रेल से वृन्दावन जायेंगे। इनसे सुना कि, जिस मोटर से महिलायें दिल्ली रवाना हुई थीं, रास्ते में वह पलट गयी थी। पर आश्चर्य का विषय तो यह रहा कि कोई भी गम्भीर रूप से घायल नहीं हुआ। गाड़ी के पलटने के थोड़े ही समय में एक ट्रैक्टर उधर से गुजर रहा था। उसी की सहायता से पल्टी हुई गाड़ी को खड़ा कराया गया। गाड़ी भी क्षतिग्रस्त नहीं हुई थी, पर महिलाओं ने उस पर पुनः सवार होने का साहस नहीं किया। दिल्ली आ रहे एक ट्रक पर सवार होकर वे रात के दो बजे दिल्ली पहुँचीं। डा. जे. के सेन के घर पर पहुँचते ही उनके पुत्र जो स्वयं भी प्रतिष्ठित डाक्टर हैं, इनके आघातों का भली भाँति निरीक्षण कर औषध आदि लगाने की व्यवस्था कर दी। माताजी ने स्वयं, दूध में गाय का शुद्ध घी तथा हल्दी चूर्ण मिलाकर सबको पिलवाया तथा सबसे कहा, "तुम लोग वृन्दावन जाने के उद्देश्य से रवाना हुई हो अतः वृन्दावन चन्द्र ने तुम्हारी रक्षा की, नहीं तो कुछ भी हो सकता था।"

वृन्दावन में –

आज दिन के साढ़े आठ बजे हमलोग मथुरा रवाना हुए। मथुरा पहुँचते ग्यारह बज गये। वहाँ से टाँगा लेकर दोपहर के बारह बजे वृन्दावन में श्री उड़ियाबाबा के आश्रम पर पहुँचे। उसी दिन सायंकाल माताजी ने हमलोगों को स्थानीय देवालयों में दर्शन करने को कहा। सन्ध्या के उपरान्त ब्रह्मचारी कमलदादा के साथ हमलोग गोविन्दजी का मन्दिर, बिहारी लालजी का मन्दिर एवं निम्बार्क आश्रम देख आये। जब पुनः आश्रम लौटे तब तक पू. हरिबाबा का कीर्तन समाप्त हो चुका था। दो एक ने भजन गाये। इस प्रकार रात्रि के नौ वज गये। नौ बजे के बाद भोजनादि करके हमलोग माताजीके पास जाकर बैठे। मैंने माताजी से जिज्ञासा प्रकट की, "माँ, मैं जब "मैं" शब्द का प्रयोग करता हूँ तब उसका लक्ष्य मेरे शरीर की ओर रहता है। पर भगवान् जब "मैं" इस शब्द का प्रयोग करते हैं, जैसे "मैं एक, मैं बहु होऊंगा यहाँ पर इस मैं शब्द की लक्ष्य वस्तु क्या है?

माताजी– भगवान् "मैं" शब्द से सब कुछ समझा देते हैं; कारण उनके सिवाय कुछ नहीं है।

मैं– "मैं एक हूँ" यह वाक्य भगवान् ने सृष्टि के पूर्व कहा था। तब उनके अतिरिक्त कोई सृष्ट पदार्थ नहीं था। इस अवस्था में "मैं" शब्द का लक्ष्य क्या है?

माताजी– (हँसकर) "मैं" शब्द की लक्ष्य वस्तु यदि कहना ही है, तो वह "मैं ही" अर्थात् एक मात्र अद्वितीय भगवान् हैं।

मैं– आपने कहा है कि अहम्भाव भी एक संस्कार है। भगवान् जब अहम् शब्द का प्रयोग करते हैं तब समझा जायगा कि उन्होंने अपने को संस्कारबद्ध किया है।

माताजी– जिस अर्थ में अहम् को संस्कार कहा जाता है, भगवान् के लिए उसका प्रयोग नहीं होता।

मैं– अच्छा, ईश्वर के संस्कार हैं क्या ?

माताजी– ईश्रवर कहने पर तुम क्या समझते हो ?

मैं– जो निग्रह अनुग्रहादि करने में समर्थ हैं वे ही ईश्वर हैं।

माताजी– इस सम्बन्ध में मतभेद हैं। वेदान्त वादी ईश्वर नहीं मानते। उनके लिये ईश्वर संस्कार बद्ध (उपाधियुक्त) जीव मात्र। पर जो ईश्वर को मानते हैं वे ईश्वरत्व पर कोई संस्कार आरोपित नहीं कर सकते।

मैं– आप ने श्री कृष्ण के बारे में कहा था श्री कृष्ण का भी "थोड़ा कुछ" है। यह "थोड़ा कुछ" क्या है?

माताजी– मैंने क्या इस शब्द का व्यवहार किया था ?

मैं– गोपीबाबा से मैंने ऐसा ही सुना था।

माताजी– पिताजी मेरी बात को समझ नहीं पाये। जो मैंने कहा था वह अति प्रारम्भ की वात है। काशी जाने पर पिताजी से इस प्रसंग को कहना।

इस प्रकार कथा प्रसंग में रात्रि के ग्यारह बज गये। माताजी को विश्राम देने के लिये हमलोग कमरे से बाहर आ गये। माता जी का स्वास्थ्य अधिक ठीक नहीं है।

१७ फाल्गुन, शनिवार, १-३-५२,

मैं वृन्दावन से दिल्ली रवाना होऊँगा। प्रातः काल माताजी आँगन में टहल रही थीं। मैंने जिज्ञासा प्रकट की, "माताजी गाड़ी पलटने से हम लोगों के ऊपर से एक दुर्भोग हो गया, यह क्या हमारे भोग में ही था, न दूसरे किसी का भोग हमारे ऊपर से हो गया ?

माताजी– दूसरे का भोग तुम्हारे ऊपर से क्यों जायगा ?

मैं– ठीक दूसरों का भोग नहीं, मेरे अपने लोंगों का भी तो भोग हो सकता है जो उनके ऊपर से न जाकर हमारे ऊपर से गया।

माताजी– यह भोग तुमलोगों का ही था।

मैं– एक जन का मृत्यु-योग जीवन में कितनी बार आ सकता है ? सोलन में भी तुमने हमलोगों को एक बार मृत्यु के हाथों से बचाया। पुनः यह मृत्यु योग?

माताजी– इस प्रकार होता है। तुम लोगों ने पुस्तकों में पढ़ा नहीं है क्या, अष्टवज्र का संयोग होने पर अमुक का उद्धार होगा। कई घटनाओं के योगायोग पर निर्भर करता है। इस प्रकार का योगायोग होने से वह हो जाता है। तुमलोगों के समय भी वैसा ही हुआ।

मैं– आपने पहले कहा था कि स्थान के साथ घटना का सम्बन्ध रहता है। आप यदि मुझे हरिद्वार नहीं बुलातीं तो मैं किसीतरह काशी छोड़कर नहीं आता, ऐसा होने पर इस प्रकार के भोग की सम्भावना कहाँ थी ?

माताजी– न आने का उपाय नहीं था, अतः तुमसे आने को कहा गया था।

(क्रमशः)

●

काशी में मृत्यु और मुक्ति

— म. म. पं. गोपीनाथ कविराज

हिन्दूशास्त्रों में तीर्थों के माहात्म्य-प्रसङ्ग में अनेक स्थानों पर कर्मतीर्थ और ज्ञानतीर्थ के नाम से दो प्रकार के तीर्थों का वर्णन मिलता है । कर्मतीर्थ क्षेत्र की विशेषता के कारण धर्म या पुण्य-संस्कारों को उत्पन्न कर स्वर्गादि सुखमय अवस्था की प्राप्ति कराते हैं । परन्तु यदि ज्ञानतीर्थों का विधिपूर्वक सेवन किया जाय तो उससे क्रमशः ज्ञानसंस्कार सञ्चित होते हैं और अन्त में पूर्ण ज्ञान का विकास होकर मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है । इसीलिए ज्ञानतीर्थों को मोक्षदायक तीर्थ कहा गया है और इसलिए शास्त्रों में अयोध्या, मथुरा, माया आदि नगारियों को प्राचीन काल में मोक्ष-दायिनी बतलाया गया है । परन्तु दूसरे-दूसरे मुक्ति स्थानों की अपेक्षा काशी की कुछ विशेषता है । क्योंकि अन्यान्य ज्ञान-भूमियों में जीवन धारण करने से अर्थात् उन स्थानों पर निवास करने से ही स्थान-महात्म्य के कारण ज्ञान का उदय होता है; परन्तु काशी में निवास से नहीं, अपितु देहत्याग से ही मुक्ति की प्राप्ति हो जाती है ।

कुछ लोग ऐसा सोचा करते हैं कि 'किसी स्थान-विशेष में मृत्यु होने से ही मुक्ति हो जायगी, ऐसा मानना सर्वथा युक्ति-विरुद्ध है । काशीमरण के सम्बन्ध में शास्त्रों में जो प्रशंसा-सूचक वाक्य हैं वे अर्थवादमात्र हैं; यानी लोगों को आकर्षित करने के लिए बढ़ाकर कहे गये हैं । यदि काशी में मरने से ही मुक्ति हो जाय तो करने के लिए बढाकर कहे गये हैं । यदि काशी में मरने से ही मुक्ति हो जाय तो फिर कृत कर्मों का फलभोग नहीं हो सकता और यदि कर्मो का फल न मिलेगा तो सृष्टि में नाना प्रकार की विषमताएँ उत्पन्न हो जायँगी तथा पापी और पुण्यात्मा अपने-अपने कर्मों के अनुसार फल न भोगे और दोनों को समान गति मिल जाय, यह भी अनुचित मालूम होता है । इसके सिवा आत्मज्ञान हुए बिना मुक्ति भी कैसे हो सकती है ? ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं हो सकती, यह ऋषियों का चरम और अभ्रान्त सिद्धान्त है । यह भी समझ में नहीं आता कि पापी और पुण्यात्मा दोनों ही काशी में मरते ही अपने पाप और पुण्य के संस्कारों से छूटकर तत्त्वज्ञान की योग्यता प्राप्त कर लेते हैं और कर्मो का क्षय हुए बिना ज्ञान का उदय भी कैसे हो सकता है ? आदि-आदि ।'

जिनके मन में इस प्रकार के सन्देह पैदा होते हैं उनको यह समझना चाहिये कि स्थान-माहात्म्य का निरूपण युक्तियों से नहीं हो सकता । बाह्य अथवा पाञ्चभौतिक दृष्टि से काशी तथा अन्य पार्थिव स्थानों में कोई लौकिक भेद नहीं दिखलायी पड़ता । काशी में कोई अलौकिक विशेषता है या नहीं, इसका निर्णय किसी शक्ति-सम्पन्न पुरुष के अनुभव के द्वारा ही हो सकता है । कार्य के द्वारा ही शक्ति का अनुमान होता है क्योंकि अतीन्द्रिय शक्ति साधारण मनुष्यों के प्रत्यक्ष का विषय नहीं है । अग्नि की दाहिका शक्ति साधारण दृष्टि से नहीं देखी जा सकती । साधारण मनुष्य तो दहनादि कार्यो को देखकर ही उसके अस्तित्व का अनुमान करते हैं । इसी प्रकार काशी में ऐसी कोई

विशेषता है या नहीं जिसके प्रभाव से जीव ज्ञानवान् होकर मुक्ति-लाभ कर सकता है– इस तत्त्व की यथार्थ उपलब्धि करने के लिए उसका कुछ स्थूल परिचय प्राप्त करना आवश्यक है। ऐसा किये बिना इस प्रकार के माहात्म्य का अनुमान करना भी सम्भव नहीं है।

मृत्यु के समय प्रत्येक मनुष्य का सूक्ष्म (लिंग) शरीर स्थूल शरीर से अलग होकर अपने कर्म-संस्कारों के अनुसार गति प्राप्त करता है। जब तक स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर अलग नहीं होता तब तक यह गति आरम्भ नहीं होती। अर्थात् मृत्यु के बाद ही सूक्ष्म शरीर में गति दिखलायी पड़ती है। इस गति की विचित्रता कर्म-वैचित्र्य के अनुसार ही होती है। ऊर्ध्वगति, अधोगति तथा तिर्यग्गति और प्रत्येक गति के असंख्यों अवान्तर भेद अनन्त प्रकार के जटिल कर्म-संस्कारों के कारण ही हुआ करते हैं। परन्तु काशी-क्षेत्र में जब मृत्यु के समय वह लिंग-ज्योति अर्थात् सूक्ष्म शरीर स्थूल या अन्नमय कोष से पृथक् होता है तब वह अपने को एक तीव्र ऊर्ध्वगामी आकर्षण के मध्य देखता है और इस आकर्षण के प्रभाव से वह लिंग-देह अर्थात् सूक्ष्म शरीर क्रमशः ऊर्ध्वगामी होता है। काशी के सिवा अन्यान्य स्थानों में मृत्युकाल में लिंग की ऐसी गति नहीं होती। अवश्य ही जिनको ज्ञान हो गया है, उनकी मृत्यु कहीं भी क्यों न हो, उनका लिंग-शरीर ज्ञान के प्रभाव से स्वभावतः ही ऊर्ध्वगामी होता है। यह क्रम-मुक्ति के अनुसार उत्क्रमण की व्यवस्था है।

अब प्रश्न होता है कि काशी-क्षेत्र में शरीर छोड़ने पर साधारण मनुष्यों की अर्थात् अज्ञानी जीवों की भी इसी प्रकार ऊर्ध्वगति होती है या नहीं? जब इसका साक्षात् अनुभव, जिनकी मृत्यु हो गयी है उन्हें छोड़कर, दूसरों के लिये असम्भव है तब जीवित मनुष्य इस सम्बन्ध में किसी स्थिर सिद्धान्त पर कैसे पहुँच सकता है? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि योगियों एवं योगाभ्यासियों के लिये इस संशय को दूर करना कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है। कारण पके हुए फल के डाल से टूट कर भूमि पर गिर पड़ने की भाँति जैसे प्रारब्ध कर्म का भोग पूरा होने पर सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से अलग हो जाता है, ठीक वैसे ही योगलब्ध बल से सम्पन्न पुरुष जीवनकाल में अपने इच्छानुसार योगशास्त्रोक्त कौशल के द्वारा अन्नमय कोष से लिंग (सूक्ष्म देह) को पृथक् करके बाहर निकाल सकते हैं। इस प्रकार योगी जब अभ्यास के समय लिंग शरीर को स्थूल शरीर के सम्बन्ध से कुछ अंश मे मुक्त करके बाहर ले आता है तब उसी क्षण वह बाह्य जगत् के विचित्र आकर्षण का अनुभव करता है। कहना नहीं होगा कि इस आकर्षण से ही लिंग (शरीर) की भिन्न-भिन्न प्रकार की गतियों का आरम्भ हुआ करता है। अतएव इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह आकर्षण और तज्जनित गति लिंगनिहित कर्म-संस्कारों का फल है। यदि यह देखा जाय कि किसी स्थान-विशेष में अभ्यासकाल में लिंग-शरीर अन्नमय कोष से पृथक् होने के साथ ही किसी अचिन्त्य शक्ति के आकर्षण से ऊर्ध्वगामी होता है, यहाँ तक कि उसके विचित्र कर्म-संस्कार भी उसे खींच कर नीचे की ओर नहीं ला सकते तो यह समझना होगा कि यह स्थान-माहात्म्य का ही फल है। अनुभूति-सम्पन्न योगियों को काशी में इस प्रकार की अचिन्त्य विशेषता की उपलब्धि हुआ करती है। इसलिये यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ज्ञान-प्राप्ति के अनन्तर योगबल से देह-त्याग करने पर जिस प्रकार लिंग-शरीर की ऊर्ध्वगति होती है उसी प्रकार काशी में भी मृत्युकाल में लिंग पृथक् होने के साथ ही ऊर्ध्वगति प्राप्त हुआ करती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ऊर्ध्वगति ज्ञान के बिना नहीं हो सकती, इसलिये अज्ञानावृत, पापी अथवा पुण्यात्मा कोई किसी प्रकार के भी कर्मवाला

हो, इस ज्ञान-क्षेत्र में देह त्यागने के साथ ही ज्ञान प्राप्त कर ऊर्ध्वगति पाता है । शास्त्रों में लिखा है कि काशी पृथिवी के अन्तर्गत नहीं है । इसका असली तात्पर्य यह है कि दूसरे-दूसरे स्थानों में जैसे पार्थिव-आकर्षण या मध्याकर्षण स्थूल देह से पृथक् हुए लिंग को नीचे की ओर खींचते हैं काशी में ठीक इसके विपरीत ऊर्ध्व आकर्षण लिंग को ऊर्ध्व की ओर आकर्षित करता है । स्थूल देह का सम्बन्ध टूटने के साथ-ही-साथ ऐसा दीखने लगता है । जिस प्रकार अधः आकर्षण अज्ञान का कार्य है उसी प्रकार ऊर्ध्व आकर्षण ज्ञान का कार्य है । काशी-मृत्यु से लिङ्ग देह एक प्रकार की ऊर्ध्वगतिशील अवस्था को प्राप्त होती है, इसीलिए काशी की श्रेष्ठ ज्ञान-क्षेत्र के रूप में पूजा होती है तथा शास्त्रों में 'मरणं यत्र मङ्गलम्' कह कर काशी-मृत्यु की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है ।

काशी का ऐसा माहात्म्य या वैशिष्ट्य है या नहीं–इसका निर्णय केवल अनुभव के द्वारा ही किया जा सकता है, युक्तियों द्वारा नहीं । ऋषियों के इस प्रकार के अनुभव के बल पर ही शास्त्रकार काशी की महिमा का प्रचार कर गये हैं । अब भी समर्थ योगी अपने जीवित काल में ही इस प्रकार के अनुभव प्राप्त करते हैं । यह ज्ञान-प्राप्ति साक्षात् कृपा का फल होने के कारण इसके साथ कर्मों का कोई विरोध नहीं रह सकता । कहना नहीं होगा कि ज्ञानस्वरूप श्रीभगवान् की कृपा के बिना कभी ज्ञान का उदय नहीं हो सकता । कर्मक्षय होने से ही ज्ञान का उदय होता है–यह प्रकृत सिद्धान्त नहीं है । वस्तुतः साक्षात् या अपरोक्ष ज्ञान का आविर्भाव होते ही हृदय-ग्रन्थि का भेदन होकर समस्त संशयों का भञ्जन एवं कर्मों का क्षय हो जाता है । अतएव काशीमृत्युरूप सौभाग्य को प्राप्त करना अथवा आत्मज्ञान का उदय होना, दोनों ही भगवान् की कृपा से होते हैं । दार्शनिकगण जानते हैं कि Justice (न्याय) और Mercy (दया) में कोई वास्तविक विरोध नहीं है । Mercy (दया) से Justice (न्याय) की ही पूर्णता होती है– Love is the fulfilment of law (प्रेम न्याय का पूरक है)– इस वाक्य के द्वारा ईसा के उपासकों ने भी इसी बात की घोषणा की है । जिस कृपा के द्वारा काशीमृत्यु प्राप्त होती है, उसके साथ कर्मों का विरोध न रहने का कारण यह है कि काशीमृत्यु द्वारा तारक ज्ञान का उदय होने से अधः आकर्षण और गर्भवास-यन्त्रणा निवृत्त हो जाती है, पर कृत कर्मों का फल चाहे वह सुख हो या दुःख ही हो–ऊर्ध्वलोक में भोगना पड़ता है । अवश्य ही ज्ञानोदय होने के कारण नये कर्म नहीं होते और पुराने कृत कर्म क्रमशः सुख और दुःख रूप फल-भोग के द्वारा क्षीण हो जाते हैं । पर ज्ञान पूर्णता को प्राप्त करता है और जीव परमा मुक्ति का अधिकारी हो जाता है । अतएव काशी में मृत्यु होने पर भी पाप का फल दुःख और पुण्य का फल सुख भोग करना ही पड़ता है । तब किसी प्रकार के वैषम्य अथवा अन्याय का कारण नहीं रह जाता । परन्तु देवादिदेव महादेव की कृपा से स्थान-माहात्म्य के कारण ज्ञान का उदय हो जाता है, इसलिए मुक्ति प्राप्त करने में भी कोई बाधा नहीं आती । इस सम्बन्ध में अन्यान्य विषयों पर फिर कभी आलोचना की जा सकती है । यह ज्ञानाग्नि सञ्चित कर्मों को निःशेष रूप से जला डालती है ।

यहाँ सद्योमुक्ति के सम्बन्ध में आलोचना करने की आवश्यकता नहीं है ।

●

नोट :– बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् से प्रकाशित, "भारतीय संस्कृति व साधना" द्वितीय खण्ड से साभार ।

वाराणसी के गंगातट पर मातृ दर्शन

– स्वामी नारायणनन्द तीर्थ

एक बार श्री श्री माँ वाराणसी में आकर उत्तरवाहिनी पतितपावनी माँ गंगा के ऊपर एक बड़े बजरे पर रह रही थीं । तब माँ का काशी आश्रम स्थापित नहीं हुआ था । नाव दशाश्वमेध घाट के उस पार रखी गई थी, उदेश्य था माँ को एकान्त भाव से अपने ख्याल में रहने देना । माँ के विना बुलाये माँ के पास जाने की मनाही थी । बजरे में दो कोठरियाँ थीं सामने का प्रकोष्ठ थोड़ा बड़ा एवं पीछे वाला कुछ छोटा था । सामने के बड़े कमरे में श्री श्री माँ के पुरातन भक्त कलकत्ता हाई कोर्ट के वकील श्री यतीश चन्द्र गुह एवं पीछे के छोटे कमरे में श्री श्री माँ थीं । कुछ देर पहले ही ब्रह्मचारी अभय श्री श्री माँ से बातचीत करके गया है । उस समय नाव पर श्री श्री माँ और यतीश बाबू को छोड़कर तीसरा कोई व्यक्ति नहीं था । मैं माँ के पास जा रहा था और अभय माँ के पास से लौट रहा था । हम दोनों की भेंट बीच गंगा में हुई । उसने मुझसे कहा, "अभी माँ के पास यतीश दा के सिवाय और कोई नहीं है, जाइये माँ से भेंट होगी । "मैं बजरे पर चढ़ा ही था कि माँ ने भीतर की छोटी कोठरी से मेरा पूर्वाश्रम का नाम लेकर कहा"क्या अमुक हो? मैंने गद्गद् भाव से उत्तर दिया, "हाँ माँ मैं हूँ" । उस समय माता जी जिस स्थान पर थीं वहाँ से उनका देख पाना सम्भव नहीं था एवं माता जी उस समय बैठी भी नहीं थीं, वे अपनी शय्या पर लेटी थीं । लेटे हुए देख पाना तो और भी असम्भव था फिर भी माँ ने मेरा नाम लेकर पुकारा और मुझे अपने पास आने की आज्ञा प्रदान की । माँ के न बुलाने पर न जाने मुझे कितनी ही देर तक यतीश बाबू के पास बैठकर प्रतीक्षा करनी पड़ती, कारण कि यतीश बाबू को आदेश था कि न बुलाने पर कोई माँ के पास न जाय । मुझे तनिक भी आशा नहीं थी कि इतनी जल्दी मुझे माँ का दर्शन मिलेगा । यह तो स्नेहमयी माँ की ही कृपा है । माँ की आज्ञा पाकर मेरा देह-मन-प्राण उत्फुल्ल हो उठा ।

कृपामयी माँ की आज्ञा पाकर भीतर जाने पर देखा कि माँ उस छोटी सी कोठरी में अपनी धवल शय्या पर लेटी हुई अपने भाव में चरणं युगल आन्दोलित कर रही हैं । कमरे में प्रवेश करते ही वे उठ बैठीं । मेरे प्रणाम करते ही बिना कुछ पूछे माँ स्वतः ही कह उठीं । "देखो इस मुद्रा में इस प्रकार तीन बार करना" यह कहकर करुणमयी माँ ने स्वयं मुद्रा करके मुझे दिखाया । माँ ने जैसे दिखाया मैंने भी उनके सामने वैसे करने की कोशिश की । मेरी मुद्रा में जहाँ त्रुटि थी दयामयी माँ ने उसे ठीक कर दिया । मुद्रा की कौन सी अवस्था में कितनी देर रहना पड़ेगा, वह भी माँ ने कह दिया । उस अवस्था में इष्ट मन्त्र द्वारा संख्या रखने का निर्देश दिया । मैंने उनके चरणों में निवेदन किया । "माँ मैंने तो अभी दीक्षा ग्रहण नहीं की । तब किस मन्त्र द्वारा संख्या रखूँगा" ? मेरे पूछने पर माँ ने प्रणव द्वारा संख्या रखने का निर्देश दिया । इस प्रकार उस दिन कृपा करके माँ

ने मुझे तीन मुद्राएँ दिखाई थीं । मुमुक्षु साधकों के लिए यह मुद्रा अत्यन्त आवश्यकीय एवं उपकारी है । श्री श्री माँ के आदेश बिना इन सब मुद्राओं की विस्तृत व्याख्या करना समुचित न जानकर निवृत्त हुआ । उस दिन मैं माँ के दर्शनों की इच्छा से ही गया था, मेरी प्रार्थना की प्रतीक्षा न कर माँ ने स्वतः प्रवृत्त होकर ही उस दिन करुणा करके मुझे तीन मुद्राएँ दिखायी थीं । इसे ही कहते हैं अहैतुकी कृपा । याचना न करने पर योग्यता का विचार न करके स्वेच्छा से ही जो दान मिलता है उसको इसके सिवा और किस नाम से पुकारा जा सकता है?

इसी प्रकार की एक और घटना गत 1963 के मार्च में हुई थी । होली के समय हम लोग श्री श्री माँ के साथ वृन्दावन में रह रहे थे । एक दिन के करीब दस बजे माँ टहलते टहलते "भागवत भवन "में आकर उपस्थित हो गयीं । माँ के पीछे-पीछे हम लोग भी हाल में पहुँचे उसी के बीच माँ ने मुझको अपने साथ लेकर शिव मन्दिर में प्रवेश किया । पुजारी अभी ही शिव पूजा करने के लिए मन्दिर में आयेंगे इसीलिए माँ ने मुझको लेकर श्रीमहाप्रभु के मन्दिर में प्रवेश किया एवं दरवाजा बन्द करने को कहा । इसके बाद माँने मुझे एक श्वास की क्रिया दिखाई एवं ध्यान के पहले उसे 6 बार करने को कहा । माँ के आदेश से मैंने एक बार माँ के सामने किया । इस क्रिया को ध्यान से पहले करने पर साधना में मन की एकाग्रता में काफी सहायता मिलती है । जब माँ में कुछ दान करने का ख्याल होता है या करुणा की बाढ़ आती है तव प्रार्थना के बिना भी माँ साधना का पंथ दिखाते हुए मुझ जैसी अक्षम अयोग्य सन्तान का अशेष कल्याण करती रहती हैं । श्री श्री माँ की करुणा सब समय ही जीवों के प्रति रहती है इसमें तनिक भी संदेह नहीं है । किसी-किसी समय उसका आधिक्य प्रकट होता है, उसे जानने का कोई उपाय नहीं है । माँ की योग्य सन्तानों को माँ के पास से न जाने इस प्रकार के कितने अमूल्य रत्न मिले हैं जो गुप्त ही रह गये हैं । हम माँ के निर्देशानुसार काम नहीं करते इसीलिए आशानुरूप फल नहीं पाते । काम करने पर अवश्य ही फल मिलता है । माँ तो दान करने के लिए सर्वदा प्रस्तुत हैं पर ग्रहीता कहाँ, लेता कौन है ?

एक बार हम लोग माँ के साथ राजगृह के गृध्रकूट पर्वत के ऊपर, जहाँ करुणासागर श्री बुद्धदेव ध्यान में मग्न रहते थे, उस स्थान का दर्शन करने गये थे । उस अत्यन्त पवित्र और रमणीय स्थान को देखकर सब माँ के साथ नीचे उतर कर बीच रास्ते में ही विश्राम करने लगे ।

मैं उस सुन्दर स्थान में माँ की बताई हुई श्वास क्रिया द्वारा ध्यान में बैठा । मैं कितनी देर वहाँ ध्यानमग्न था यह कह नहीं सकूँगा, हो सकता है, घन्टा भर या उससे भी अधिक समय लगा हो. ऐसा ध्यान पहले कहीं हुआ नहीं था । यह श्री श्री माँ की प्रदर्शित क्रिया का फल है, यह स्वीकार करना ही पड़ेगा । माँ की ओर से किसी प्रकार के उत्साह का अभाव या कृपा की कृपणता कदापि दृष्टिगोचर नहीं होती है । हम लोगों के पूर्वजन्म के कृत कर्म साधना के इतने प्रतिवन्धक हैं कि पथ पर अग्रसर होने नहीं देते । ध्यान भंग होने के बाद वहाँ आकर देखा कि माँ सबको लेकर आश्रम लौट गयीं ।

●

वाङ्माधुरी

एक पत्रकार महिला जो कि कुछ दिन भारत में थीं अब पाकिस्तान जा रही थीं, वह श्री श्री माँ से अत्यन्त उत्कण्ठा से मिलने आयी थीं, वह माँ से ऐसे कुछ प्रश्न पूछने आयी थीं, जिनसे वे परेशान हो रही थीं ।

पहला प्रश्न कर्म विधान से सम्बन्धित था । ऐसा क्यों होता है । कि अनजान में गलती हो जाने पर उसे भोगना पड़ता है? उदाहरण के लिये जैसे कोई बच्चा अपने अनजान में किसी को चोट पहुँचा दे तो उसे फल क्यों भोगना पड़ेगा? पर बच्चा तो अज्ञानी था, बड़े होने पर उसका फल उसे क्यों भोगना पड़ता है ?

माँ – बच्चा चाहे जानबूझ कर करे या अनजान में फल तो पायेगा, उदाहरण के लिये कोई व्यक्ति यदि अनजान में आग में हाथ डाल दे, पर हाथ तो जल जाता ही है । आग जल रही है और जिस व्यक्ति का हाथ जलता है दोनों का एक साथ होना संयोग ही है । कारण बहुत गंभीर होता है । केवल मात्र बच्चा या वह व्यक्ति जिसे चोट पहुँची है कारण नहीं होते ।

प्रश्न– हिटलर और उसके गैस चेम्बर तथा करोड़ों नर संहार का क्या होगा ?

माँ – अपराध के अनुरूप कोई निश्चित परिणाम नहीं है । पर यह निश्चित है जो किया गया है, उसके भाग में उसे वह वापस मिलेगा ही । कर्मफल का भोग करना ही है । ज्ञान से न अज्ञान से, पैर आग से लगे तो जलता है । मानो ना मानो । स्वभाव से मौन जितने दिन नहीं माने अज्ञानी ।

इस जन्म में तुम जो कष्ट भोग रहे हो या भोग चुके हो, यह सब तुम्हारे कर्मों का फल है । तुमको यह सब स्वीकार करना पड़ेगा ।

पैदा हुआ क्यों, जड़ से ही काट दूँ बुद्धिमान् नहीं मारते, जो विधान है या दृढ़ निश्चय है वह होकर ही रहेगा । पर यह आवश्यक नहीं है कि सभी व्यक्ति इस सत्य को समझें ।

बच्चे ने नासमझी से किया, बच्चा बड़ा हुआ, ओह दुःख दिया, (अर्थात किसी से दुःख मिला) उसका फल क्यों मिले, अज्ञान से भी करा तो भी भोगना है ।

एक वृद्ध ब्राह्मण बहुत पढ़े लिखे थे । एक दिन एक साँप आया और उसने उसकी पत्नी को डँस लिया वह मर गयी, उसके बाद उसने उसके पुत्र को और आखिर उसकी कन्या को डँसा.

तीनों ही साँप के डँसने से मर गये। ब्राह्मण ने देखा वे तीनों ही मर गये। साँप अपने रास्ते चला। ब्राह्मण साँप के पीछे हो लिया। चलते-चलते उसने देखा साँप दो बैलों में परिवर्तित हो गया। दोनों बैल आपस में लड़ने लगे और मर गये। वहाँ एक कन्या और दो युवक आये, जो उस कन्या को लेकर झगड़ रहे थे उनमें से एक मर गया और एक भाग गया। यह व्यक्ति कन्या के पीछे हो लिया। ब्राह्मण को अपना पीछा करते देख कन्या ने पूछा, "आप मेरे पीछे क्यों आ रहे हैं।" "आप कौन हो? आप जाओ, आप अपने रास्ते जाओ मैं अपने रास्ते जाती हूँ।" ब्राह्मण ने कहा, "मैं नियति (भाग्य) हूँ"। ब्राह्मण ने पूछा, "मेरी मृत्यु कैसे होगी?" कन्या ने कहा, "तुम्हारी मृत्यु जल में होगी।" इतना कहकर वह अन्तर्हित हो गयी। ब्राह्मण घर लौट आये और उन्होंने जल के पास न जाने का निश्चय किया। चलते-चलते वह ब्राह्मण पहाड़ों की ओर पहुँचा। जाते-जाते उसने एक बड़ा मकान देखा। वह एक सेठ का मकान था। सेठ उस समय वहाँ था, उसने ब्राह्मण से पूछा, आप कहाँ जा रहे हैं ? ब्राह्मण ने कहा, "मैं पर्वतों पर जा रहा हूँ।" सेठ ने उन्हें घर पर निमन्त्रित किया। ब्राह्मण ने कहा, "मैं पहाड़ों पर रहने जा रहा हूँ।" सेठ ने सोचा यह तो बड़े विद्वान् मालूम पड़ते हैं। मैं अपने लड़के के लिये इनको रख लूँ। उसने ब्राह्मण से कहा, "मैं आपकी रहने की व्यवस्था एवं भोजन का प्रबन्ध करूँगा आप यहीं रहिये।" ब्राह्मण वहाँ रहने लगा। बहुत वर्ष बीत गये। वह लड़का युवक हो गया उसका विवाह हो गया और एक बच्चा भी हुआ।

उस समय ऐसा हुआ स्नान का चिन्तामणि योग आया। सेठ के घरवालों ने योग पर जाने का सोचा, इसका बहुत महत्व होता है। उन्होंने ब्राह्मण से स्नान के लिये जाने का आग्रह किया। ब्राह्मण ने कहा, मुझे स्नान के लिये जाने में बाधा है। तब सेठ जी का पौत्र आया, जिसे उन्होंने बड़ा किया और बहुत प्यार करते थे। बच्चा पण्डित की गोद में बैठ गया, हँसने लगा और अपनी बाँहों को उनके गले में डालकर बोला, "पिताजी आइये" पण्डित ने तब पूरी बात बता दी। सेठ ने कहा, मैं गंगाजी में आपके स्नान की जगह पक्की चहारदीवारी लगा दूँगा, आपको डूबने का डर नहीं रहेगा। बच्चा भी दादा दादा कहने लगा। अब ब्राह्मण ने सोचा चारों तरफ से घिरा रहेगा अब तो मैं डूब नहीं सकता। उन्होंने बच्चे को गोद में लिया, क्योंकि बच्चे ने उन्हें बुलाया था। जैसे ही उन्होंने गोता लगाया। बच्चे ने कहा "मैं विधि हूँ। उसे ले गया और डुबा दिया।" अनजान रूप में संयोग हो जाता है। यदि तुम इस बात को समझ लोगे तब समस्याओं के बारे में प्रश्न ही नहीं आयेगा।

जैसे कि यह विधान था तुमको यहाँ आना था और प्रश्न पूछना था।

भक्त प्रवर श्री नाभा जी

—परिव्राजक

भक्त प्रवर श्री नाभा जी के जन्म तथा जन्म स्थान के सम्बन्ध में कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है। संत तुलसीदास जी से उनकी भेंट इस तथ्य को प्रकाशित करती है कि वे उनके समकालीन थे। ऐसी मान्यता है कि दो संत एक गहन वन में विचरण कर रहे थे जहाँ उन्होंने एक नवजात शिशु को असहाय अवस्था में एक वृक्ष के निकट देखा। शिशु की आँखें बंद थीं। एक संत ने अपने कमण्डल के जल से उसकी आँखों पर छींटा मारा परिणामस्वरूप उसकी दोनों आँखें खुल गयीं। उसको प्रथमतः दिव्य प्रकाश तथा संतों का मुखमंडल लक्षित हुआ जिनको देखकर उसका मुख-कमल प्रफुल्लित हो उठा। उन संतों ने उस नवजात असहाय बालक को वहाँ से उठाकर गल ग्राम स्थित श्री अग्रदास जी महाराज के आश्रम में छोड़ दिया।

आश्रम में उस बालकका लालन-पालन सामान्य रूप से होने लगा। अग्रदास जी महाराज एक सिद्ध महात्मा थे। उनके आश्रम में संतों तथा अतिथियों की सेवा सुरुचिपूर्ण ढंग से होती थी। धीरे-धीरे बालक की आयु बढ़ती गयी तथा वह आश्रम के छोटे-मोटे कामों में हाथ बंटाने लगा। वह आश्रम के जूठे बर्तनों को साफ करता तथा जूठे अवशिष्ट प्रसाद से अपनी क्षुधा की पूर्ति करता। एक दिन की बात है जब अग्रदास जी महाराज ध्यान-मग्न थे उसी समय उनके एक प्रिय शिष्य का जहाज समुद्र में तूफानग्रस्त हो गया। शिष्य ने रक्षार्थ अग्रदास जी महाराज का स्मरण किया जिन्होंने नाभिसिद्धि द्वारा शिष्य की रक्षा की। महाराज जी की इस नाभि क्रिया को देखकर बालक ने कहा महाराज जी आपकी इच्छा मात्र से ही शिष्य की रक्षा हो सकती थी नाभि क्रिया द्वारा पूरे ब्रह्माण्ड की वायु को आकर्षित करने की क्या आवश्यकता थी। अग्रदास महाराज को अबोध बालक के ज्ञान पर आश्चर्य हुआ तथा उससे पूछा कि उसको यह ज्ञान कहाँ से प्राप्त हुआ। उसने विनम्रतापूर्वक महाराज जी से कहा कि ऐसे ही नारद जी को भी ज्ञान प्राप्त हुआ था। तभी से महाराज जी इस सात वर्षीय बालक को नाभा नाम से पुकारने लगे।

अग्रदास जी महाराज के आश्रम में श्री कृष्ण चन्द्र का एक जाग्रत विग्रह था जिनकी सेवा बड़ी श्रद्धा के साथ होती थी। एक दिन नाभा जब शान्त आश्रम के प्रांगण में बैठा था कि विग्रह से उसके कानों में आवाज आयी कि दिन रात उनकी पूजा अर्चना ही होती रहती है खेलने का अवकाश नहीं मिलता। ठाकुर जी की इस व्यथा को सुनकर नाभा ने कहा कि उसकी भी तो यही व्यथा है कि सदैव आश्रम में जूठन को साफ करने आदि कार्यों में व्यस्त रहने के कारण वह खेलने की बात तक नहीं सोच सकता। तत्पश्चात सहसा ठाकुर जी नाभा के सम्मुख प्रगट होकर उसके साथ खेलने लगे तथा थक कर थोड़ी देर बाद क्षुधा-ग्रस्त होने का नाटक करते हुये उससे कुछ खाने के लिये मांगा। नाभा ने उनको इस आश्वासन के साथ विदा किया कि आज तो कुछ नहीं बचा है

कल वह उनको अवश्य खिलावेगा। अगले दिन नाभा दो दोने जूठन से ठाकुर जी को भोग लगा ही रहा था कि अग्रदास जी महाराज आ गये तथा उसके इस कृत्य पर आग बबूला हो गये। महाराज जी अपने क्रोध पर नियंत्रण न कर सके तथा नाभा को दो चाँटे जड़ दिये। दूसरे दिन जब महाराज जी ठाकुर मंदिर में पूजन के लिये गये तो ठाकुर जी की पीठ अपने सम्मुख पाकर आश्चर्य चकित रह गये। पर्याप्त अनुनय विनय करने पर ठाकुर जी ने अपना मुख महाराज जी की ओर किया। ठाकुर जी का मुखारविन्द सूजा हुआ था। ठाकुर जी का मुखारविन्द तब तक सामान्य नहीं हुआ जब तक ठाकुर जी के निर्देशानुसार महाराज जी ने स्वतः नाभा के सूजे हुये गाल का अपने हाथों से उपचार नहीं किया।

ठाकुर जी नामा के सखा हो गये थे तथा प्रायः नाभा के साथ खेला करते थे। एक दिन की बात है कि ठाकुर जी ने नाभा को खेल में हरा दिया। नाभा को खेल में हार जाने के कारण कष्ट हुआ तथा वह इतना अवसादग्रस्त हुआ कि रोने लगा। नाभा की इस मनःस्थिति को जानकर ठाकुर जी ने उससे पुनः खेलने का प्रस्ताव कर खेलना प्रारम्भ कर दिया। ठाकुर जी नाभा को इतना प्यार करते थे कि उसको प्रसन्न करने के लिये उन्होंने स्वतः पराज़य स्वीकार कर ली।

कालान्तर में बालक नाभा ने भक्त प्रवर नाभा जी महाराज के रूप में ख्याति प्राप्त की। अग्रदास जी महाराज नाभा जी की अलौकिक शक्ति से भली भाँति परिचित हो गये थे। नाभा जी की इस अलौकिक शक्ति से प्रभावित हो अग्रदास जी महाराज ने उनसे भक्तमाल की रचना करने को कहा। नाभा जी ने अपने पढ़े लिखे न होने की असमर्थता व्यक्त की। अग्रदास जी महाराज ने कहा कि ईश्वरीय अनुकम्पा के कारण पढ़ाई-लिखाई उनके मार्ग में बाधा नहीं होगी। नाभा जी परिव्राजक के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान को भ्रमण करते हुये अनेक श्रेष्ठ संतों के सम्पर्क में आये तथा इस रूप में भक्तमाल के 108 संतों की जीवनी तथा उनकी महान उपलब्धियों को लिपिबद्ध किया।

ऐसी मान्यता है कि नाभा जी महाराज ने संत शिरोमणि तुलसीदास जी से मिलने के लिये वाराणसी में पदार्पण किया। संयोग से जब वे तुलसीदास जी से मिलने उनके आवास पर पहुँचे तो ज्ञात हुआ कि वे ध्यान-पूजन में बैठे हुये हैं। नाभा जी ने तुलसीदास जी की साधना में विघ्न बनना उचित नहीं समझा और वृन्दावन को वापस हो गये। तुलसीदास जी को जब नाभा जी के आगमन की सूचना मिली तो वे नाभा जी के दर्शनार्थ वृन्दावन पहुँच गये। वृन्दावन पहुँचने पर तुलसीदास जी ने नाभा जी के आश्रम में एक विशाल भंडारे के आयोजन को देखा। उस भंडारे में तुलसीदास जी के लिये न तो उपयुक्त बैठने का स्थान था, न प्रसाद पाने का पात्र। पूड़ी तो उन्होंने हाथ में ली तथा खीर के लिये एक भक्त के जूते को धोकर पात्र बनाया। **"ताके पांव की पगतरी, मेरे तन की चाम"** पद की रचना भी उन्होंने उसी पर की। बाद में जानकारी मिलने पर नाभा जी ने तुलसीदास जी को दण्डवत प्रणाम करके स्वागत किया तथा अपने भक्तमाल का उनको सुमेरू बनाया।

जैसे-जैसे समय बीतता गया नाभा जी महाराज की ख्याति चारों दिशाओं में फैलती गयी। उनकी ख्याति से प्रभावित होकर जयपुर की महारानी उनके दर्शनार्थ उनके पास आयीं। महारानी

के आगमन का समाचार प्राप्त होने पर नाभा जी महाराज से उनको बैठने के लिये कहलवाया। अवकाश प्राप्त होने पर महाराज जी ने महारानी ने भेंट की तथा उनके आगमन का कारण पूछा। महारानी ने भक्त प्रवर से अपनी अपार संपदा के बदले में शांतिमय धार्मिक जीवन की याचना की। कहा जाता है कि नाभा जी ने महारानी के हृदय परिवर्तन से संतुष्ट हो उनको भक्तमाल भेंट की। महारानी के हीरे जवाहरातों के ढेर को देखकर शिष्यों ने कहा महाराज जी इतनी बड़ी सम्पत्ति लेकर आप क्या करेंगे। महाराज जी ने इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया, जबकि कुछ शिष्यों ने सोचा अवश्य इस सम्पत्ति से एक भव्य मंदिर का निर्माण हो सकता है। दूसरे दिन नाभा जी महाराज ने आश्रम की चारों दिशाओं में स्थित अभावग्रस्त ग्रामवासियों को आमंत्रित कर प्रसाद वितरण किया तथा सहायतार्थ धन भेंट किया। इसको **"त्याग का भी त्याग"** संज्ञा देना उपयुक्त होगा।

ऐसे थे भक्तमाल के रचयिता भक्त प्रवर नाभा जी महाराज।

●

हे प्रभो

—परिव्राजक

1. प्रतिकूल समय में सुन्दर जीवन जीने की कला हे प्रभो सिखा दो।
2. जब सभी आशाओं पर पानी फिर जाय उस परिस्थिति में भी हास्य एवं आनन्द में रहने की कला हे प्रभो सिखा दो।
3. क्रोध उत्पन्न करने वाली परिस्थिति में भी शांत रहने की कला हे प्रभो सिखा दो।
4. कठिन कामों में भी हिम्मत न हारने की कला हे प्रभो सिखा दो।
5. प्रतिकूल आलोचनाओं में उपयोगी बातों को ग्रहण करने की कला हे प्रभो सिखा दो।
6. प्रलोभन, प्रशंसा तथा लालच के अवसर पर भी तटस्थ रहने की कला हे प्रभो सिखा दो।
7. चारों ओर से विपत्ति के काले बादलों से घिर जाने पर भी धैर्य तथा आपमें आस्था बनी रह सकने की कला हे प्रभो सिखा दो।

●

धर्म के दोहे

[डॉ. प्रेम नारायण सोमानी से प्राप्त]

धर्म जगत का ईश है, धर्म ब्रह्म भगवान ।
धर्म सदा रक्षा करे, धर्म बड़ा बलवान ॥
रक्षा कर तू धर्म की, यदि रक्षा की चाह ।
सत्य धर्म को छोड़कर, और न शरण पनाह ॥
जिससे मन निर्मल बने, उसमें सबका श्रेय ।
निजहित परहित सर्वहित, यही धर्म का ध्येय ॥
मंगल पथ है धर्म का, करे जगत कल्याण ।
कदम कदम जो भी चले, पावे पद निर्वाण ॥
धर्म हमारा बंधु है, सखा सहायक मीत ।
चलें धर्म की रीत ही, रहे धरम से प्रीत ॥
दुखियारों से जग भरा, सुखिया दिखे न कोय ।
धर्म जगे तो सुख जगे, दुखिया रहे न कोय ॥
मन आकुल व्याकुल रहे, जब जब जगे विकार ।
शांति जगाए चित्त में, धर्म गंग की धार ॥
धर्म मिला तो कट गए, अपराधों के फन्द ।
मानस आलोकित हुआ, मेघ मुक्त ज्यों चंद ॥
सम्प्रदाय की बेड़ियां, जात पाँत जंजीर ।
धर्मचक्र से कट गई, दूर हुई भवपीर ॥
धर्म सदा मंगल करे, धर्म करे कल्याण ।
धर्म सदा रक्षा करे, धर्म बड़ा बलवान ॥

मेरी दीक्षा

—अयोध्या प्रसाद दीक्षित

गुरु पूर्णिमा, १९९९

यह अलौकिक घटना उन्हीं दिनों की है जब मैं देहरादून में जिला मैजिस्ट्रेट के पद पर था (१९६१-१९६५) उस समय माँ देहरादून में दीर्घ काल तक लगातार कई महीने रहती थीं । यद्यपि विशेष अवसरों पर आश्रम के उत्सवों में तो मैं माँ के चरणों में सपरिवार जाता ही था । वैसे प्रायः प्रति दिन सायंकाल सरकारी कार्य समाप्त होने पर अवश्य जाता था और पौने नौ बजे के पन्द्रह मिनट के मौन के पश्चात् वापस लौटता था ।

माँ अधिकतर किशुनपुर आश्रम विश्व मन्दिर में होती थीं । यद्यपि माँ के दर्शनों से किसी मातृ भक्त को कभी तृप्ति नहीं होती पर उन दिनों माँ किशुनपुर के सत्संग हाल में काफी देर तक बैठती थीं इसलिये मातृ दर्शन और सत्संग से बहुत संतोष होता था । मैं हाल की बाईं ओर की खिड़की के पास दीवाल के सहारे बैठता था । सामने चौकी पर बैठी हुई माँ के दिव्य दर्शन होते थे । माँ भी बराबर हमें देखती रहती थीं । अन्य लोगों की पीठ मेरी ओर होने के कारण वह मुझे नहीं देख सकते थे । शीघ्र ही दिन भर की सरकारी समस्याओं की उलझनें लोप हो जाती थीं । मन शान्त हो जाता था । शरीर के अहंकार का मान समाप्त हो जाता था । मन माँ के दर्शनों के दिव्य आभास के योग्य हो जाता था । एक अकिंचन जीव का भाव शेष रहता था जो 'पूर्ण ब्रह्म नारायण' के चरणों में बैठा है शान्ति, प्रेम, आनन्द के सागर में निमग्न । यह श्री श्री माँ की अहैतुकी कृपा का फल था ।

ऐसे ही एक दिन, इसी अवस्था में मैं बैठा एक टक माँ के दिव्य दर्शन कर रहा था । संभवतः जहाँ तक मुझे स्मरण है अक्षय तृतीया का पवित्र दिन था माँ ने इशारा करके कुछ सफेद लिफाफे मंगाये । शायद पाँच या सात लिफाफे थे । एक-एक करके माँ ने कुछ लोगों को बुलाया और एक-एक लिफाफा दिया । उसी क्रम में मुझे भी बुलाया और एक लिफाफा दिया । मैंने लिफाफा लेकर माँ को प्रणाम किया और आकर अपने स्थान पर चुपचाप बैठ गया । मैंने लिफाफा खोल कर देखा उसमें एक मंत्र था जो सफेद कागज पर रक्त चन्दन से लिखा हुआ था । मंत्र मैं जानता था । मैंने लिफाफा जेब में रख लिया । अपने अज्ञान में मैंने इसे एक साधारण घटना समझा ।

एक अन्य दिवस जब हम इसी प्रकार सत्संग हाल में बैठे माँ के दर्शन कर रहे थे तो माँ किसी प्रसंग में बता रही थीं दीक्षा कितने प्रकार की होती है : 'स्पर्श से होती है, दृष्टि से होती है, स्वप्न में होती है आदि-आदि । सद्‌गुरु की प्राप्ति दुर्लभ है । सद्‌गुरु परमेश्वर का ही रूप होता है । माँ यह सब बताते हुये मातृ भक्तों की ओर देख रही थीं । इसी क्रम में मेरी ओर देखा । मैं उस दृष्टि

से विभोर हो गया। दृष्टि हटते ही मैं चौंक पड़ा "अरे यह तो मेरी दीक्षा हो गई। मंत्र पहले ही मिल चुका था।"

रात भर मैं आनन्दातिरेक अवस्था में रहा। दूसरे दिन मैंने उस मंत्र का जाप प्रारम्भ किया। और माँ की अहैतुकी कृपा का आभास और असर मुझे अनुभव होने लगा।

फिर मैंने देखा कि आश्रमों में दीक्षा एक विशेष विधि के अनुसार होती है जो स्वामी भास्करानन्द द्वारा दी जाती है। इससे मुझे अपनी दीक्षा की प्रामाणिकता पर सन्देह होने लगा। पर मन को दृढ़ निश्चय था कि मेरी दीक्षा स्वयं माँ के द्वारा हो चुकी है। गुरुकरण केवल एक बार होता है। मंत्र जाप करते समय भी कभी-कभी यह संदेह कौंध जाता था और मैं दुखी हो जाता था।

एक बार मैंने सोचा मैं माँ से इस विषय में पूछूँ। पर मन ने यह आशंका प्रकट की कि यदि कहीं माँ ने कह दिया कि आश्रम की पद्धति के अनुसार दीक्षा और किसी से लो तो मैं 'वड़े असमंजस में पड़ जाऊँगा क्योंकि साक्षात' पूर्ण ब्रह्म नारायण' से दीक्षा प्राप्त करने के पश्चात अव और किस से दीक्षा ली जा सकती है?

कई बार माँ से पूछने के लिये सोचा। पर सम्मुख बैठे होने पर भी शब्द मुँह से नहीं निकले। इस प्रकार समय बीतता गया। मंत्र जाप चलता रहा और इसका सबल प्रभाव भी जीवन में स्पष्ट दिखाई देता रहा। परिवार में और सरकारी नौकरी में कठिन समस्यायें सरलता से सुलझती चली जातीं। अनेक झंझटों के बावजूद आध्यात्मिक प्रगति भी महसूस होती रही। उच्च कोटि के सन्तों के अनायास ही दर्शन होते रहे। माँ की स्मृति निरन्तर रही यद्यपि दर्शन कभी ही कभी हो पाते थे खास तौर से जब मैं लखनऊ सचिवालय में तैनात था। नौकरी में ईमानदारी का कठोर व्रत वड़ी आसानी से निभता चला गया। सभी वर्ग के लोग जो संपर्क में आते स्नेह और आदर से देखते। हर पद पर निरन्तर सफलता मिली। यह सव माँ की अहैतुकी कृपा के अतिरिक्त और कुछ न था।

इस प्रकार १९८२ आ गया। माँ अव्यक्त में प्रवेश कर गईं। सेवा निवृत्ति के पश्चात मैं माता जी द्वारा प्रदत्त, अभिषिक्त देहरादून के आनन्द भवन में आ गया। पूजा करते समय विशेष रूप से मंत्र जाप करते समय दीक्षा की बात कभी-कभी अव भी खटकती थी। पर अव किस से पूछं और उससे लाभ भी क्या था।

इसी प्रकार की मनोदशा में एक रात ब्रह्म मुहूर्त्त में मैंने स्वप्न में देखा। गंगा जी के तट पर मैं बालू पर खड़ा हूँ। एक ओर गंगा जी की धारा है और दूसरी ओर ऊँचा कगार। अचानक उसी ऊँचे कगार पर माँ प्रकट हो गईं। वही धवल वस्त्र। वही काले केश। वही जाज्वल्यमान मुख मंडल। मैं आनन्दातिरेक में विह्वल हो गया। माँ ने उसी ऊँचाई से थोड़ा झुक कर प्रेममयी वात्सल्य युक्त वाणी में कहा "वह दीक्षा तो थी ही और क्या।" इतना कह कर माँ विलीन हो गईं। मेरी छटपटाहट में नींद खुल गई। मैं धन्य हो गया। अव मुझे किसी से पूछना शेष नहीं।

जय गुरु जय माँ जय जय माँ।

●

माँ आनन्दमयी आश्रम

—मोहन लाल आर्य

श्री माँ आनन्दमयी इस युग की एक अनुपम विभूति थीं । वे नित्यमुक्त थीं, शक्ति-स्वरूपा थीं, जगजननी थीं और जन्म से ही पूर्ण ज्ञान सम्पन्न थीं । जिस स्थिति में थीं उस स्थिति को पाने के लिये न तो उन्हें जप तप करना पड़ा था और ना ही ध्यान-धारण । माँ पूर्ण-काम थीं– उनकी कोई इच्छा-अनिच्छा नहीं थी । जो होना होता था वह स्वयं हो जाता था । माँ ने किसी से दीक्षा नहीं ली थी । वे अद्‌भुत थीं, अद्वितीय थीं । एक महापुरुष ने कहा है कि माँ के दर्शन मात्र से १८ लाख गायत्री मंत्र के जप के बराबर फल मिलता था ।

माँ को किसी आश्रम की कोई आवश्यकता नहीं थी । इसीलिये न तो उन्होंने कोई आश्रम बनवाया और न बनाने के लिये कहा । लेकिन उनके भक्त उन्हें केन्द्र बनाकर आश्रम बनाते रहे जिससे कि उन्हें माँ का सान्निध्य मिलता रहे और उनकी साधना चलती रहे । पूरे देश भर में माँ के कुल ३५ या ३७ आश्रम हैं । इन आश्रमों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है । एक श्रेणी उन आश्रमों की है जिनमें आध्यात्मिक क्रिया-कलापों के साथ-साथ समाज-सेवा का कार्य भी चलता है । ऐसे आश्रमों के साथ अस्पताल जुड़े हैं, विद्यालय जुड़े हैं, इनकी देख-रेख में दुग्ध-वितरण होता है, अन्न-क्षेत्र चलता है । दूसरी कोटि के वे आश्रम हैं जिनमें केवल आध्यात्मिक क्रिया-कलाप होते हैं । विन्ध्याचल का आश्रम इसी श्रेणी में आता है ।

विन्ध्याचल पहाड़ पर महाराज काशी नरेश द्वारा दान दी गयी २९ बीघे जमीन पर माँ का आश्रम है । इसकी स्थापना सन् १९२९ में हुई थी । यह एक अति विशिष्ट आश्रम है । माँ इसकी बड़ी प्रशंसा करती थीं । यह एक बहुत ही जागृत स्थान है । जिस भी साधक में थोड़ी सी आध्यात्मिक चेतना है वह इस स्थान पर अनेक प्रकार का अनुभव करता है । उसे रोमांच होने लगता है । उसके मन का भाव बदलने लगता है । उसके इष्ट मंत्र का जप चलने लगता है । इसीलिये माँ अपने भक्तों को, अपने साधकों को यहाँ साधना करने के लिये भेजा करती थीं । भोला नाथ जी, भाई जी, स्वामी अखण्डानन्द, स्वामी तुरीयानन्द, स्वामी परमानन्द, स्वामी भास्करानन्द, स्वामी गुरुप्रिया महाराज एवं विश्व प्रसिद्ध विद्वान, महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज जैसे महापुरुषों ने यहाँ रहकर जप-तप किया था । इसीलिये यह स्थान आध्यात्मिकता से 'सरचार्ज्ड' (Surcharged) है ।

कहा जाता है कि प्राचीन विन्ध्यवासिनी देवी का मन्दिर इसी आश्रम के स्थान पर स्थित था । काला पहाड़ के आक्रमण से देवी के विग्रह को बचाने के लिये देवी के पुजारियों ने देवी की मूर्ति को वहाँ से हटा कर, उस स्थान पर जहाँ आज मन्दिर है, गंगा जी में छिपा दिया था । उस समय गंगा उसी स्थान से होकर बहती रही होंगी । इसीलिये आश्रम पर विन्ध्यवासिनी देवी का प्रभाव आज भी अनुभव में आता है ।

आश्रम परिसर में कई भवन हैं । जिसमें माँ रहा करती थीं वही भवन आश्रम का मुख्य स्थान है । जब उस भवन के लिये नींव खोदी गयी थी तब खुदायी में नर-मुण्ड मिले थे, त्रिशूल मिले थे, कमण्डलु मिले थे । माँ ने बताया कि दशनामी सम्प्रदाय के साधुओं की यह साधना-स्थली थी । आश्रम पर उनकी साधनाओं का भी सूक्ष्म प्रभाव है ।

माँ के आश्रम में एक बहुत बड़ा सा चबूतरा है । इसका भी एक इतिहास है । माँ ने बताया था कि एक दिन बहुत से देवी-देवता सूक्ष्म रूप से प्रकट हुये और माँ से कहा कि हम लोग जमीन के भीतर दब कर बहुत कष्ट पा रहे हैं । हमारा उद्धार करें । उन दिनों एन. सी. चटर्जी मीरजापुर के डी. एम. थे । वे माँ के भक्त थे । माँ ने देवताओं वाली बात की चर्चा की । उससे प्रेरित होकर चटर्जी साहब ने सन् १९५५-५६ में उस स्थान की खुदाई करायी थी । उस खुदाई में बहुत सी मूर्तियाँ निकली थीं जो आज भी लखनऊ के संग्रहालय में रखी हैं । उसी स्थान पर चबूतरा बना दिया गया है । उस स्थान का भी सूक्ष्म प्रभाव आश्रम पर है ।

माँ के आश्रम की जमीन पर एक चबूतरा है जिसे षष्ठी देवी का चबूतरा कहते हैं । वह भी आश्रम का एक अंग है । वह भी बहुत जागृत स्थान है । माँ कभी-कभी वहाँ बैठती थीं और भक्तों को ध्यान कराती थीं । ध्यानकर्ताओं को अजीब-अजीब अनुभव हुआ करते थे । यहाँ एक युवा योगी अभी भी सूक्ष्म शरीर में रहते हैं । माँ ने उन्हें देखा था । उनके रूप रंग का वर्णन किया था । आज भी वहाँ बैठकर ध्यान करने पर गैरिक वस्त्र की आभा मिलती है । किसी को पूर्णरूप से दर्शन भी देते हैं ।

एक सज्जन पहली बार मेरे साथ आश्रम गये । उन्होंने ब्रह्मचारी जी से पूछा "क्या कोई महापुरुष यहाँ सर्प रूप में विद्यमान हैं'? ब्रह्मचारी जी ने कहा "हाँ, हैं तो! लेकिन आप को कैसे पता चला"? वे बोले– 'सामने जो पेड़ खड़ा है उसी की एक डाल को एक सर्प अपनी पूँछ से लपेटे है । वह फन फैलाकर डाली के साथ झूम रहा है । उसके फन पर किसी संन्यासी का मुण्डित मंडल देख रहा हूँ ।" ब्रह्मचारी जी ने उत्तर दिया– 'हाँ, मैंने सर्प का दर्शन कियां है । माँ कहती थीं कि एक योगी सर्प रूप में किसी-किसी को दिखायी पड़ते हैं ।"

माँ के आश्रम में एक गुफा है । सीढ़ियों से उतर कर उसमें जाना पड़ता है । आवश्यकता पड़ने पर सीढ़ी को पटरे से ढँक दिया जाता है । यह गुफा एक अण्डर-ग्राउण्ड ६ फीट लम्बे और ६ फीट चौड़े कमरे के रूप में हैं । इसमें एक पत्थर पर माँ के दोनों चरण चिन्ह खुदे हैं । वहीं पर एक शिवलिंग भी स्थापित है । यह बहुत ही जागृत स्थान है । वहाँ ध्यान करने वालों को बड़ी जल्दी ध्यान लग जाता है ।

माँ के आश्रम में एक यज्ञशाला है । इसके बीच में लगभग १० फुट लम्बा तथा १० फीट चौड़ा एक हवन कुण्ड है । इसमें सन् १९३६ में माँ ने एक यज्ञ कराया था जिसके लिये यज्ञ-अग्नि को तारापीठ से मँगवाया था । उस यज्ञ में गायत्री मंत्र के साथ एक लाख आहुतियाँ दी गयी थीं ।

बड़े चबूतरे के पास 'पंचवटी' है जिसमें आँवला, बेल, बरगद, पीपल तथा अशोक के वृक्ष हैं । पीपल का पेड़ अब सूख गया है ।

माँ कहती थीं कि वर्तमान विन्ध्यवासिनी देवी, काली खोह तथा अष्टभुजा देवी के मन्दिरों से जो त्रिकोण बनता है यह आश्रम उसके केन्द्र पर स्थित है ।

माँ को यह स्थान बहुत प्रिय था । वे प्रायः यहाँ आया करती थीं । विश्राम के लिये या अज्ञात वास के लिये वे प्रायः इसे चुनती थीं । वे कहती थीं कि यह बहुत ही दिव्य स्थान है । एक बार जब माँ यहाँ थीं तब मिसेज गाँधी उनके दर्शन करने आयी थीं । कमला नेहरू, इन्दिरा जी, राजीव गाँधी सभी उनके भक्त थे । इन्दिरा गाँधी जो रूद्राक्ष की माला पहनती थीं, वह माँ की दी गयी माला थी ।

इस आश्रम का ऐतिहासिक महत्व भी है । प्रथम 'गीता जयन्ती' यहीं मनायी गयी थी । द्वितीय 'संयम सप्ताह' भी यहीं हुआ था । माँ की जन्म शताब्दी के कार्यक्रमों का एक अंश यहाँ भी हुआ था । उस कार्यक्रम के अन्तर्गत यहाँ पर शत चण्डी का पाठ हुआ था, श्रीमती मालती भार्गव की पार्टी के द्वारा संगीतमय अखण्ड रामायण हुआ था । साधु संतोंका समागम हुआ था जिसमें 'डिवाइन लाइफ सोसाइटी' (Divine Life Society) के अध्यक्ष स्वामी चिदानन्द जी महाराज भी पधारे थे । दूर-दूर से माँ के भक्तों ने भी भाग लिया था जिसमें इलाहाबाद हाईकोर्ट के सेवा निवृत्त चीफ जस्टिस न्यायमूर्ति अमिताभ बनर्जी तथा उसी हाईकोर्ट के वर्तमान न्यायाधीश माननीय पुलक बसु महाशय रहे हैं ।

आध्यात्मिक पृष्ठभूमि के साथ साथ लौकिक दृष्टि से भी यह स्थान अनुपम है । आश्रम की छत से देखने पर आस-पास का विहंगम दृश्य (Panormic view) दिखायी पड़ता है । दूर-दराज की सड़कें साँपके केंचुल सी लगती हैं । आने-जाने वाली ट्रेनें खिलौने-सी मालूम पड़ती हैं । सुवह मोर की आवाज सुनायी पड़ती है । रात में छत से विन्ध्याचल के जगमगाते प्रकाश को देखना ऐसा लगता है जैसे कोई मंसूरी से देहरादून को देख रहा हो ।

आध्यात्मिक रुचि रखने वाले महानुभावों से मेरा विनम्र निवेदन है कि वे माँ के इस पवित्र आश्रम पर एक बार अवश्य जायँ । इससे उनकी साधना में बड़ा लाभ होगा । हो सकता है माँ की कृपा का उन्हें भी प्रत्यक्ष अनुभव हो जैसा कि मेरे एक मित्र को हुआ था । वे पहली बार गये थे और माँ के कमरे में बैठकर भाव विभोर होकर भजन कर रहे थे । उन्हें प्रत्यक्ष रूप से लगा कि कोई उनके सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दे रहा है । आँख खोल कर देखा तो वहाँ कोई नहीं था । ब्रह्मचारी जी कहते हैं कि यह माँ की लीला भूमि है । माँ सूक्ष्म रूप में यहाँ सदैव विद्यमान रहती हैं ।

●

नोटः— विन्ध्य महोत्सव से साभार ।

आनन्दमयी स्मृति

– ब्र. चित्रा घोष

२४ अगस्त १९५८

आज झूलन प्रारम्भ हुआ । सांय काल से सब ठाकुरजी झूले पर बैठे । श्री श्री माँ के ख्याल के अनुसार झूला सजाया गया है । पहले दिन दोनों ओर दाल की अलपना सामने गेरुए चादर के चारों ओर टगर के पत्ते तथा टगर (बड़ी चाँदनी) के फूल तथा बीच में गुलान के पत्तों से सजाया गया ।

२५ अगस्त

माँ ने कहा, इस बार का उत्सव चित्रा के ठाकुर जी को उपलक्ष्य करके मनाया गया । चित्रा ठाकुर लेकर आयी ख्याल हुआ, उसी से ही इतना करना हो गया ।" माँ ने अपने हाथों से जब सजाया । सब प्रारम्भ कर दे रही थीं सुशील (सत्यानन्द, इटली) अनुकरण कर रहा था । आज टगर के गलीचे को झूले के नीचे कर दिया गया, सामने अलपना, (बंगाल में दी जाने वाली रंगोली) अल्पना के किनारे तथा भीतर गुलाब की पँखुड़ियाँ दी गयीं, दो तरह के गुलाब थे, लाल तथा गुलाबी ।

२६ अगस्त

आज भाईजी का तिरोधान उत्सव है । उदयास्त (सूर्योदय से सूर्यास्त) माँ नाम का कीर्तन हुआ । झूले की सजावट आज बदल दी गयी । यह सभी श्री श्री माँ के निर्देश से हो रहे हैं । पीली व लाल चौखट वाली साड़ी झूले के दोनों ओर से झूल रही है । झूले के सामने पीढ़ी उस पर सिंहासन रखा गया है । सामने कपड़े से फ्रिल की डिजाईन की गई है । आज चीन देशीय कला एवं झालरों से चारों ओर सजाया गया है । भाईजी के तिरोधान के उपलक्ष्य में आश्रम में भण्डारा हुआ । शाम को भाषण हुए । श्री श्री माँ की उपस्थिति में नारायणस्वामी, कमलाकान्तदा, रणदा, एवं योगीमाई ने भाई जी के बारे में विचार व्यक्त किये ।

२७ आगस्त

आज पीछे नीले पर्दे के बीच में सफेद कपड़े पर उँ और कमल बनाया गया । कागज के फूलों से और टगर के पत्तों के बॉडर व गुलाब की पँखुड़ियों से मार्ग बनाया गया । झूले के पीछे रस्सी के दोनों ओर पीली साड़ी दी गयी । कमरबन्द की तरह लाल, नील और गुलाबी पट्टियाँ दोनों ओर दी गयीं । झूले को ऊँचा करने से बहुत ही सुन्दर लग रहा था ।

२८ आगस्त

आज माँ की दीक्षा का दिन है मैंने शाम को माँ को तुलसी मंजरी तथा टगर की मोटी माला पहनायी । माँ ने तीनों दिन ही मुझे माला दी थी । माँ के बायें हाथ में पीले गुलाब की रिबन की राखी बाँधी । माँ को सरदार जी की पत्नी ने इन दिनों रोज ही फूल के मुकुट पहनाये और सजाया । आज सुशील ने माँ के तख्तपोश के सामने रंग से अल्पना दी, माँ को सुनहरे आँचल की सफेद बनारसी ओढ़ायी गयी, माथे पर सोने के जल चढ़ाया गया चाँदी का भारी मुकुट, पैरों में पायजेब, गले में सोने का हार दिया गया, लखनऊ से सरदारजी द्वारा लाये गये मेरुन मखमल पर जरी का तकिया और गलीचे पर माँ को विराजित किया गया । चारों ओर रंग बिरंगे फूलों की मसहरी लगायी गयी । आज रात ९ बजे से ११:४५ तक कीर्तन हुआ । ११:४५ से १२:१५ मध्यरात्रि के पौने बारह से सवाबारह तक माँ के सामने ध्यान हुआ । उसके बाद माँ ने सबको राखी बाँधी एवं मिठाई दी । शाम को जब मैं माँ के हाथों से राखी खोल रही थी तब माँ ने मेरे हाथों में राखी बाँध दी थी ।

२९ आगस्त

वैष्णवों के मत में आज भी झूलन है । इसीलिये माँ को कल के श्रृंगार से सजाया गया । आज फलों की रस्सी झूले पर टाँगी गयी । इसी रस्सी से तोड़ कर माँ ने सबको फल दिये । शाम को माँ श्रीमती खन्ना के नये मकान में पधारीं । माँ को बिड़ला मन्दिर भी ले जाया गया ।

३१ आगस्त

आज सुबह माँ श्री बी. एन झा के घर, शान्ता के बड़े भाई के नये घर तथा श्री हूण के घर पर पधारीं । मैं माँ के साथ माँ की ही मोटर में ही थी । रास्ते में एक अस्वस्थ व्यक्ति मुँह के बल पड़ा हुआ था । यह देख श्री श्री माँ ने मोटर रोककर उसे माँ के सिर पर रखे जाने वाला गीला तौलिया दिया । हम लोग आज माँ के निर्देश से वाराणसी लौट जा रहे हैं ।

दिल्ली के सत्संग में माँ ने एक दिन कहा, "आजकल तुमलोग सोशल वेलफेयर इत्यादि जो काम की बातें कहते हो, वह पतिङ्गे की गति है । पतिंगा बत्ती देखकर दौड़ता है बाद में निःशेष हो जाता है । "सोशल वेलफेयर" लगता है कि भगवान् के लिये काम कर रहे हैं परन्तु उसमें स्वार्थ लिप्त रहने के कारण वास्तव में भगवान के पथ पर जाना नहीं होता है ।

●

गुजरात की यादें

(गतांक से आगे)

—ब्र. गुणीता

२२ अप्रैल, १९९९

आज प्रातः गोंडल के सिद्धपीठ भुवनेश्वरी देवी के मंदिर दर्शनों को हमें ले जाया गया। शहर के मध्य देवी का विशाल मंदिर है। गर्भगृह में संगमरमर की चतुर्भुज प्रतिमा विद्यमान है। देवी के नेत्रों की करुणा एवं मुखारविन्द पर मधुर मुसकान शरण में आये हुये भक्तों के सारे शोक ताप को दर्शन मात्र से हर लेती हैं। माथे पर रजत मुकुट चमक रहा था। आरती के समय भक्तों से मंदिर प्रांगण भर गया। ऐसी मान्यता है कि आरती के समय देवी का छत्र स्वयं हिलोरे लेता है। हमने भी देखा कि नगाड़ों की ध्वनि के साथ छत्र धीरे धीरे हिलने लगा।

आरती दर्शन के उपरान्त हमने पास ही विश्वनाथ मंदिर के दर्शन किये। भव्य मण्डप है नीचे उतर कर गुफा में भगवान् शंकर का बहुत ही सुन्दर दीर्घकाय कालेरंग का लिंग है। लिंग पर शंकर जी की भव्य प्रतिमा भी बनी हुई है, जो एक विरल चीज है। हमने शंकर जी को जल आदि चढ़ाया।

हमारे पास समय अधिक नहीं था कथा में भी योगदान करना था। हम शीघ्रातिशीघ्र यहाँ का मुख्य दर्शनीय स्थल "अक्षर मंदिर" का दर्शन करने गये।

गोंडल के मुख्यमार्ग पर अवस्थित "अक्षर मंदिर" में प्रवेश करते ही एक अनोखी अनुभूति होती है। आँखों के सामने शुभ्रता, स्वच्छता, निर्मलता का साक्षात् मूर्तिमान् स्वरूप भगवान् स्वामिनारायण परम्परा का प्रासादनुमा पंचशिखरों वाला जगमगाता भव्य मंदिर प्रस्फुटित हो उठता है। संगमरमर की शुभ्र धवल सीढ़ियों पर माला जपते हुये, या पुस्तिका में भगवन्नाम लिखते हुये श्रद्धावनत नर नारी दृष्टि गोचर होते हैं।

हम एक संगमरमर की दीर्घा से भीतर प्रवेश करते हैं, यह अक्षर ब्रह्म गुणातीतानंद जी का समाधि स्थल है, जिसके चारों ओर वृद्ध युवा बालक नर-नारी हाथ में माला लेकर अति द्रुत गति से चक्राकार घूमते जा रहे हैं। शायद उन्हें १०८ परिक्रमा पूरी करनी है। कितने ही ऐसे भक्त होंगे जिनकी नित्य की यह सेवा होगी। इन भक्तों में आधुनिक परम्परा में पलने वाले युवक युवतियों की संख्या कम न थी। नाम स्मरण की ऐसी परम्परा पहले देखने में नहीं आई थी। समाधि का दर्शन कर हम ऊपर गये। ऊपर पृथक् पृथक् गर्भगृह में विभिन्न मूर्तियाँ अपने जगमगाते श्रृंगार से दर्शनार्थियों के प्यासे नेत्रों की प्यास बुझा रही थीं। मध्य में नर नारायण की मूर्तियाँ। बायी ओर साँवरे सलोने घनश्याम जी, तथा दाहिनी ओर पुरुषोत्तम महाराज की मूर्ति है। मण्डप की छत पर भगवान् स्वामिनारायण परम्परा के तैलचित्र अंकित हैं।

मंदिर दर्शन के अनन्तर हमलोग नीचे उतर आये, हमारे साथ स्वामी भास्करानन्दजी थे । आप को संन्यासियों के डेरे पर ले जाया गया, जिस ओर संन्यासीगण रहते हैं उसकी चहारदीवारी तक भी महिलाओं का जाना निषिद्ध है । हमलोग थोड़ी देर तक प्रतीक्षा करते हैं । भास्करानन्दजी के आने पर हम संग्रहशाला देखने गये ।

पूर्ण हरियाली के बीच अत्याधुनिक कलाकृति का प्रस्तर निर्मित एक विशाल भवन है, जहाँ पर ब्रह्मस्वरूप शास्त्री जी महाराज, और ब्रह्मस्वरूप योगी जी महाराज की समाधि विराजमान है । इस भवन से बाहर निकल कर सामने ही सुन्दर सोपान परम्पराओं से होते हुए हम संग्रहशाला में आये यहाँ पर बड़े सुन्दर ढंग से स्वामिनारायण परम्परा के महात्माओं के चित्रों के सहित, काँच की पृथक्-पृथक् बृहत् पेटिकाओं में उनकी व्यावहारिक वस्तु सामग्री संजों कर रखी हुई है । अवश्य ही यह दर्शनीय एवं शिक्षणीय है । सब दर्शने करते-करते हमें देर हो गयी थी । कथा प्रारम्भ हो चुकी थी हवामहल पहुँचते ही हम कथा मण्डप में जाकर पहुँचे ।

व्यासासन पर विराजे कथावाचक श्री भूपेन्द्र पांड्याजी ने शकटासुरवध, चीरहरण, गोवर्धन धारण आदि लीलाओं का बड़ा सुन्दर वर्णन किया, आपने कहा, भगवान् ६ दिन के थे जब उन्होंने वृद्धाङ्गुष्ठ के ठोकर से सम्पूर्णशकट को पलट दिया था, ठाकुरजी पाँच वर्ष के थे तो चीरहरण लीला की, सातवर्ष की अवस्था में गोवर्द्धन धारण किया था । उनकी अपरम्पार शक्ति की कोई धारणा ही नहीं कर सकता । भगवान् की उक्त आयु सीमा महत्त्वपूर्ण गूटार्थों से भरी हुई है जिसकी विस्तृत वर्णना भी उन्होंने की । रासमहोत्सव का बड़ा ही सजीव चित्रण किया गया । सायंकाल रुक्मिणी विवाह के माध्यम से कथा समाप्त हुई । सौराष्ट्र की परम्परा में रुक्मिणी विवाह को बहुत महत्त्व दिया जाता है । इस अवसर पर सम्पूर्ण राज परिवार ने ठाकुर जी की आरती उतारी । कथा समाप्ति पर थी अतः दूर-दूर से आये सगे-सम्बन्धी रजवाड़ों की काफी भीड़ एकत्रित हुई थी ।

२३ अगस्त

कथा प्रायः दस बजे प्रारम्भ होती थी, अतः आज भी हम प्रातः दर्शनों को गये । आज का दर्शनीय स्थल था गोंडल राज्य परिवार की कुलदेवी आशपुरा देवी का मंदिर तथा गोंडल का दरबार घरा एक बड़े से बगीचे के भीतर प्राचीन परम्परा को संजोकर रखता हुआ यह मंदिर है । जहाँ देवी की सिंदूर विभूषित, वंस्त्रालङ्कारों से सुसज्जित मूर्ति है । मंदिर के द्वार पर विशाल ताला लगा हुआ है । सींखों के भीतर से दर्शन करना पड़ता है । पुजारी जी प्राप्तः काल पूजा करके चले जाते हैं । पास ही महाराज भोजराज की माता के द्वारा प्रतिष्ठित महादेवजी का मंदिर है । जहाँ एक शिवलिंग विराजमान है, तथा चिकने काले पत्थर की बहुत ही सुन्दर भवानी शंकर की मूर्ति है. मूर्ति की कलाकृति अत्यन्त सूक्ष्म एवं सजीव है । देवाधिदेव महादेव के अंक पर पार्वतीजी विराजमान हैं । मूर्ति के अंग प्रत्यंग लावण्य मंडित हैं । हस्तों की अभय मुद्रा है ।

आस पास बिल्वपत्र, कनेर आदि पूजनोपयुक्त पुष्पों के वृक्ष हैं । दूर से गोंडल नदी की धारा दृष्टिगोचर होती है । कुल मिलाकर स्थान की पवित्रता एवं गाम्भीर्य मन को आकर्षित करता है । श्री श्री माँ भी गोंडल पधारने के समय यहाँ पधारी थीं ।

यहाँ से हमलोग दरबार घर गये, । जहाँ का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है । विशाल परिसर में अपने प्राचीन राजवैभव को ढोता हुआ विशाल राजमहल विद्यमान है । वर्तमान महाराजा अपने नवीन बँगले में रहते हैं । दो एक सेवक इसकी देख रेख में नियुक्त हैं । पारावतों का यह निश्चिन्त स्थान है, जहाँ हजारों की संख्या में ये अपना दाना चुगते हैं । इस एकान्त जन-विरल स्थान में श्री श्री माँ के निर्मित बँगले में प्रतिदिन माँ के चित्र पर धूप दीप से आरती उतार कर फूल आदि से सजाया जाता है । श्री श्री माँ पर स्थानीय जनों की श्रद्धा भक्ति का भाव देख श्री श्री माँ की अपार महिमा का अनुभव कर हमारा हृदय भावाभिभूत हो गया ।

आज कथा की समाप्ति थी । हमलोग आकर कथा मण्डप में बैठे । भक्तवर विप्र सुदामा की कथा हुई । दत्तात्रेय के २४ गुरुओं का वर्णन, भगवान् की प्रभास लीला, उद्धव का बदरिकाश्रम गमन, तक्षक द्वारा राजापरीक्षित का दशन इत्यादि कथाओं के उपरान्त कथा की विश्रान्ति हुई । कथासमाप्ति पर मंच पर विराजमान कथा व्यासजी महाराज ने सबसे श्रीमद्भागवत के श्लोकों का उच्चारण कराया । भगवन्नाम का कीर्तन हुआ । वेदमत्रों के साथ कथा की समाप्ति हुई ।

कथा समापन के अनन्तर कीर्तन करते वेदोच्चारण करते हुये मंच पर से श्रीमद्भागवत को मस्तक पर धारण कर शोभायात्रा सहित सम्पूर्ण राजपरिवार तथा उपस्थित श्रोतागण श्री श्री माँ के कक्ष ओर चले जहाँ पर कलश स्थापित किये गये थे । श्री श्री माँ के सामने श्रीमद्भागवत को स्थापित कर पूजा अर्चना की गयी इस पूजा मण्डप में भी स्व. सौभाग्यवती रानी साहिबा लक्ष्मी देवी जी का चित्र विराजमान था । इस शोभायात्रा में कथाव्यास श्रीपंड्याजी भी उपस्थित थे । आज कथामण्डप में कथा समापन का अंतिम प्रणाम मंत्र उच्चारित होने के साथ श्री श्री माँ के चित्र पर दृष्टि पड़ते ही देखा कि एक शुभ्र श्वेत वर्ण की अत्यंत कोमल तितली श्री श्री माँ के ऊपर चढायी गयी पुष्पमालाओं से उड़कर श्रीमद्भागबत के ऊपर से ऊपर टँगे छत्र की ओर जाकर विलीन हो गयी । शायद ही इस दृश्य पर किसी किसी का ही ध्यानाकर्षण हुआ होगा । मन में कौंध गया, सौभाग्यवती रानी साहिबा के निमित्त किया गया यह पारायण सफल हुआ इसी को प्रमाणित करने के लिये शायद यह दृश्य उपस्थित हुआ था ।

श्री श्री माँ की कृपा से श्रीमद्भागवत पारायण सम्पूर्ण हुआ । कथा व्यास श्री पांड्या जी आज ही सायं काल बम्बई रवाना हुए । पू. भास्करानन्द जी नाडियाद होते हुये अहमदाबाद को रवाना हुये । आगामी कल हमलोग द्वारका की ओर रवाना होंगे ।

पाताल भुवनेश्वर की यात्रा

– देवेन्द्र बिनवाल

भारतवर्ष को विश्व में आध्यात्मिक संस्कृति का द्वार कहा गया है। भारत के उत्तर-प्रदेश राज्य में स्थित उत्तराखण्ड सुविख्यात पर्यटन स्थली एवं धार्मिक स्थानों के लिए विश्व प्रसिद्ध है। मध्य हिमालय की सुरम्य घाटी में बसे इस सुन्दर भू-भाग का नाम कूर्मांचल या कुमाऊँ होने के विषय में अनेक तथ्य नजर आते हैं। उत्तराखण्ड को दो भागों में विभक्त किया है कुमाऊँ एवं गढ़वाल। कुमाऊँ के बारे में यह कहानी कही गई है कि विष्णु भगवान का दूसरा कूर्मावतार या कछुए का अवतार हुआ तो वह चम्पानदी के पूर्व कूर्म पर्वत में तीन वर्ष तक खड़ा रहा। उस कूर्म अवतार के पद चिह्न पत्थर में हो गये, तब से इस का नाम कूर्माचल हो गया। कूर्मांचल का प्राकृतिक रूप बिगड़ते-बिगड़ते 'कू-कू' बन गया तथा स्थानीय भाषा में यह शब्द कूमाऊँ में बदल गया।

यह कुमाऊँ का सुरम्य अंचल अपनी प्राकृतिक सुन्दरता और धार्मिक विश्वासों के कारण प्रसिद्ध है। इस सुरम्य घाटी में अनेक आश्चर्यजनक गुफायें-स्थित हैं, जिनमें अनेक आश्चर्यजनक घटनायें सजीव चित्रित की गई हैं।

पिथौरागढ़ जिले में स्थित पाताल भुवनेश्वर सरयू एवं पूर्वी रामगंगा के बीच स्थित है। पाताल भुवनेश्वर के लिए दिनांक ७.६.९९ को अल्मोड़ा में स्थित माँ आनन्दमयी आश्रम-पाताल देवी के साधकगण एवं भक्तगण सुबह ७ बजे रवाना हुए। स्वामी जी श्री भास्करानन्द जी आदि 'महिन्द्रा जीप' पर एवं बाहर से आये हुए मेहमान 'वाइजर' टैक्सी पर सवार थे। कुल सोलह लोग थे, और ये लोग 'धौलछीना' नामक स्थान पर 'जमराड़ी बैंड' (एक गाँव का नाम) के माँ के भक्त श्री गुसाई सिंह के घर पर लगभग आधा घंटा रुकें, वहाँ पर फल, मिष्ठान्न लस्सी का भोग ग्रहण किया। उसके बाद वहाँ पर स्थित माँ आनन्दमयी विद्या मन्दिर भी गये और वहाँ से और तीन लोग सवार हो गये। अल्मोड़ा से धौलछीना की दूरी ३४ किमी. है।

धौलछीना से ये लोग गंगोली हाट की ओर रवाना हो गये। अल्मोड़ा से गंगोलीहाट की दूरी ११० किमी है। गंगोलीहाटमें काली माँ का मन्दिर है, जो कि शक्तिपीठ के रूप में विराजित है। पहले से शक्ति की ही पूजा होती थी, लेकिन लोग भावावेश (आक्रोश) में आकर इसका गलत उपयोग न करें, उन्होंने शक्ति के ऊपर यन्त्र स्थापित करवा दिया, और तब से आज तक उसी यन्त्र की पूजा होती है।

इसके बाद हम लोग पाताल भुवनेश्वर की ओर बढ़ते हैं। पौराणिक कथाओं में उत्तराखण्ड का वर्णन निम्न प्रकार से किया है–

"उदीचीदीपयन्नेष दिश तिष्ठतिवीर्यवान्
महा मेरुर्महाभाग शिवो ब्रह्मविदां गतिः ।।
यस्मिन् ब्रह्म सदात्रैव भूतात्मायैव तिष्ठति ।
प्रजापतिः सृजन् सर्वं यतकिंचिज्जङ्गमत्तयम् ।।

यह देखो सुमेरु पर्वत उत्तर दिशा में प्रकाशित हो रहा है, जहाँ केवल ब्रह्म ज्ञानियों की ही गति है । इसी पर्वत पर ब्रह्मलोक है, जहाँ पर सब चर-अचर जीवों को उत्पन्न करने वाले ब्रह्माजी रहते हैं ।

गंगोलीहाट से पाताल भुवेश्वर की दूरी १६ किमी० है । राम गंगा से ५ किमी० पश्चिम की ओर चारों तरफ से पर्वतों से घिरा मनोरम एवं मुग्ध करने वाला स्थान है । यह स्थान जिलामुख्यालय पिथौरागढ़ से ९१ किमी० की दूरी पर पड़ता है । समुद्र तल से पाताल-भुवनेश्वर की ऊंचाई १५५० मीटर है ।

पाताल भुवनेश्वर भुवनेश्वर ग्राम में स्थित है । यह गुफा पाताल में होने के कारण इसे पाताल भुवनेश्वर कहा जाता है । गुफा में पहुँचने के लिए जीप या गाड़ी से पहुँचा जा सकता है । भुवनेश्वर ग्राम में पहले वृद्ध भुवनेश्वर मंदिर के दर्शन होते हैं । मंदिर के परिसर में काल, नील एवं बटुक भैरव के अनेक छोटे-छोटे मन्दिर हैं । अब हमलोग पाताल भुवनेश्वर गुफा की ओर बढ़ते हैं, जो कि प्राकृतिक रूप से बनी हुई है, इसे धरती का स्वर्ग भी कहा जाता है ।

गुफा के बाहर से एक लोहे का गेट लगा हुआ है, जो कि बाद में लगाया गया है । गुफा का प्रवेश द्वार अत्यन्त संकीर्ण है । २ ३ फुट के द्वार के साथ खड़ी सीढ़ियाँ उतरनी पड़ती हैं । चट्टान पर काटी गई ८२ सीढ़ियों के साथ गुफा से उतरने के लिए लोहे की जंजीर दो तरफ से लगाई गई है । एक स्थान पर मुश्किल से रास्ता दो फुट चौड़ा है । जनरेटर सेट के द्वारा रोशनी की व्यवस्था की गई है । गुफा में सरक-सरक कर आगे की ओर बढ़ना पड़ता है । गेट से गुफा तक की दूरी लगभग ३० से ४० फुट के बीच पड़ती है । नीचे पहुँचने पर यह गुफा एक बड़े स्थान पर खुलती है, जो कि बहुत लम्बाचौड़ा व ऊँचा है ।

यहाँ पर (हॉलनुमा स्थान के) खड़े होकर गुफा के प्रवेश द्वार की ओर मुँह करके ऊपर देखने पर दायीं ओर छत का एक काफी बड़ा हिस्सा छतरी की तरह तना दिखायी देता है, जिसे शेषनाग का फन कहा गया है, जिस पर पूरी पृथ्वी टिकी हुई है । ऐसी पौराणिक मान्यता है । इससे थोड़ा और आगे बढ़ने पर अष्ट-कमलदल से निकलता जल गणेशजी के मस्तक पर गिरता है । प्राचीन कथाओं के अनुसार माता पार्वती स्नान के लिए गई हुई थीं । उन्होंने किसी को भीतर नहीं प्रवेश करने देने के लिए गणेश को द्वारपाल नियुक्त किया, लेकिन शिव के प्रयास करने व गणेश के रोक दिये जाने पर शिव को क्रोध आ गया, और उनको पता नहीं था कि गणेश उनका पुत्र है । दोनों

में भयानक युद्ध हुआ । शिवजी ने गणेश का सिर धड़ से अलग कर दिया, परन्तु बाद में पार्वती द्वारा अनुरोध करने पर शिवजी द्वारा कमल से अभिषेक कर गणेश का सिर जोड़ा था ।

इसके पास ही एक सुन्दर हवनकुण्ड स्थित है । इस हवनकुण्ड के बारे में पौराणिक कथा इस प्रकार है कि राजा जनमेजय ने अपने पिता परीक्षित के उद्धार हेतु सर्पेष्ट यज्ञ किया था । कुण्ड के ऊपर तक्षक नाग बना हुआ है, जिसने राजा परीक्षित को काट दिया था । इसी स्थान से शेषनाग की रीढ़ की हड्डी रास्ते में बनी प्रतीत होती है । इसके समीप ही केदारनाथ, बद्रीनाथ, अमरनाथ धाम लिगों के रूप में विराजमान हैं ।

इन लिगों के पास में ही भयानक रूप धारण किये हुए काल भैरव मुंह खोले हुए जीभ लटकती हुई लार टपकती हुई शोभा पाते हैं । इनके मुँह से पूँछ तक ब्रह्मलोक का मार्ग दिखाया है । गर्भ व पूँछ का मार्ग अत्यन्त संकरा है । मान्यता यह है कि यदि कोई मनुष्य मुँह से पूँछ तक चला जाय तो मोक्ष को प्राप्त हो जाता है । धीरे-धीरे कोशिश कर इसमें जाया जा सकता है । काल भैरव के अग्रभाग में भगवान शिव का आसन दिखाई पड़ता है । साथ ही साथ मुण्डमाला धारण किए हुए पाताल चण्डी एवं देवी के वाहन शेर का सिर दिखायी पड़ता है । आगे बढ़ने पर चार द्वार बने हैं । प्रथम द्वार को पाप द्वार की संज्ञा दी है, जो कि रावण की मृत्यु के बाद बन्द हो गया था । दूसरा रणद्वार जो कि महाभारत युद्ध के बाद बन्द हो गया था । तीसरा धर्मद्वार जो कि कलियुगी द्वार से भी जाना जाता है; जो सत्य युग की समाप्ति पर बन्द होगा, ऐसी पौराणिक मान्यता है । "स्कन्द पुराण के मानस खण्ड" में पाताल भुवनेश्वर के बारे में निम्न प्रकार से वर्णन मिलता है ।

"वल्कलाख्यो महादेव प्रकाशयति भूतलो ।
न गमिष्यन्ति मनुजास्तावत् पाताल मण्डले
सक्रियां देवदेवस्य वल्कलाख्यः करिष्यति ।
तदा प्रभृति मर्त्यानां गुहा गम्या भविष्यति ॥ ५०१ ॥

स्कन्द पुराण के अनुसार मोक्षद्वार में प्रवेश करने पर सांसारिक भोगों से छुटकारा मिल जाता है । मोक्षद्वार से आगे विशाल मैदान के मध्यभाग में पुष्पों व गुच्छों से निर्मित सुन्दर पारिजात वृक्ष स्थापित है । इस वृक्ष को द्वापर में भगवान श्रीकृष्ण देवराज इन्द्र की अमरावतीपुरी से मृत्युलोक में लाये थे । इसी मैदान के आगे कदलीवन नामक मार्ग है । इसी स्थान पर त्रेतायुग में हनुमानजी एवं अहिरावण के मध्य भयानक संग्राम हुआ था । हनुमानजी ने पाताल को विध्वंस किया था । यहीं पर एक गुफा पर मार्कण्डेय ऋषि तपस्या में लीन हैं । इसी स्थान पर उनके द्वारा मार्कण्डेय पुराण की रचना की गई ।

●

कैसा प्रेम तुम्हारा

— सीतारानी (मकड़ाई)

जन्म दिया क्यों, प्रभु, तुमने
क्यों भव में ले आये ।
शठ चित्त बहुत जना थे,
मुझ को भी ले आये !
रहता चरण कमल में तेरे,
वही निकेतन मेरा अपना ।
दर-दर ठोकर खाता फिरता,
सुख तो आज हुआ है सपना ।
ज्ञानी में नहीं गिनती मेरी,
दान नहीं स्वीकारा ।
रंग-मंच पर हँसी कराते,
कैसा प्रेम तुम्हारा ।
मुझ कुपात्र को रचकर, स्वामी,
तुम्हीं हँसी कराओ!
किससे कहूँ हे जीवन दाता,
आकर मुझे बचाओ !

●

शुभ-प्रस्थानी

प्रस्थानी शुभ के भई राही,
सार्थक जन्म करि ले ।
नियम-प्रेम के घुँघरु बाँधि,
अपना लक्ष्य लभि ले ।
अनुशक्ति जो सत्य अधारी,
प्रज्ञा बढ़े उसी की,
बंधन शुभ परित्यागी जन जो,
सफल न होय किसी में ।
बढ़ती है रफ्तार उसी की,
होते वही निष्णात
नियम साधि के उच्चाकांक्षी,
लेते जो प्रस्थान ।

●

आश्रम-संवाद

१. कनखल– १७ जुलाई से २४ जुलाई तक कनखल आश्रम में श्री श्री आनन्दमयी संघ के पूर्व सभापति श्री श्री माँ के अनन्य भक्त श्री बी. के. शाह तथा श्रीमती लीलावती शाह की पुण्य स्मृति में श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण आयोजित किया गया था। कथा-व्यास वृन्दावन के ब्रह्मचारी गिरीशानन्द जी थे। आप भागवत् सम्राट पू. स्वामी श्री अखण्डानन्द सरस्वती महाराज जी के शिष्य परम्परा के हैं। इस अवसर पर श्री. बी. के शाह की पुत्री श्रीमती सुनयना बेन, पति श्री महेन्द्र भाई मेहता तथा पुत्र श्री जय मेहता के साथ उपस्थित थीं। श्री शाह के पुत्र द्वय सुधीर भाई एवं श्री संजय शाह भी अपनी धर्म पत्नी श्रीमती पंकजा बेन एवं श्रीमती कुन्ती बेन के साथ उपस्थित थे। थोड़े समय के लिए आपलोगों के पुत्र, पुत्री एवं पुत्रवधुओं ने भी इस अवसर पर श्रीमद्भागवत का रसास्वादन किया। कहना न होगा कि श्री शाह का परिवार काफी समय के बाद यहाँ एकत्रित हुआ था तथा ये सभी बम्बई के अत्याधुनिक परिवेश के निवासी हैं, परन्तु यह तो श्री श्री माँ की अहैतुकी कृपा है कि अत्याधुनिक भौतिक विषय सुख में पलने वालों को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं।

कथा-व्यास ब्रह्मचारीजी की व्याख्यान शैली अत्यन्त गम्भीर, प्रौढ़ एवं सुगम व रसमय थी। तभी तो यह अत्याधुनिक परिवार के युवक युवतियाँ मंत्र मुग्ध हो पूरे समय तक भाव सहित रसमयी कथा का रसास्वादन करते थे।

श्री कृष्ण जन्म की कथा के दिन वृन्दावन की परम्परा में बधाई मनायी गयी . वृन्दावन से आये ब्रह्मचारी जी के साथियों ने भजन प्रस्तुत किये, आनन्दमय वातावरण हो गया ता। महन्त श्री गिरधर नारायण पुरी जी, अखण्ड धाम के महामण्डलेश्वर जी भी इस अवसर पर उपस्थित थे। धूम कीर्तन हुआ। सभी को प्रसाद बाँटा गया। इस अवसर पर छप्पन भोग की व्यवस्था की गयी थी। रुमाल सहित नयी प्रकाशित पुस्तक "आनन्दज्योति पीठ संकीर्तनम्" सबको इस कथा के चिन्ह स्वरूप दी गयी। सम्पूर्ण व्यवस्था आश्रम प्रव्राजिका पूर्णानन्दजी की थी। कथा समाप्ति के दिनों में श्रोताओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई। इस अवसर पर आश्रम के वरिष्ठ संत महात्मागण श्री विरजानन्दजी, श्री भास्करानन्दजी, ब्र. निर्वाणानन्दजी, एवं संघ के मुख्य सचिव स्वामी स्वरूपानन्दजी उपस्थित थे।

२४ जुलाई को सन्ध्या समय सप्ताहव्यापी कथा की परिसमाप्ति हुई। २५ जुलाई प्रातः हवन आदि हुए। तत्पश्चात् सबने प्रसाद पाया। कथा के आनन्द से सम्पूर्ण वातावरण आनन्दमय हो गया था।

२८ जुलाई को गुरुपूर्णिमा थी । अतः बाहर से आये हुए भक्तगण वहीं रुक गये । गुरूपूर्णिमा को भक्तों की काफी भीड़ हुई थी । अनेको ने दीक्षा भी ग्रहण की । ब्र. निर्वाणानन्द जी इस अवसर पर कलकत्ते में थे ।

२२ अगस्त श्रावण शुक्ला एकादशी को ठाकुरजी को झूलों पर विराजित किया गया । २३ अगस्त द्वादशी को पू. भाईजी का तिरोधान उत्सव पालन किया गया, इस अवसर पर साधुभण्डारा इत्यादि हुए । २६ अगस्त श्रावण पूर्णिमा के अवसर पर श्री श्री माँ की विशेष पूजा एवं मध्य रात्रि पौने बारह से सवा बारह तक ध्यान हुआ । २ सितम्बर को जन्माष्टमी की विशेष पूजा हुई ।

२. वाराणसी–२८ जुलाई को गुरुपूर्णिमा की विशेष पूजा गिरिजी के मंदिर व आनन्दज्योति-मंदिर में विधिवत् सम्पन्न हुई । इस अवसर पर भक्तों ने प्रसाद ग्रहण किया । १८ अगस्त श्रावण शुक्ला सप्तमी को गिरिजी के तिरोधान के उपलक्ष में आश्रम में विशेष पूजा व साधु भण्डारा आयोजित किया गया ।

२२ अगस्त श्रावण शुक्ला एकादशी से झूलनोत्सव प्रारम्भ हुआ । प्रतिदिन संध्याकाल में आनन्द ज्योतिमन्दिर में विराजित गोपालजी की पूजा होती थी तथा कीर्तन के धुन के साथ झूले पर गोपाल जी को झुलाया जाता था । २६ अगरस्त पूर्णिमा के दिन संध्योपरान्त गोपालजी की विशेष षोडशोपचार पूजन हुआ । रात्रि में महानिशा का ध्यान सम्पन्न हुआ ।

२ सितम्बर की मध्य रात्रि को श्री गोपालजी का पंचामृत अभिषेक, षोडशोपचार पूजन हुआ । ३ सितम्बर श्री गोपालजी के सामने दही की मटकी फोड़ कर नन्दोत्सव मनाया गया । ठाकुर जी के विशेष भोग की व्यवस्था की गयी थी । भक्तों ने प्रसाद पाया ।

५ सितम्बर को माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की ओर से संस्कृत दिवस अनुष्ठित हुआ । इस अवसर पर जगत् गुरु रामानन्दाचार्य अनन्त श्री विभूषित स्वामी श्री रामनेरशाचार्यजी मुख्यातिथि के रूप में आमन्त्रित किये गये थे । काशी हिन्दूविश्वविद्यालय के पूर्व संस्कृत विभागाध्यक्ष डा. विश्वनाथ भट्टाचार्यजी सभापति के रूप में उपस्थित थे । काशी के गण्यमान्य पंडितजन भी उपस्थित थे । कन्याओं द्वारा संस्कृत में किये गये विविध कार्यक्रम सराहनीय थे । विशेषतः श्रीमद्भागवत के नंदनंदन की कतिपय बाललीलाओं को श्लोकों की आवृत्ति सहित छोटी-छोटी कन्याओं द्वारा हाव भाव को दर्शाने वाला कार्यक्रम विशेष प्रशंसनीय रहा ।

विगत ८ सितंबर को काशी के गौरव महामहोपाध्य पदमविभूषण डॉ. गोपीनाथ कविराज जी का ११३ वाँ शुभ जन्मदिवस सुचारु रूप से सुसम्पन्न हुआ । इस अवसर पर काशी के गण्यमान्य पंडितगण उपस्थित थे ।

सम्पूर्णानन्द संस्कृतविश्वविद्यालय के माननीय कुलपति डॉ. राममूर्ति शर्मा इस सभा में सभापति के रूप में उपस्थित थे । मुख्य अतिथि कलकत्ता व कल्याणी विश्वविद्यालय के पूर्वकुलपति श्री सुशीलकुमार मुखर्जी थे । विशिष्ट अतिथि थे सम्पूर्णानन्द संस्कृतविश्वविद्यालय तथा दरभंगा

विश्वविद्यालय के पूर्वकुलपति डॉ रामकरण शर्मा जी । सम्मानित अतिथि के रूप में जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्री रामनरेशाचार्य जी का आगमन हुआ था ।

कन्यापीठ की कन्याओं द्वारा शंखध्वनि तथा वेदघोष के साथ ही कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ । तदनन्तर श्रद्धेय कविराज जी के चित्र पर माननीय अतिथियों के द्वारा माल्यार्पण किया गया । डॉ. कु. प्रणति घोषाल ने उद्बोधन संगीत की प्रस्तुति की । उद्घाटन भाषण डॉ. विश्वनाथ भट्टाचार्य जी ने किया ।

श्रद्धेय कविराज जी के चरणों में श्रद्धा-सुमन अर्पित करने वाले डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी, डॉ. सुधांशुशेखर शास्त्री, डॉ. रेवतीरमण पांडेय, सुश्री वेटिनाजी, पंडितप्रवर विश्वनाथ भट्टाचार्य, पं. हेमन्द्रनाथ चक्रवर्ती, डॉ. कमलेश झा, ब्र. गीता बैनर्जी इत्यादि विद्वज्जन थे । श्रद्धेय श्री जगदीश्वर पाल महोदय ने धन्यवाद ज्ञापन किया । समापन संगीत के साथ सभा की समाप्ति हुई ।

गत १६ सितंबर से २३ सितंबर तक श्रीमद्भागवत सप्ताह का आयोजन हुआ । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृतविद्या धर्मविज्ञान संकाय, धर्मागम विभाग के अध्यक्ष डॉ. कमलेश झा जी ने सुललित भाषा में श्रीमद्भागवत की व्याख्या की ।

श्रद्धेया गुरुप्रियादीदी की तिरोधानतिथि पर १७ सितंबर को श्रीगुरुप्रिया दीदी की षोडशोपचार पूजा तथा साधुभंडारा सुसम्पन्न हुआ । भाद्र शुक्ला नवमी १८ सितंबर को श्री श्री माँ का विशेष ध्यान हुआ ।

३. पूना—सुंदर, सुहानी जलवायु के लिए विशेष विख्यात पूना शहर में स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में इस बार ग्रीष्मावकाश में कन्यापीठ की कन्यायें गर्मी की छुट्टी मनाने गईं । कन्याओं के आगमन से निर्जन आश्रम मुखरित हो उठा, आश्रम के नव निर्मित शिव मंदिर में कन्याओं द्वारा प्रतिदिन शिव पूजा, आरती, स्तवपाठ, तथा राधाकृष्ण मंदिर में वेदपाठ को सुनकर मातृभक्तगण आनन्दित हुए सत्संग के समय अनेक भक्तों की उपस्थिति होती थी ।

विगत २८ जुलाई को मोर्वी राजपरिवार की ओर से गुरुपूर्णिमा महोत्सव अनुष्ठित हुआ । इस उपलक्ष में प्रातः श्री गुरुपूजा, भजन, कीर्त्तन तथा अपराह्न में प्रसाद वितरण किया गया ।

४. दिल्ली—दिल्ली में कालकाजी स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में २८ जुलाई को गुरुपूर्णिमा के दिन प्रातः काल श्री गुरुपूजा, पुष्पांजलि तथा भक्तिमूलक संगीत प्रस्तुत किये गए । भोग-आरती के पश्चात मध्याह्न में प्रसाद वितरण कियां गया । दिल्ली आश्रम में प्रत्येक महीने के द्वितीय बृहस्पतिवार को मातृचालीसा तथा अंतिम शनिवार को हनूमान चालीसा होता है ।

५. राजगीर—भगवान बुद्ध के प्रिय नगर राजगीर स्थित माँ के आश्रम में गुरुपूर्णिमा का महनीय महोत्सव अत्यन्त उल्लास से मनाया गया । विशेष आनन्द का विषय है कि विगत श्री श्री माँ के जन्म शताब्दी के बाद आज तक अविच्छिन्न रूप से राजगीर की जनता के कल्याण के लिए "निःशुल्क स्वास्थ्य सेवा" संचालित होती आ रही है । नालन्दा मेडिकल कालेज की डॉ. श्रीमती

कृष्णा सिन्हा निःशुल्क सेवा करती आ रही हैं । आश्रम की इस निःशुल्क सेवा से अनेक रोगियों को आरोग्य लाभ हुआ । औषधियाँ भी कुछ दान में प्राप्त होती हैं एवं अवशिष्ट दवाइयाँ आश्रम द्वारा क्रय की जाती हैं । शीतकाल में गरीब बच्चों को वस्त्रादि दान किया जाता है । इस सेवाकार्य मं प्रतिवर्ष ११ हजार रु. व्यय होता है ।

६. रांची—रांची में अति प्राचीन तांत्रिक साधना की पीठस्थली में अवस्थित श्री श्री माँ के आश्रम में गुरुपूर्णिमा की पुण्यमयी बेला में षोडशोपचार से श्री गुरुपूजा संपन्न हुई ।

गत १२ अगस्त से १९ अगस्त तक श्रीमद्भागवत व्याख्या का आयोजन किया गया । भागवत रसिक नवव्रत ब्रह्मचारी ने सुललित भाषा में भागवत की व्याख्या की । इस अवसर पर अनेक भक्तों का समागम हुआ ।

आगामी १५ अक्टूबर से २० अक्टूबर तक राँची आश्रम में श्री शारदीया दुर्गापूजा अनुष्ठित होगी । २४ नवंबर को श्री लक्ष्मीपूजा तथा ७ नवंबर को काली पूजा होगी ।

७. वृन्दावन—रास रासेश्वर भगवान श्यामसुन्दर का प्रियधाम वृन्दावन में माँ के आश्रम में गत १४ अगस्त से २६ अगस्त तक श्री श्री राधाकृष्ण छलिया जी का झूलन उत्सव एवं २ सितंबर को श्री श्रीकृष्ण जन्माष्टमी महोत्सव आयोजित हुआ । इस अवसर पर १४ अगस्त से २६ अगस्त तक रासलीला हुई । २२ अगस्त से २६ अगस्त तक झूलनोत्सव के उपलक्ष में श्री राधाकृष्ण छलिया जी की विशेष पूजा हुई । २३ अगस्त को भाईजी की तिरोधानतिथि पूजा, २५ व २६ अगस्त को अधिवास सहित नामयज्ञ संकीर्त्तन २६ अगस्त को प्रातःकाल विष्णुसहस्रनाम पाठ, भजन, कीर्त्तन तथा श्री राधाकृष्ण तथा श्री श्री माँ की षोडशोपचार पूजा हुई । २७ अगस्त को साधुभंडारा, २ सितंबर को श्री जन्माष्टमी पूजा तथा १८ सितंबर को राधाष्टमी में विशेष पूजा हुई ।

८. अल्मोड़ा—हिम किरीट के शुभ्र शिखरों से आवृत प्राकृतिक सुषुमाओं से मण्डित अल्मोड़ा नगर में स्थित श्री श्री माँ के आश्रम में श्री भाईजी की पुण्यतिथि सोल्लास अनुष्ठित हुई । इसी उपलक्ष में २२ अगस्त को भाईजी की समाधि पर रुद्राभिषेक, कुष्ठ रोगियों की सेवा एवं सायंकाल भाई जी व मातृ प्रसंग पर चर्चा हुई । दूसरे दिन २३ अगस्त शिवार्चना, मातृपूजा तथा हवन यज्ञ अनुष्ठित हुआ । समवेत स्वर में सुन्दरकाण्ड का पाठ तथा मध्याह्न काल में प्रसाद वितरण किया गया ।

अल्मोड़ा के प्राकृतिक सौन्दर्य से सुसज्जित माँ के आश्रम में आकर मातृ भक्तगण स्वर्गीय आनन्द का अनुभव करते हैं ।

श्रद्धाञ्जलि

(१) श्री श्री सिद्धेश्वर महाराज–

पश्चिम बंगाल के पवित्र तीर्थस्थल आद्यापीठ के अध्यक्ष पूज्य श्री सिद्धेश्वर महाराज जी दिनांक १४ जुलाई १९९९ को आद्यापीठ स्थित आश्रम में दिवंगत हुए ।

पू. महाराज जी आदर्श ब्रह्मचर्य का निदर्शन थे । कर्मठता में आपकी तुलना नहीं थी । इतनी बड़ी संस्था का संचालन आप अपने वर्चस्व से करते थे । ध्यान देने की बात तो यह है कि आप में अस्मिता का नामों निशान तक नहीं था । सहज, सरल सदा प्रसन्न बालक जैसा स्वभाव था आपका । आप के निधन से एक महान व्यक्ति हमारे बीच से उठ गया, जो साधक परंपरा की अपूरणीय क्षति है ।

श्रद्धेय महाराज जी की श्री श्री माँ के प्रति असीम श्रद्धा थी । भक्तजनों के साथ कई बार आपने श्री श्री माँ के नैमिषारण्य स्थित आश्रम में एकान्त वास किया । नैमिषारण्य का पवित्र वातावरण आपका अत्यन्त प्रिय था । वाराणसी आश्रम में भी आप कई बार पधारे ।

आज आपके अवर्तमान से हमने अपने एक विशिष्ट शुभचिन्तक को खो दिया । आज इन्हीं शब्दों के साथ हम श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं ।

(२) श्री श्री मोहनानन्द ब्रह्मचारीजी–

वर्तमान भारत के प्रसिद्ध महात्मा शत शत भक्तजनों के शरणस्थल, निराश्रयों के आश्रय ब्रह्मचारी श्री मोहनानन्द जी महाराज अपने अमेरिका प्रवास के दौरान दिनांक २९ अगस्त, १९९९ को ब्रह्मलीन हुए । आपके ब्रह्मलीन होने का समाचार चारों ओर आग की भाँति फैल गया । भक्तगण 'बाबा' 'बाबा' का करुण आर्तनाद करने लगे । पू. महाराज श्री ने अपने पार्थिव शरीर को भारत ले आने को मना कर दिया था उन्होंने कहा था कि "तुमलोग सँभाल नहीं सकोगे", और वास्तव में यह सत्य है । पू. ब्रह्मचारीजी के दर्शनों को सर्वदा हजारों की संख्या में लोग उमड़ पड़ते थे । इस समय तो उनके पार्थिव शरीर का अंतिम दर्शन करने जनता टूट पड़ती और उनके सेवकों के लिए परिस्थिति संभालना कष्टकर हो उठता । अतः करुणामय गुरु महाराज का यही निर्देश था ।

श्री श्री माँ के साथ ब्रह्मचारी जी महाराज का विशेष आत्मीयता पूर्ण सम्बन्ध सर्वविदित है । किशोरावस्था में ही अपने गुरु महाराज श्री श्री बालानन्द ब्रह्मचारी जी के सन्निध्य में माँ का सान्निध्य प्राप्त किया था जिसका अलग ही एक इतिहास है ।

आज इन्हीं शब्दों के साथ हम पू. महाराज श्री को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं साथ ही ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि इस व्याकुलता की घड़ी में वे भक्तजनों को सान्त्वना प्रदान करें ।

●

शोक-संवाद

(१) श्री सत्य ब्रह्मचारी–

विगत २४ जून को श्री श्री माँ के पूना आश्रम में प्रातः एकादशी की पुण्य तिथि पर पूना आश्रम के अति पुरातन पुजारी श्री सत्य ब्रह्मचारी जी का देहावसान हो गया। आप अनेक वर्षों से पूना आश्रम के मंदिर में सेवारत थे। इससे पूर्व आप देहरादून के कल्याण वन के मंदिर में सेवारत थे। इधर कुछ वर्षो से आप वृद्धावस्था के कारण अस्वस्थ थे। चिकित्सा के लिए आप वाराणसी में श्री श्री माँ के अस्पताल में अनेक दिन तक थे। पुनः आप पूना आश्रम में वापस लौट गये।

हम श्री श्री माँ के पावन चरणों में उनकी उज्ज्वल आत्मा की शान्ति की प्रार्थना करते हैं।

(२) श्री अजित कुमार विश्वासः–

श्री श्री माँ के पुरातन भक्त कृष्णनगरवासी श्री अजित कुमार विश्वास २५ जून को श्री श्री माँ के चरण-कमलों में लीन हुए। कनखल तथा काशी की गिरिजी (दीदीमाँ) की मूर्त्तियों का निर्माण आपके द्वारा ही हुआ। गिरिजी की मूर्तियों के निर्माण के समय श्री श्री माँ स्वयं कृष्णनगर में आपके गृहप्रांगण में पधारीं थीं। श्री श्री माँ के चरण चिन्होंसे चिह्नित उस पवित्र स्थल पर आप ने एक मंदिर की स्थापना की थी।

श्री श्री माँ के दिव्य चरणों में उनकी आत्मा की चिरशान्ति की प्रार्थना तथा परिवार वर्गों के लिए सान्त्वना की कामना करते हैं।

(३) कुमारी सावित्री मित्र–

गत १ जुलाई को आश्रम में क्षमादीदी के नाम से परिचित कुमारी सावित्री मित्र का देहावसान प्रायः अस्सी वर्ष की उम्र में वाराणसी के हनुमान घाट स्थित निवास पर हुआ।

क्षमादीदी का जीवन परोपकार के लिए ही था। आपका जन्म बीस के दशक में बंगाल के एक सम्भ्रात परिवार में हुआ था। आपके पिताश्री गिरीन्द्र कृष्ण मित्र एक जाने माने डाक्टर थे। प्रथम विश्वयुद्ध में आप कई वर्षों तक बाहर सेवा में रहे। आप नेताजी सुभाष चन्द्र बसु के भी मित्र थे।

क्षमा दीदी नें बहुत ही कम उम्र में श्री श्री माँ के दर्शन किये। माँ आपके ही घर पर पधारी थीं। माँ के अद्भुत आकर्षण ने आपके किशोर मन को प्रभावित कर लिया था। ऊपर से भावुकता आपके स्वभाव में न थी। भीतर स्वभावतः दृढ़ता की ऐसी लौह श्रृंखला थी जो तोड़ने पर भी न टूटे। पिता माता आपको चिकित्सा के क्षेत्र में भेजना चाहते थे, आप एक ही पुत्री तथा चार भाई थे। आप ही बड़ी थीं। पर आपने अपने भीतर दृढ़ निश्चय कर लिया था श्री श्री माँ के संग रहने का। धीरे-धीरे माँ के पास आना जाना प्रारम्भ हुआ।

१९३८ में माँ आनन्दमयी कन्यापीठ की प्रतिष्ठा हुई । धीरे-धीरे कन्यायें आने लगीं इसी समय ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया दीदी के कन्याश्रम की सेवा में हाँथ बँटाने या यों कहाजाय कि सेवा में अपना जीवन न्योछावर करने सावित्री मित्र आश्रम में आ गयीं ।

प्रारम्भ हुआ आपका सेवा का जीवन इस समय से १९६२ पर्यन्त आपने कन्यापीठ की अक्लान्त सेवा का जो दृष्टान्त स्थापित किया वह भुलाये नहीं भुलाया ज़ा सकता । आज हम कन्यापीठ का जो भी स्वरूप देखते हैं उसकी नींव में है क्षमादीदी का अक्लान्त परिश्रम तथा इलाहाबाद के जिला न्यायाधीश श्री नीरज नाथ मुखर्जी की सुपुत्री श्रीमती रेणुका मुखर्जी का वात्सल्य स्नेह ।

एक बार भी आपकी सेवा का स्पर्श जिसे प्राप्त हुआ वह जीवन भर उसे भूल नहीं सकता । यह श्री श्री माँ का ही ख्याल था कि आपके द्वारा अक्लान्त सेवा कराकर कन्यापीठ को अपने पैरों पर खड़ा कराया ।

१९६२ के बाद आप श्री श्री माँ के ही निर्देश से श्री वृन्दावन आश्रम में रहकर वृन्दावन चन्द्र बिहारीलालजी की साधना में संलग्न हुईं और यह साधना, और सेवा उनके आखिरी दम तक चली । वे प्रतिदिन आठ बार ठाकुर जी को भोग लगाती थीं । बिहारीलाल जी का चित्र ही उनके लिये सर्वस्व था ।

पिता-माता के वाराणसी आने पर वे श्री श्री माँ के ही निर्देश से वाराणसी आयीं । आपके माता-पिता किराये के मकान में रहते थे वहीं पर आपने माता-पिता की अन्तिम क्षण तक एकनिष्ठ सेवा की । तत्पश्चात् आपकी माताजी की परिचित लतिका देवी नामक एक विधवा महिला थीं । उनकी सेवा आपने पूर्ण निष्ठा के साथ निभायी । आपकी अवस्था भी ढल चुकी थी । बिहार के बेतिया जिले में आपके भ्रातागणों की विशाल जमींदारी है जो आपके पिता की बदौलत है । भाइयों ने आपको वहाँ रहने को बुलाया आपने ठुकरा दिया । भाई आपको पूरा खर्च देना चाहते थे, आपने किसी का आश्रित होकर रहना ठीक न समझा, अपनी सारी सम्पत्ति भइयों को लिख दी । आप महावीर जी की अत्यन्त भक्त थीं । आर्थिक दृष्टि से आप स्वतन्त्र थीं । कोई आडम्बर नहीं था ।

आपका प्रतिदिन का कर्तव्य था महावीर जी के मंदिर में जाना तथा आस पास जितने असहाय अशक्त आर्थिक दृष्टि से दुर्बल परिवार थे उनके लिये सेवा । किसी का राशन कार्ड बनवाना, किसी को तेल ला देना, किसी को आर्थिक सहायता पहुँचाना, किसी का बैंक में खाता खोल देना इत्यादि ।

अतः जब उनका अंत समय आया यद्यपि वह उस समय अकेली ही थीं पर आस-पड़ोस ने पूरी सहायता की । आश्रम में सूचना दी । मकान मालिको ने भाई बन्धु जैसा सभी क्रिया कर्म किया । आप पहले ही मकान वालों को निर्देश दे चुकी थीं । आप ३५ वर्ष इसी मकान में थीं । उनकी अंतिम यात्रा के समय वहाँ उपस्थित आश्रम की कुमारी सतीदत्तगुप्त ने हमें आँखों देखा हाल सुनाते हुये कहा "सभी व्यक्ति आ-आकर उन्हें कुछ चढ़ाते जा रहे थे । कोई माला ले आया । कोई रामनामी और सभी उनकी अंतिम यात्रा में साथ हो रहे थे, सभी की आँखें जल भरी थीं । मानों वे

अपने किसी प्रियजन को विदा दे रहे हों । मोहल्ला सूना हो गया था । सबका कहना था "वह तो हमारी माँ थीं ।"

आज उनके परलोक गमन पर श्री श्री माँ के चरणों में आपकी अमर आत्मा को श्री चरणों में नित्यशरण देने की प्रार्थना करते हैं ।

(४) राजमाता कमलेन्दुमती शाह–

श्री श्री आनन्दमयी संघ की प्रथम अध्यक्षा टिहरी गढ़वाल की राजमाता कमलेन्दुमती शाह का निधन गत १५ जुलाई को देहरादून स्थित अपने भवन में हुआ । आप ९६ वर्ष की थीं ।

तीस के दशक में बघाट नरेश श्री दुर्गासिंह जी "योगी भाई" के माध्यम से आपको माँ का दर्शन प्राप्त हुआ । आप योगी भाई की रिश्ते में बहन लगती थीं । आप अपने पति टिहरी महाराज नरेन्द्रशाह की अकाल मृत्यु से अत्यन्त दुखित थीं । योगीभाई को श्री श्री माँ के दर्शन हो चुके थे । आपने शोकदु:खशमन का अन्यतम स्थान श्री श्री माँ के त्रितापहरण चरणों में अपनी सद्यविधवा बहन को उपस्थित किया ।

श्री श्री माँ को देखते ही आपको अवलम्बन प्राप्त हुआ । माँ से आपका अविच्छिन्न सम्बन्ध जुड़ा । श्री श्री माँ ने आपका नामकरण किया "आनन्दप्रिया" । आप अत्यन्त कर्मठ, साध्वी एवं विदुषी महिला थीं । ऋषीकेश से २० कि. ऊपर गंगा किनारे एक स्थान पर जहाँ टिहरी राजपरिवार का महल था, वहीं आपने श्री श्री माँ के निमित्त एक मकान का निर्माण किया था । गंगा तट पर यह अत्यन्त रमणीय एवं एकान्त स्थान था । श्री श्री मां के वहाँ पधारने के बाद ही उस स्थान का नामकरण हुआ "आनन्दकाशी" । श्री श्री माँ यहाँ अनेक बार पधारी थीं । यहीं पर श्री श्री माँ ने सूक्ष्म में आपके पूर्वजों को देखा था । श्री श्री माँ के ही निर्देश से यहां एक सुरम्य शिव मंदिर की प्रतिष्ठा आपने माँ की ही पवित्र उपस्थिति में करवायी थी ।

श्री श्री आनन्दमयी संघ को एक संगठन का रूप देने में आपकी प्रमुख भूमिका थी । आपके अनुदान से सर्वप्रथम रोगरूपी जनार्दन की सेवा के लिये काशी में 'आनन्दमयी करुणा' संस्था की स्थापना हुई । माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के लिए "माँ आनन्दमयी शिल्पप्रतिष्ठान" का सूत्रपात भी आपके ही द्वारा किया गया । सन् १९५० की जनवरी में श्री श्री आनन्दमयी संघ की स्थापना हुई और आप संघ की प्रथम अध्यक्षा थीं ।

राजमाता आनन्दप्रियाजी का व्यक्तित्व आदर्शमय था । आप योगाभ्यास में निपुण थीं । श्री श्री माँ ने आश्रम की ब्रह्मचारिणियों को आप से ही योगासन सिखाये थे ।

आप नारी समाज के लिए आदर्श थीं । गढ़वाल क्षेत्र में आपके सेवाकार्य अमर हैं । विशेषत: महिलाओं के शिक्षा व विकास के लिए आपने अनेक संस्थाओं की स्थापना की । विशेषत: देहरादून स्थित महाराजा नरेन्द्रशाह ट्रस्ट का निर्माण इसी समाज सेवा के लिए ही किया गया था ।

गत वर्ष संयम सप्ताह के उपरान्त देहरादून में आपके निवास स्थान पर आपसे मिलने हम गये थे । आप एक कुर्सी पर विराजी थीं । आप से हम कुछ पुराने संस्मरण सुनने की इच्छा से गये थे ।

आपने कहा "मैं तो सब भूल गयी हूँ ।" माँ के बारे में उन्होंने झट से कहा, "वे तो भगवान् थीं ।" बार-बार वे हमें एक दोहा सुनाती रहीं जिसके शब्द यह थे, "न कोई मेरा न कोई तेरा, उड़ जात पंछी होत सबेरा । यह दुनियाँ है रैन बसेरा ।"

नित्य धाम को जाने की प्रतीक्षा में वे निरासक्त जीवन व्यतीत कर रही थीं । यही शब्द उनके ओठों पर सदा रहते थे । अपने निश्चित समय पर वे गोलोकवासी हुईं ।

उनकी महान् आत्मा के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं ।

(५) डॉ. नीरजनाथ दासगुप्त –

श्री श्री माँ के अतिपुरातन भक्त श्री गंगाचरण दासगुप्त के ज्येष्ठ पुत्र डॉ. नीरजनाथ दासगुप्त का विगत १५ अगस्त को कलकत्ता के हाजरा रोड पर अवस्थित उनके पैतृक भवन में स्वर्गवास हुआ । उस समय उनकी अवस्था ९० वर्ष की थी । इनके सहोदर भाई स्वर्गीय श्री गोपाल दासगुप्त थे । इनकी मृत्यु कुछ वर्ष पूर्व हुई । इस परिवार के ऊपर श्री श्री माँ की विशेष अनुकम्पा थी । पचास के दशक में कलकत्ता में मातृ भक्तों का विशेष सत्संग बृहस्पतिवार की 'मौन मिलनी' का शुभारंभ इनके सहयोग से इन्हीं के मकान में हुआ था ।

अध्यापक नीरजनाथ दासगुप्त कलकत्ता विश्वविद्यालय के पदार्थ विज्ञान विभाग के प्रधान के रूप में दीर्घ समय तक कार्यरत थे । जीव पदार्थ विद्या की गवेषणा एवं शिक्षा में आपकी मुख्य भूमिका थी । आप डॉ. मेघनाद शाह के प्रिय छात्र थे । आप को देश तथा विदेशों के अनेक सम्मान प्राप्त हुए थे । श्री श्री माँ के एक महान भक्त से हम वंचित हुए ।

श्री श्री माँ के चरणों में उनकी पवित्र आत्मा की चिरशान्ति तथा परिवार जनों को सान्त्वना की प्रार्थना करते हैं ।

●

प्रकाशन सूची

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रकाशित श्री श्री माँ से सम्बन्धित कुछ अमूल्य प्रकाशन संघ के प्रायः सभी शाखा आश्रमों में विक्रय के लिए उपलब्ध हैं ।

1. PICTORIAL BIOGRAPHY OF MA ANANDAMAYEE—

श्री श्री माँ की सम्पूर्ण जीवन गाथा शब्दों तथा चित्रों में अंकित, यह एक निराला ग्रन्थ है । उत्तम कागज पर छपा एवं बहुसंख्यक आर्ट प्लेट्स से युक्त । सजिल्द, मूल्य, ४५०/-

2. आनन्दज्योति (शताब्दी स्मारिका)

यह एक उच्च कोटि का संस्करण है, जिसमें विभिन्न भाषाओं–संस्कृत, हिन्दी तथा अंग्रेजी में श्री श्री माँ की पवित्र जीवनानुक्रमणिका (१८९६ से १९९२), १०० अमूल्य वाणियों एवं श्री श्री माँ के विभिन्न आश्रम एवं संस्थाओं का इतिहास, साथ ही स्वनामधन्य विद्वानों के लेख, विशेष संदेश एवं श्रद्धाञ्जलि सहित श्री श्री माँ के कतिपय मूल्यवान् चित्रों का संकलन है । अति उत्तम कागज पर छपा है । पेपर बैक, मूल्य रु. १००/-

3. माँ आनन्दमयी दिव्यालोक वार्ता–

हिन्दी भाषा में ब्र. गुणीता द्वारा लिखित माँ की जीवन-कथा का संक्षिप्त चित्रण तथा शतवाणी । पेपर बैक, मूल्य १०/-

4. सद्वाणी–

हिन्दी में अनूदित श्री श्री माँ की मूल्यवान वाणियों का संग्रह । श्री ज्योतिषचन्द्र राय द्वारा संकलित । पेपर बैक, मूल्य रु. १०/-

5. माँ आनन्दमयी–

डॉ. पन्नालाल, आई. सी. एस. (रिटायर्ड) द्वारा हिन्दी में लिखित माँ का अपूर्व जीवन चरित । पेपर बैक, मूल्य रु. २०/-

6. IN YOUR HEART IS MY ABODE—

डॉ. बीथिका मुखर्जी द्वारा अंग्रेजी में लिखित श्री श्री माँ का संक्षिप्त जीवन चित्र । पेपर बैक, मूल्य २०/-

7. MATRI VANI—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. १५/-

8. WORDS OF ANANDAMAYEE MA—

श्री श्री माँ की अमूल्य वाणियों का संग्रह । आत्मानन्द (मिस ब्लैंका श्लाम) द्वारा संकलित एवं अंग्रेजी में अनूदित । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

9. MOTHER AS SEEN BY HER DEVOTEES—

श्री श्री माँ के सम्बन्ध में स्वनामधन्य विद्वानों तथा माँ के विशिष्ट भक्तों द्वारा लिखित मूल्यवान् निबन्धों का संग्रह । पेपर बैक, मूल्य रु. ३०/-

मातृ श्री चरण-कमलों में
कोटि कोटि साष्टांग प्रणाम

—M.P. Murarka
BOMBAY

❄ Branch Ashrams ❄

15. NEW DELHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kalkaji, New Delhi-110019 (Tel : 6840365)

16. PUNE : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Ganesh Khind Road, Pune-411007, (Tel : 327835)

17. PURI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Swargadwar, Puri-752001, Orissa.

18. RAJGIR : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Rajgir, Nalanda-803116, Bihar (Tel : 5362)

19. RANCHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Main Road, P.O. Ranchi-834001, Bihar (Tel : 312082)

20. TARAPEETH : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Chandipur-Tarapeeth,
Birbhum-731233, W.B.

21. UTTARKASHI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Kali Mandir, P.O. Uttarkashi-249193, U.P.

22. VARANASI : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
Bhadaini, Varanasi-221001, U.P.
(Tel : 310054+311794)

23. VINDHYACHAL: Shree Shree Ma Anandamayee Ashram, Ashtabhuja Hill,
P.O. Vindhyachal, Mirzapur-231307 (Tel: 05442–64343)

24. VRINDAVAN : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Vrindavan, Mathura-281121 U.P. (Tel : 442024)

IN BANGLADESH :

1. DHAKA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
14, Siddheshwari Lane, Dhaka-17 (Tel : 405266)

2. KHEORA : Shree Shree Ma Anandamayee Ashram,
P.O. Kheora, Via-Kasba, Brahmanbaria.